"सा विद्या या विमुक्तये" 16 | राज्यपाल का पवित्र दायित्व 38 | इतराने लगीं सरयू की लहरें 41

1-15 अगस्त 2020 ₹40

ISSN 2350-0409

वाद ~ विवाद ~ संवाद

यथावत

www.yathavat.com

परिवार में कांग्रेस

सबकी साझी ज़िम्मेदारी
अनलॉक होगी ज़िन्दगी हमारी

सरकारी व गैर-सरकारी कार्यालय/ व्यावसायिक प्रतिष्ठान/ सार्वजनिक स्थलों के प्रवेश द्वार पर इन्फ्रारेड थर्मोमीटर से तापमान लेते समय ध्यान दें

- इन्फ्रारेड थर्मोमीटर माथे के बीच में हो।
- इन्फ्रारेड थर्मोमीटर व्यक्ति की त्वचा को स्पर्श न करे।
- थर्मोमीटर को लगभग 3 सेमी. की दूरी पर सीधे रखकर तापमान लें।
- तेज़ धूप या बहुत ठण्डी जगह पर तापमान न जाँचें।

तुरंत करें चिकित्सक से संपर्क

- खांसी, जुकाम, बुखार व सांस लेने में तकलीफ होने पर।
- विभिन्न संस्थानों में इन्फ्रारेड थर्मोमीटर से स्क्रीनिंग के समय 97.6°F से अधिक आने पर।

दो गज़ की दूरी, मास्क है ज़रूरी

बार-बार साबुन और पानी से हाथ धोएं।

घर से निकलने पर मुंह और नाक को मास्क या कपड़े से ढकें।

किसी भी व्यक्ति से 2 गज़ की दूरी बनाए रखें।

कोरोना संबंधी जानकारी हेतु संपर्क करें

चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, उ0प्र0
1800-180-5145

अन्य जानकारी के लिए संपर्क करें
0522-2230006, 0522-2230009
0522-2616482

डिग्रीधारी नहीं, ज्ञानवान बनाने की पहल

शिक्षा वही उत्तम होती है, जो समय की मांग के अनुसार हो। इस अर्थ में देखें तो दुनिया नित नए ज्ञान से युक्त हो रही है। साथ ही यह भी लक्ष्य में रखने की आवश्यकता है कि नित नए की लालच में हम अंधानुकरण में अपने परिवेश और जीवन के संदर्भ भूल न जाएं। दुर्भाग्य से ऐसा होता रहा है। यही कारण है कि शिक्षा भी मानव संसाधन होकर रह गयी थी। सच यह है कि शिक्षा के माध्यम से जीवन में संस्कार और संसाधन, दोनों प्राप्त होते हैं परन्तु इस प्रक्रिया में शिक्षा प्रथम है। नई शिक्षा नीति का केंद्र बिंदु यही है। इसीलिए देश भर में शिक्षा का ध्यान रखने वाले मंत्रालय को अब शिक्षा मंत्रालय ही कहा जायेगा, मानव संसाधन विकास मंत्रालय नहीं। केंद्रीय मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक की ओर से दी गई एक सामान्य सी जानकारी भी शिक्षा नीति के बारे में मंथन की गंभीरता को प्रकट करती है। उन्होंने कहा कि इसको तय करने में दुनिया की सबसे बड़ी प्रक्रिया अपनायी गयी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के लिए जो परामर्श प्रक्रिया चलाई गयी, वह 26 जनवरी 2019 से प्रारम्भ होकर 31 अक्टूबर 2019 तक चली थी।

अब जुलाई के अंत में हमारे देश की शिक्षा नीति का जो प्रारूप रखा गया है, उसमें नित परिवर्तनशील दुनिया और राष्ट्रीय आवश्यकता, दोनों का समावेश है। यानी बदलती दुनिया के मुताबिक नई पीढ़ी के निर्माण पर जोर दिया गया है, तो राष्ट्रीय आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखते हुए उन्हें तैयार करने की योजना का उद्देश्य है। इन दोनों बातों को पूर्ण करने के लिए समय पर कदम उठाया जाना भी परम आवश्यक है। आश्चर्य है कि इसके पूर्व राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1986 में अपनाया गया था। उसमें फिर 1992 में संशोधित किया गया था। यानी 28 से 34 साल पुरानी नीति पर हम चले जा रहे थे। वर्ष 2014 में सरकार परिवर्तन के साथ ही इस ओर ध्यान देना प्रारम्भ हुआ, जिसका परिणाम अब सामने है। इनमें दो प्रमुख बातों का उल्लेख करें तो यह हैं कि प्रारम्भिक शिक्षा मातृ अथवा क्षेत्रीय भाषा में दी जायेगी, तो उच्च शिक्षा पहले से बहुत आसान हो जायेगी।

देश की जरूरतों और दुनिया से कदमताल के ढेर सारे लक्ष्य नई शिक्षा नीति में दिखाई पड़ते हैं। वर्ष 2030 तक हर एक बच्चे के लिए शिक्षा सुनिश्चित करने पर जोर है। विशेष बात यह कि जो बच्चे विद्यालयी शिक्षा के बाद ही बाहर हो जाया करते हैं, शिक्षा ऐसी होने जा रही है कि उनके पास भी एक लाइफ स्किल होगी। इससे वे सम्बंधित क्षेत्र में काम शुरू कर सकेंगे। मिली जानकारी के अनुसार प्राथमिक कक्षाओं की शिक्षा बच्चों में सीखने के प्रति रुचि जगाने वाली बनने जा रही है। यह मशीन की तरह एक समय सीमा में निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने वाली नहीं होगी। हमारी समझ है कि इससे बच्चे जो सीखेंगे, उसे आत्मसात करेंगे। फिर आगे बोर्ड की परीक्षाएं भी छात्रों में मूल अवधारणा को परखने के लिए आयोजित होंगी। आगे की शिक्षा के दौरान सेमेस्टर सुविधा होगी और छात्रों के सामने विकल्प भी होगा कि वे बीच में भी एक लघु अंतराल के बाद अपनी रुचि का पाठक्रम अपना सकते हैं। उच्च शिक्षा में दुनिया से कदम मिलाने का एक मंच यह है कि संयुक्त राज्य की नेशनल साइंस फाउंडेशन (एनएसएफ) की तरह यहां भी नेशनल रिसर्च फाउंडेशन (एनआरएफ) होगा। इसके तहत विज्ञान के साथ सामाजिक विज्ञान की बड़ी परियोजनाओं को भी मंजूरी और वित्तीय सहायता दी जायेगी। निश्चित ही इससे रिसर्च में हमें नये मुकाम प्राप्त हो सकेंगे।

किस तरह की शिक्षा के मानकीकरण के लिए कौन सी संस्था काम करेगी, यह नीति के विस्तृत प्रारूप में बताया गया है। हमेशा की तरह कुछ विघ्न संतोषी अभी से कहने लगे हैं कि नई नीति शिक्षा के क्षेत्र में भी निजीकरण को बढ़ावा देने जा रही है। उनके लिए जवाब यह है कि अब शिक्षा पर जीडीपी का 6 प्रतिशत तक खर्च किया जायेगा। यह अभी तक 4.43 प्रतिशत ही है। हम आशा करते हैं कि इस पर अगले बजट से ही पहल शुरू कर दी जायेगी। कोरोना काल में यह 4.43 से कुछ आगे बढ़ा, तो निश्चित ही शुभ संकेत होगा।

किस तरह की शिक्षा के मानकीकरण के लिए कौन सी संस्था काम करेगी, यह नीति के विस्तृत प्रारूप में बताया गया है। हमेशा की तरह कुछ विघ्न संतोषी अभी से कहने लगे हैं कि नई नीति शिक्षा के क्षेत्र में भी निजीकरण को बढ़ावा देने जा रही है। उनके लिए जवाब यह है कि अब शिक्षा पर जीडीपी का 6 प्रतिशत तक खर्च किया जायेगा।

ई-आईसीयू से होगा सरल इलाज

कोविड-19 से होने वाली मौतों में यथासंभव कमी सुनिश्चित करने हेतु भारत सरकार द्वारा किए जा रहे अथक प्रयासों को और मजबूती प्रदान करने के लिए एम्स नई दिल्ली ने देश भर के आईसीयू डॉक्टरों के साथ एक वीडियो-परामर्श कार्यक्रम 'ई-आईसीयू' शुरू किया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य उन डॉक्टरों के बीच मरीजों के समुचित उपचार से संबंधित चर्चाएं सुनिश्चित करना है। जो देश भर के अस्पतालों और कोविड केंद्रों में कोविड-19 रोगियों के इलाज में सबसे आगे हैं। कोविड-19 रोगियों का उपचार करने वाले डॉक्टरों के साथ-साथ आईसीयू में कार्यरत डॉक्टर भी इस वीडियो प्लेटफॉर्म पर अन्य चिकित्सकों और विशेषज्ञों से प्रश्न पूछ सकते हैं। अपने-अपने अनुभवों को प्रस्तुत कर सकते हैं। उनके साथ अपनी जानकारियों को साझा कर सकते हैं। इन चाओं का मुख्य उद्देश्य। साझा किए गए अनुभवों से सीखी गई जानकारियों की मदद से। आइसोलेशन बेड, ऑक्सीजन की सुविधा वाले बेड एवं आईसीयू बेड सहित 1000 बिस्तरों वाले अस्पतालों के बीच सर्वोत्तम प्रथाओं या तौर-तरीकों को मजबूत करके मौतों को न्यूनतम स्तर पर लाना है। अब तक चार सत्र आयोजित किए गए हैं। इस दौरान 43 संस्थानों मुंबई, गोवा, दिल्ली, गुजरात, तेलंगाना, असम, कर्नाटक, बिहार, आंध्र प्रदेश, केरल, तमिलनाडु को कवर किया गया है। ये शुरुआत भले ही छोटी लग रही है लेकिन सोशल डिस्टेंसिग के दौर में ये बेहद अहम है।

सुधांशु मित्तल, दिल्ली

आतंकवाद का क्रूरतम चेहरा 'लव जिहाद'

आंतकवाद पूरी दुनिया में नासूर की तरह है सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में जुलाई 2009 तक लगभग 47000 लोग मारे गए। समय के साथ साथ पूरी दुनिया आतंकवाद के प्रति सतर्क हुई है। आंतकवाद से लड़ने के लिए कड़े कानून, नई तकनीक का सहारा लिया गया। जिससे एक हद तक आतंकवाद पर लगाम लगी। 'लव जिहाद' जिनमें से एक है। इसमें मुस्लिम युवक एक पहले से तय लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए नाम बदलकर भोली-भाली लड़कियों को फसाते हैं। धर्मपरिवर्तन कराते हैं। शारीरक व मानसिक शोषण करते हैं। कई बार तो लक्ष्य पूरा होने पर लड़कियों को मार भी दिया जाता है। जो लव जिहाद का क्रूरतम चेहरा है। वर्षों से चला आ रहा लव जिहाद 2016 में हदिया के से प्रकाश में आया। हाल में उत्तर प्रदेश में मेरठ में ऐसे ही क्रूरतम मामले सामने आये हैं। पहले तो दौराला क्षेत्र में शाकिब ने अमन बनकर युवती को प्रेमजाल में फंसाकर युवती के सिर, हाथ, पैर काट कर की गई निर्मम हत्या कर दी । फिर परतापुर क्षेत्र के शमशाद ने अमित बनकर विवाहित महिला को प्रेम जाल में फसाया और लक्ष्य पूरा होने पर युवती और उसकी लड़की को मारकर अपने ही घर में दबा दिया। हमारे देश में ना जाने ऐसे ही कितने शकीब और शमशाद घूम रहे हैं। ज्यादातर को कोई सजा भी नहीं होती। ये सब कृत्य देश की सुरक्षा के लिए तो घातक है ही साथ हिन्दू संस्कृति को क्षति पहुचने के लिए देश द्रोहियों का षडयंत्र भी है।

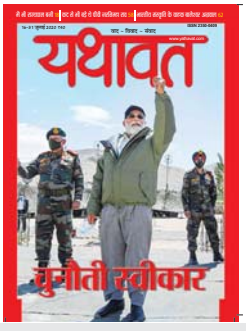

सुनील कुमार, पूर्वी उत्तर प्रदेश

कोरोना काल में रेलवे का हो रहा कायाकल्प

कोरोना काल में सरकार के किसी विभाग ने सबसे ज्यादा लाभ उठाया तो वह है भारतीय रेल। रेल मंत्रालय ने इस लॉकडाउन को अवसर में बदलते हुए जहां एक तरफ कई रुके हुए कार्यों को आगे बढ़ाया है वहीं दूसरे तरफ कई भविष्य की नई योजनाएं भी बनाई हैं। भारतीय रेलवे ने दिसंबर 2022 तक अपने सभी डिब्बों में आरएफआईडी टैग लगाने की योजना बना रहा है। भारतीय रेलवे दिसंबर 2022 तक सभी रेल डिब्बों में रेडियो-फ्रीक्वेंसी आइडेंटिफिकेशन टैग यानी कि आरएफआईडी लगाने की प्रक्रिया पूरी कर लेगी। इस टैग के जरिए रेल डिब्बे जहां कहीं भी हों उनका पता लगाया जा सकता है। जबकि इन टैग को पढ़ने वाले उपकरण रेलवे स्टेशनों और रेल पटरियों के पास प्रमुख स्थानों पर लगाए जाएंगे। जो डिब्बों पर लगे टैग को दो मीटर की दूरी से ही पढ़ लेंगे। डिब्बे की पहचान कर उससे संबंधित आंकड़ों को केन्द्रीय कंप्यूटरीकृत प्रणाली तक पहुंचा देंगे। इससे प्रत्येक डिब्बे की पहचान की जा सकेगी और वह डिब्बा जहां कहीं भी होगा उसका पता लगाया जा सकेगा।

अभिषेक सिंह, मधुबनी, बिहार

पुरस्कृत पत्र

पद्मनाभ मन्दिर ने जगाई आस

सुप्रीम कोर्ट ने पद्मनाभस्वामी मन्दिर के प्रबंधन में त्रावणकोर के राजपरिवार के अधिकार को मान्यता दी है। कोर्ट ने फैसला देते हुए तिरुअनंतपुरम के जिला जज की अध्यक्षता वाली कमेटी को मंदिर की व्यवस्था और देखरेख की जिम्मेदारी सौंपी है। सुप्रीम कोर्ट में केरल के तिरुअनंतपुरम स्थित श्री पद्मनाभस्वामी मंदिर में वित्तीय गड़बड़ी को लेकर प्रबंधन और प्रशासन का विवाद पिछले नौ सालों से लंबित था। केरल हाईकोर्ट के फैसले को त्रावणकोर के पूर्व शाही परिवार ने सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी थी। मंदिर के पास करीब दो लाख करोड़ रुपये की संपत्ति है।

इस फैसले के बाद सनातन धर्मावलंबियों के अंतर्मन में एक आशा जगी है। जिससे उनको लगने लगा है कि अब भविष्य में उनके धार्मिक स्थलों से अराजक सत्ता की बंदिशे टूटेगी। हमारे धार्मिक स्थल मुक्त हो सकेगें। जैसा की केरल में हुआ है। अब और भी राज्यों से ऐसी आवाजे उठने लगी हैं। भगवान पद्मनाभ (विष्णु) के इस भव्य मंदिर का पुनर्निर्माण 18वीं सदी में इसके मौजूदा स्वरूप में त्रावणकोर शाही परिवार ने कराया था। इसी शाही परिवार ने 1947 में भारतीय संघ में विलय से पहले दक्षिणी केरल और उससे लगे तमिलनाडु के कुछ भागों पर शासन किया था। स्वतंत्रता के बाद भी मंदिर का संचालन पूर्ववर्ती राजपरिवार ही नियंत्रित ट्रस्ट करता रहा जिसके कुलदेवता भगवान पद्मनाभ हैं।

अंबुज सिंह, सतना मध्यप्रदेश

राजकमल प्रकाशन समूह

पत्र लिखें, पुरस्कार पाएं

प्रत्येक पखवाड़े एक पत्र को राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली की ओर से पुरस्कृत किया जायेगा। पुरस्कृत पत्र को 200 रुपये की पुस्तक प्रदान की जायेगी। यथावत के पाठक पत्रिका में छपी सामग्री पर अपनी राय अनेक माध्यमों से दे सकते हैं। पत्रिका के इंटरनेट संस्करण (www.yathavat.com) पर प्रकाशित लेख के अंत में, फेसबुक पर यथावत के कॉलम में, ई-मेल (editor.yathavat@gmail.com) पर भी अपनी प्रतिक्रिया भेज सकते हैं। इसके साथ ही डाक द्वारा सम्पादक - यथावत, डी-160, सेक्टर 63, नोएडा (उ.प्र.) के पते पर भी भेज सकते हैं।

हिन्दुस्थान समाचार समूह की पत्रिका

यह अंक

वर्ष 7, अंक 24, 1-15 अगस्त, 2020

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक :
रवीन्द्र किशोर सिन्हा

समूह संपादक : रामबहादुर राय
समन्वय संपादक : प्रभात ओझा *

विशेष संवाददाता : गुंजन कुमार
प्रमुख संवाददाता : श्वेतांक पांडेय
संवाददाता/उपसंपादक : आशुतोष कुमार पांडेय

कला एवं सज्जा : हितेश कुमार
सहायक : रविकांत कुमार, जितेन्द्र सिंह

राज्य प्रतिनिधि-
उत्तर प्रदेशः राजेश कुमार तिवारी (9452875890)
सौरभ राय (9415653899)
बिहारः फैजान अहमद (9334129526)
राजीव मिश्र (6205609958)
उत्तराखंडः शिवशंकर जायसवाल (9411111401)
दधिबल यादव (9871332244)
मध्य प्रदेशः मयंक चतुर्वेदी (9425601264)
झारखंडः कुमार कृष्णन (9304706646)
मो. इकबाल सबा (7903070811)
राजस्थानः ईश्वर बैरागी(7597892495)
विजय माथुर (9587330333)
महाराष्ट्रः राजबहादुर यादव (9022564186)
सुधीर जोशी (9096619855)
हरियाणाः नरेन्दर जग्गा (7814040030)
छत्तीसगढ़ः केशव नाथ शर्मा (9340924982)
शैलेन्द्र पांडेय (9826632544)
हिमाचल प्रदेशः सुनील शुक्ला (9418190914)
पश्चिम बंगालः संतोष मधुप (7003057081)
जम्मू कश्मीरः बलवान सिंह (9419143528)
उड़ीसाः समन्वय नंदा (8249287233)
असमः अरविंद कुमार राय (8876590082)
सिक्किमः विशाल गुरुंग (9832432437)
गुजरातः हर्ष भाई शाह (9979794494)

विपणन विभाग-
सहायक उपाध्यक्षः विशाल सिन्हा
मो.- 8853531208
सहायक उपाध्यक्षः अशोक जेटली
(मो.- 7739336363) (प्रसार एवं सब्सक्रिप्शन)
ashok.jaitley.@hs.news
प्रसार अधिकारीः रामभजन (मो.-9711515991)
भोला प्रसाद यादव (मो.-9871487548)
उपप्रबंधक विपणनः अविनाश (मो.-08700741934)
प्रसार एवं विज्ञापनः फोन-0120-4804480
yathavat.circulation@gmail.com
marketing@hs.news
जनसंपर्क अधिकारीः संदीप द्विवेदी
क्षेत्रीय प्रबंधक : बिहार-झारखंड
मनीष किशोर (मो.-9334919888)
संपादकीय कार्यालयः
डी- 160, सेक्टर- 63, नोएडा-201301,
फोन-0120-4804480,
editor.yathavat@gmail.com
पंजीकृत कार्यालयः
ई-1, ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली- 110065

स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक रवीन्द्र किशोर सिन्हा द्वारा ई-1, ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली- 110065 से प्रकाशित और इंटरनेशनल प्रिंट-ओ-पैक (आईपीपी) लिमिटेड, सी-4-11, होजरी कॉम्पलैक्स, फेस-2 एक्सटेंशन, नोएडा-201305, उत्तर प्रदेश से मुद्रित। संपादक- रामबहादुर राय।

शुल्क पाक्षिक	:	₹40 व्यक्तिगत
शुल्क वार्षिक	:	₹912 व्यक्तिगत
शुल्क वार्षिक	:	₹1500 संस्थागत

** पीआरबी अधिनियम के तहत समाचार चयन के लिए उत्तरदायी।*

20

परिवार में कांग्रेस

राहुल गांधी से गहरी मित्रता के बावजूद सचिन पायलट ने असहमति का स्वर इतना जोर से गूंजा दिया है कि कांग्रेस में कोई भी अपने आपे में नहीं है। इतना बड़ा भूचाल बहुत दिनों बाद देखा जा रहा है। एक बड़ी चुनौती उपस्थित हो गई है। वह जमीन से आसमान तक फैली है और नेतृत्व का उपहास कर रही है।

मतांतर

सुखद और संतोषजनक सूचना है कि हमारे समूह संपादक श्री रामबहादुर राय ने पूर्णतया स्वस्थ होने के उपरान्त लेखन शुरू कर दिया है। हम उनके निवर्तमान कॉलम 'कहत कबीर' की जगह 'मतांतर' नाम से नये कॉलम का नौवां भाग प्रस्तुत कर रहे हैं। पूर्व की भांति आगे भी इस पर पाठकों की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

-संपादक

अंदर पढ़ें

135 में नेहरू-गांधी 46 साल 24
मां-बेटे का जमीन घोटाला 26
नेहरू का कोरा आदर्शवाद 26
भारत के पक्ष में प्रस्ताव के निहितार्थ 44
फसल के लिए उम्मीदें जगाती बरसात 46
मालिक नहीं माली बनें 50
धर्मनिरपेक्षता की कीमत चुका रहे हैं लोग 52
प्रधानाचार्य की पुस्तक में दूसरे की सामग्री 54
सितंबर में सजेगा आईपीएल मेला! 60

स्तंभ

कहानी 62
नदी 68
सेहत 71
बतरस 72

संस्मरण

संवैधानिक पदों पर रहने वाले कई व्यक्तियों ने अपने संस्मरण लिखे हैं। लोकजीवन को करीब से देखने वाली साहित्यकार मृदुला सिन्हा के भी राज्यपाल के रूप में अपने अनुभव हैं। पाठक इस अनुभव में संवैधानिक निर्वाह के साथ व्यापक समाज के प्रति भी लेखक के विचार जान सकेंगे। हमे पाठकों की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

संपादक

व्यक्तित्व

आंकड़ों की बाजीगरी से घटता कोरोना

56

संविधान सभा

महात्मा गांधी, क्रिप्स और मेनन

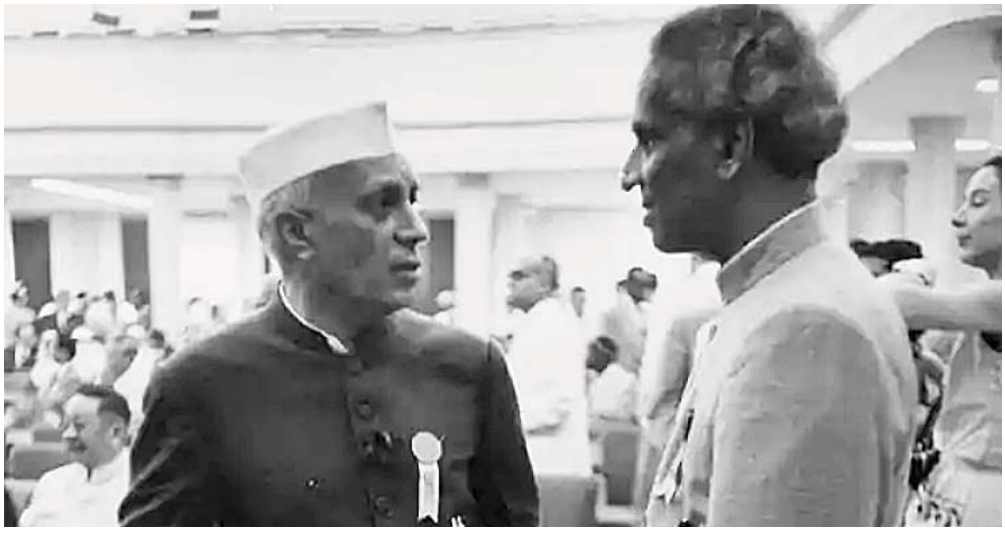

रामबहादुर राय

दूसरा विश्व युद्ध छिड़ने पर संविधान सभा के लिए पंडित नेहरू के अभियान को दो अनपेक्षित समर्थन मिले। पहला समर्थन उन्हें महात्मा गांधी से मिला। पंडित नेहरू के लिए वह बड़ी राजनीतिक उपलब्धि थी। हालांकि संविधान के इतिहास में वह एक पहेली भी बनी हुई है। उसे अब तक सुलझाया नहीं जा सका है। महात्मा गांधी ने 'एक ही रास्ता' नामक एक लंबा लेख लिखा। जिसमें उन्होंने संविधान सभा की अनिवार्यता को रेखांकित किया। दूसरी घटना थी, वह स्टेफर्ड क्रिप्स की भारत यात्रा थी, हालांकि वह व्यक्तिगत स्तर पर थी। लेकिन जिस पृष्ठभूमि में हो रही थी, उसके कारण महात्मा गांधी और कांग्रेस नेतृत्व ने उसमें बड़ी संभावना देखी। महत्वपूर्ण व्यक्तियों की निजी यात्राओं से वह अलग मानी गई। उनसे पहले एडवर्ड टाम्सन गांधीजी से मिलने सेवाग्राम आए थे। उनकी राय थी कि 'भविष्य में ब्रिटेन के छः राजनीतिज्ञ भारत की समस्या पर सहनुभूतिपूर्वक विचार करेंगे।' क्या महात्मा गांधी ने क्रिप्स की यात्रा में जो संभावनाएं थीं और उस समय जैसी जटिल राजनीतिक परिस्थितियां थी, उनमें से स्वतंत्रता की मंजिल के लिए संविधान सभा को 'एक ही रास्ता' बताया? इतिहास में लौटकर गांधीजी के लेख को पुनः ध्यान से पढ़ने से ऐसा ही लगता है। उस समय की ये दो बड़ी घटनाएं हैं। विश्व युद्ध छिड़ चुका था। एक सितंबर, 1939 को वह दुर्योग घटित हुआ। लंदन से वी.के. कृष्ण मेनन पंडित नेहरू को सूचित करते हैं कि स्टेफर्ड क्रिप्स भारत यात्रा पर जा रहे हैं। मंजिल उनकी चीन है। स्वाधीनता संग्राम के उस दौर में पंडित नेहरू के लिए क्रिप्स की भारत यात्रा का कितना महत्व था, यह इस बात से स्पष्ट है कि जैसे ही मेनन से उन्हें सूचना मिली, वे बड़े उत्साहित हो गए। वी.के. कृष्णमेनन का क्रिप्स से वैचारिक और व्यावहारिक सीधा संबंध 1932 से ही था। जब क्रिप्स को यह पता चला कि मेनन तो पंडित नेहरू के बहुत खास हैं, तब उनमें संबंध बहुत गहराया। मेनन की सूचना थी कि क्रिप्स तीन सप्ताह भारत में गुजारेंगे।

उन दिनों क्रिप्स सिर्फ एक वामपंथी नेता ही थे। लेबर पार्टी से उनका निष्कासन हो गया था। लेकिन उनका राजनीतिक महत्व ब्रिटेन में बना हुआ था। मेनन भी पंडित नेहरू के लिए तब तक 'कृष्ण' हो गए थे। उन्होंने इसी संबोधन से उन्हें 8 नवंबर, 1939 को पत्र लिखा, जिसका यह एक अंश है-'यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई है कि सर स्टेफर्ड क्रिप्स भारत आने वाले हैं। निश्चय ही उनका स्वागत है। और यह बात तुम उनसे कह सकते हो। मैं उन्हें अलग से भी लिख रहा हूं। मैं नहीं जानता कि अगले कुछ हफ्तों के दौरान हालात क्या होंगे। लेकिन अगर हमें निहायत गैरमामूली हालात का सामना करना पड़ेगा, तब भी उनका स्वागत करने वाले लोग यहां होंगे। मैं समझता हूं कि वह विमान से आएंगे। अगर ऐसा हो तो इलाहाबाद उनके उतरने के लिए

उपयुक्त होगा। अपने अतिथि के रूप में उनको पाकर मेरी बहन को और मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी और वह जब तक चाहें यहां ठहर सकते हैं। उनके लिए यह मुनासिब होगा कि वह गांधीजी और जिन्ना के सहित कुछ अन्य नेताओं से मिलें। हम उनके लिए एक छोटी यात्रा का प्रबंध कर सकते हैं। लेकिन तीन हफ्तों में सारे देश की यात्रा नहीं की जा सकती, क्योंकि भारत एक बड़ा देश है। वह जहां कहीं जाएंगे, उनसे मिलने और उनकी मदद करने के लिए मित्रों की कमी नहीं होगी। मैं चाहता हूं कि तुम उनसे यह भी कह दो कि अगर उस समय के लिए मैं उपलब्ध न भी रहूं, इलाहाबाद के हमारे मकान में उनका स्वागत होगा।'

स्टेफर्ड क्रिप्स भारत आए। 8 दिसंबर, 1939 को इलाहाबाद पहुंचे। पंडित नेहरू से लंबी बात की। यहां यह जान लेना चाहिए कि एक माह पहले ही स्टेफर्ड क्रिप्स ने ब्रिटिश सरकार को एक योजना दी थी। जिसमें भारत को डोमिनियन स्टेटस देने का जहां सुझाव था, वहीं यह भी प्रस्ताव उन्होंने दिया था कि ब्रिटेन ने जो भी वादे किए हैं, वे तुरंत लागू किए जाने चाहिए। उसमें 'भारत के इस अधिकार को भी स्वीकार किया गया था कि यह स्वयं संविधान सभा गठित कर अपने संविधान का निर्माण करे।' इस आधार पर पंडित नेहरू ने क्रिप्स की यात्रा को महत्व दिया। वे क्रिप्स से पहले से परिचित ही नहीं, मित्रभाव रखते थे। ऐसा क्यों न हो! पंडित नेहरू ने 'अपनी लंदन यात्रा के दौरान जून-अक्टूबर, 1938 के बीच क्रिप्स के घर जो सप्ताहांत बिताया था, उसने भी बड़ा योगदान दिया था। वहां वे वी.के. कृष्णमेनन के साथ गए थे। इस सप्ताहांत के अतिथियों की सूची में एटली (जो 26 जुलाई, 1945 को प्रधानमंत्री बने) एन्यूरिन बेवन और हेराल्ड लास्की भी शामिल थे और खुद मेजबान क्रिप्स तो थे ही। इस तरह यह अवसर मानों लेबर पार्टी के 'इंडिया कांसिलिएशन ग्रुप' की उपसमिति की एक सप्ताहांत बैठक ही बन गया। जिसमें कई अन्य बातों के साथ यह चर्चा भी की गई थी कि किस तरह अगली लेबर सरकार भारत में सत्ता का हस्तांतरण करेगी। इसके अलावा आम जनता के वयस्क मताधिकार से गठित एक संविधान सभा के बारे में भी चर्चा हुई।' उस स्टेफर्ड क्रिप्स की यह भारत यात्रा जो थी, वह एक ब्रिटिश सांसद की निजी यात्रा थी, लेकिन खास इसीलिए बन गई क्योंकि उन्हें ब्रिटिश सरकार का अघोषित प्रतिनिधि समझा गया। ऐसा नहीं है कि सिर्फ पंडित नेहरू ने ही समझा।

उस यात्रा में वे सुपर वायसराय समझे गए। अपनी पुस्तक 'अंधकार काल-भारत में ब्रिटिश साम्राज्य' में शशि थरूर ने इसका कारण इस तरह बताया है-'क्रिप्स पहले ही ब्रिटेन की राजनीति में एक महान व्यक्ति थे जो सॉलिसिटर जनरल रहे चुके थे और उन्हें कंजर्वेटिव पार्टी के साथ मिलकर यूनाइटेड फ्रंट की हिमायत करने के लिए (जो युद्ध के दौरान पारित हो गया था) 1939 में लेबर पार्टी से निष्कासित कर दिया गया था। क्रिप्स का व्यक्तित्व तपस्वी के शाकाहारवाद एवं व्यक्त अहंकार का मिश्रण था (चर्चिल ने क्रिप्स के लिए कहा थाः 'यदि भगवान की कृपा नहीं होती तो ये भगवान ही हो जाते'।) क्रिप्स 1939 में युद्ध छिड़ जाने के बाद भारत आये थे और अनेक भारतीय नेताओं को जानते थे, वे पंडित नेहरू को मित्र मानते थे।' स्टेफर्ड क्रिप्स की उस यात्रा से आशाजनक परिणाम की संभावना का कारण उनका एक भाषण है, जिसे उन्होंने 26 अक्टूबर, 1939 को हाउस ऑफ कामंस में दिया। जिसमें कहा- 'भारत और उसकी समस्याओं का निराकरण का एक उपाय संविधान सभा है। मुझे यकीन है कि भारत की मुक्ति संविधान सभा में है।'

वे जब भारत आए उस समय वायसराय थे लिनलिथगो। विश्व युद्ध के घोषित होते ही उन्होंने मुस्लिम लीग और जिन्ना को कंधे पर उठा लिया। डॉ. बी. पट्टाभि सीतारामैया ने जिस तरह कांग्रेस के इतिहास में क्रिप्स की इस यात्रा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है, उससे भी बहुत सी बातें अपने आप स्पष्ट हो जाती हैं। बी. पट्टाभि सीतारामैया ने 'कांग्रेस का इतिहास' में लिखा है कि 'यह यात्रा बड़ी महत्वपूर्ण थी।' क्यों वह बहुत खास मानी गई? इसका कारण भी उन्होंने बताया है। 'सर स्टेफर्ड ने बताया कि हाल में ब्रिटेन के लोगों की सहसा ऐसी धारणा हो गई है कि भारत से समझौता कर लिया जाए और भारतीयों की आकांक्षाओं को पूरा कर दिया जाए।' क्रिप्स जहां भी गए और जिससे भी मिले, उन्होंने अपना यह कथन दोहराया। वे गांधीजी, जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल से मिले। लंबी बात की। 'गांधीजी द्वारा तैयार किया गया एक विस्तृत और लंबा मसविदा भी वे अपने साथ लेते गए।' यही वह रहस्य है जो अधिक शोध की मांग करता है। उस मसविदे में क्या था? क्या उस समय कांग्रेस नेतृत्व डोमिनियन स्टेटस पर रजामंद थी? क्या गांधीजी ने उसका ही एक खाका मसविदे में दिया था?

उससे पहले क्रिप्स को स्पष्ट वक्ता, स्वतंत्र विचारक, आमूल परिवर्तन का पक्षपाती, भारत का हितैषी और पंडित नेहरू का मित्र माना जाता था। उनके इस मिशन से वह भ्रम दूर हो गया। जवाहरलाल नेहरू ने निराशा में कहा-'यह अपार दुख की बात है कि क्रिप्स जैसा सज्जन भी शैतान का वकील बन गया है।' गांधीजी भी बड़े दुखी हुए। क्रिप्स के प्रस्ताव पर उन्होंने जो टिप्पणी की, वह इतिहास में यादगार बन गई है। 'क्रिप्स का प्रस्ताव एक डूबते हुए बैंक का पोस्ट डेटेड चेक है।'

क्रिप्स की इस निजी भारत यात्रा से पहले गांधीजी संविधान सभा पर मौन थे। वे पंडित नेहरू के अभियान पर संशयग्रस्त भी थे। ऐसा समझना चाहिए और यह उचित भी है कि अचानक उनमें जो परिवर्तन आया, वह एक व्यापक संदर्भ में था। गांधीजी ने अपना लेख 'एक ही रास्ता' इलाहाबाद में ही लिखा। उस पर 19 नवबंर, 1939 की तारीख है। गांधीजी 17 नवंबर से एक सप्ताह के लिए इलाहाबाद में उन दिनों थे। कांग्रेस कमेटी की बैठक में रहने के अलावा उन्होंने वहां कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास किया। उनके लेख का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है-'पंडित जवाहरलाल नेहरू ने मुझे यह दायित्व सौंपा है कि अन्य चीजों के साथ-साथ मैं संविधान सभा के फलितार्थों का भी अध्ययन करूं। जब उन्होंने कांग्रेस प्रस्तावों में इसे पहले पहल दाखिल किया तो उसके संबंध में मैंने यह सोचकर अपने मन को मना लिया था कि लोकतंत्र की बारीकियों का उन्हें बेहतर ज्ञान है। लेकिन मेरा मन संशयमुक्त नहीं था। मगर घटना चक्र ने मुझे पूरी तरह से उसका कायल कर दिया है और उसी वजह से शायद मैं इसके प्रति खुद जवाहरलाल से भी ज्यादा उत्साहशील हो गया हूं। कारण, जनसाधारण के राजनीतिक तथा अन्य प्रकार के शिक्षण का वाहन होने के अतिरिक्त उसमें मुझे सांप्रदायिकता तथा अन्य

रोगों का उपचार भी दिखाई देता है, जो हो सकता है, जवाहरलाल को शायद न दिखाई देता हो।'

'उस योजना की जितनी अधिक आलोचना मैं देखता हूं, मैं उस पर उतना ही अधिक मुग्ध होता जाता हूं। वह जन भावना की सबसे अचूक सूचक होगी। उससे हमारी अच्छाइयां और बुराइयां खुलकर सामने आयेंगी। अशिक्षा की मुझे चिंता नहीं है। मैं तो पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के लिए आंख मूंदकर विशुद्ध वयस्क मताधिकार की व्यवस्था कर दूंगा, अर्थात उन सबके नाम मतदाता सूची में दर्ज कर दूंगा। उन्हें आजादी होगी कि यदि वे अपने उस अधिकार का उपयोग न करना चाहें, तो न करें। मुसलमानों को मैं पृथक निर्वाचक मंडल दूंगा, लेकिन अगर आवश्यकता हुई तो पृथक निर्वाचक मंडल दिए बिना हर एक वास्तविक अल्पसंख्यक समुदाय को उसकी संख्या के अनुसार सुरक्षित स्थान दूंगा, हालांकि ऐसा मैं अनिच्छा से ही करूंगा।'

'इस प्रकार संविधान सभा सांप्रदायिक समस्या का न्यायसम्मत समाधान ढूढ़ने का सबसे आसान तरीका प्रस्तुत करती है। आज हम ठीक ठीक यह नहीं कह सकते कि कौन किसका प्रतिनिधित्व करता है। कांग्रेस निर्विवाद रूप से व्यापकतम पैमाने पर इसकी सबसे पुरानी प्रातिनिधिक संस्था है, तथापि अन्य राजनीतिक और अर्ध-राजनैतिक संस्थाएं आज उसके प्रबल प्रातिनिधिक स्वरूप पर प्रश्न चिह्न लगा सकती हैं और लगाती भी हैं। मुस्लिम लीग, निस्संदेह, मुसलमानों की सबसे बड़ी प्रातिनिधिक संस्था है, मगर कई मुस्लिम संस्थाएं, जो किसी तरह नगण्य नहीं हैं, उसके इस दावे से इन्कार करती हैं कि वह उनका प्रतिनिधित्व करती है। लेकिन संविधान सभा तो सभी समुदायों का उनके ठीक अनुपात में प्रतिनिधित्व करेगी। उसके अतिरिक्त परस्पर विरोधी दावों के साथ पूर्ण न्याय करने का और कोई उपाय नहीं है। इसके बिना सांप्रदायिक तथा अन्य दावों का अंतिम निबटारा नहीं हो सकता।' उस लेख का यह अंतिम वाक्य वास्तव में पूरे संदर्भ को अपने शब्दों में बिना कहे प्रकट करता है, 'कठिनाई से बाहर निकलने का एक मात्र रास्ता संविधान सभा ही है। अपनी राय मैंने उस पर दे दी है, लेकिन उसकी तफसील से मैं बंधा हुआ नहीं हूं।' यह लेख 25 नवंबर को 'हरिजन' में छपा।

'उस योजना की जितनी अधिक आलोचना मैं देखता हूं, मैं उस पर उतना ही अधिक मुग्ध होता जाता हूं। वह जन भावना की सबसे अचूक सूचक होगी। उससे हमारी अच्छाइयां और बुराइयां खुलकर सामने आयेंगी। अशिक्षा की मुझे चिंता नहीं है। मैं तो पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के लिए आंख मूंदकर विशुद्ध वयस्क मताधिकार की व्यवस्था कर दूंगा, अर्थात उन सबके नाम मतदाता सूची में दर्ज कर दूंगा।

यह क्या मात्र एक संयोग था! पंडित नेहरू ने वी.के. कृष्णमेनन को यह पत्र 25 नवंबर, 1939 को ही लिखा। जिसका प्रांसगिक अंश है, 'वर्किंग कमेटी का जो प्रस्ताव मैंने तुम्हारे पास भेजा है, काफी व्यापक है, और उसका आशय वही है, जो उसके शब्दों से जाहिर होता है। कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के बीच दांवपेच का कोई सवाल नहीं है। आम तौर पर हम किसी तरह के संघर्ष की ओर बढ़ रहे हैं। किसी भी हालत में हम लोग अपनी स्थिति से डिगने नहीं जा रहे हैं, लेकिन यह गांधीजी का तरीका है और कांग्रेस का तरीका भी यही है कि आखिरी क्षण तक हमेशा समझौते के आधार पर बातें करें। यही सत्याग्रह की गांधीजी की व्याख्या है। मेरा यह मतलब नहीं है कि ये बातें बेमानी हैं। लेकिन मेरा मतलब यह जरूर है कि इस तरह का कोई समझौता बताई गई शर्तों पर हो भी सकता है। तुम देखोगे कि कांग्रेस के प्रस्ताव में सबसे ज्यादा जोर संविधान सभा पर दिया गया है, और इस विचार को विस्तार दिया गया है। गांधीजी अब पूरी तरह से इसके मुरीद हो गए हैं, और जैसा कि उनका तरीका है, भविश्य में वह इसी पर सबसे ज्यादा जोर देना चाहते हैं। अब वह विष्वास करते हैं कि भारत की समस्या को सुलझाने का यही एकमात्र तरीका है, और इस बारे में उन्होंने एक लेख भी लिखा है।'

उस समय गांधीजी के क्या विचार थे, इस बारे में डॉ. बी. पट्टाभि सीतारामैया ने लिखा है कि 'उनका ऐसा ख्याल था कि यद्यपि हम समझौते से काम चला सकते हैं, परंतु यह समझौता अंग्रेजों और हिन्दुओं के दरमियान नहीं हो सकता था। यह तो हिंसा होगी। यही वजह थी कि वे अपने ही तरीके की संविधान सभा की कल्पना कर रहे थे, जवाहरलाल जी के तरीके की नहीं, जो उन्होंने कांग्रेस के सामने रखी थी।' क्रिप्स की यात्रा की वह माया थी। कांग्रेस नेताओं से मिलने के पश्चात वे लाहौर ट्रेन से गए। वहां सिकंदर हयात खान से मिले। जो पंजाब में उस समय यूनियनिस्ट पार्टी की सरकार चला रहे थे। मुसलमानों में तब वे जिन्ना के मुकाबले प्रभाव में बड़े नेता थे। वहीं उन्हें वह फामूर्ला सूझा जो ब्रिटेन ने पूरे जोर शोर से चलाया, 'संविधान निर्माण के लिए शिथिल संघ (फेडरेशन) की शर्त हो।' 15 दिसंबर, 1939 को क्रिप्स ने मुंबई में जिन्ना से मुलाकात की। क्रिप्स ने उस यात्रा में भारत की राजनीतिक समस्याओं पर अपनी एक समझ बनाई।

कांग्रेस की कोशिश थी कि विश्व युद्ध के सवाल पर एक राष्ट्रीय और मिलाजुला रुख हो। लेकिन वायसराय के विश्व युद्ध संबंधी बयान से कुपित होकर पंडित नेहरू ने राज्यों के मंत्रियों को इस्तीफा देने का आदेश दिया। इसे इतिहासकारों ने 'एक अविस्मरणीय भूल' बताया है। वास्तव में इससे ही जिन्ना को अवसर मिला। वह यह दावा जोर से करने लगे कि मुस्लिम लीग ही भारत के मुसलमानों की एकमात्र प्रतिनिधि है। दूसरी तरफ कांग्रेस को उस दौर में ब्रिटिश सरकार से रियायतों का बेसब्री से इंतजार था। कारण कि क्रिप्स ने बड़ी आशा जगा दी थी। उसे वायसराय लिनलिथगो ने अपने एक बयान से थोड़ा बढ़ाया और सहारा दिया। वह बयान 10 जनवरी, 1940 का है। तब क्रिप्स भारत से रवाना हो गए थे। वायसराय ने मुंबई के ओरियंट क्लब में अपने भाषण में घोषणा करने की मुद्रा में कहा कि 'ब्रिटेन का उद्देश्य वेस्टमिनिस्टर मॉडल की तर्ज पर भारत को डोमिनियन स्टेटस देना है। जल्दी ही मैं कांग्रेस, मुस्लिम लीग और रियासतों के प्रतिनिधियों को अपनी कार्यकारिणी परिषद में शामिल कर उसका विस्तार करूंगा।' इस घोषणा से आशा जगी। गांधीजी ने वायसराय से मिलने का समय मांगा। उनकी भेंट 5 फरवरी, 1940 को निर्धारित हुई। वह अगले दिन भी चली। लेकिन वह कोई परिणाम नहीं दे सकी। गांधीजी ने एक बयान दिया कि वायसराय के प्रस्ताव का उद्देश्य यह था कि भारत के भाग्य का अंतिम निर्णय ब्रिटिष सरकार पर छोड़ दें, जब कि कांग्रेस आत्म निर्णय के सिद्धांत पर समझौता चाहती है। वही समय है जब चर्चिल इन प्रयासों के विरोध में अडिग थे। जान साइमन उनका

साथ दे रहे थे। कुख्यात साइमन कमीशन वाले ही वे जान साइमन थे। उनका तार जिन्ना से जुड़ा हुआ था।

स्टेफर्ड क्रिप्स ने भारत से लौटने पर एक बयान दिया। जिसे न्यूज एजेंसी 'यूनाइटेड प्रेस' ने जारी किया। उनका बयान लंबा है। उसकी खास बातें जो थीं, उसकी अनुगूंज भारत में देर तक सुनाई पड़ती रही। कांग्रेस की मांग को उन्होंने भारत की राष्ट्रीय आकांक्षा बताया था। स्वाधीनता आंदोलन को मुख्यतः अहिंसक माना था। यह स्वीकार किया था कि ब्रिटेन में हम लोगों को भारत के बारे में बहुत ही कम जानकारी है। 'कोई भी व्यक्ति इस बात से तो इनकार कर ही नहीं सकता कि सारे देश पर कांग्रेस का बड़ा भारी प्रभाव पड़ा है और अगर वह चाहे तो जल्दी ही ब्रिटेन के जुए से निकल भाग सकती है, लेकिन क्योंकि वह मुस्लिम लीग के सहयोग से ही आगे बढ़ना चाहती है, इसलिए भारत की आजादी रुकी हुई है।' जब उनसे पत्रकारों ने पूछा कि सांप्रदायिक प्रश्न को तत्काल हल करने के बारे में आपका सुझाव क्या है, तो क्रिप्स ने कहा 'इसका भी हल संविधान सभा में है।'

कांग्रेस कब तक इंतजार करती। परिस्थितियां उलझती जा रही थीं। इसी दौरान घरेलू मोर्चे पर भी घटनाएं तेजी से घट रही थीं। रामगढ़ में कांगेस का अधिवेशन हुआ। जो 19-20 मार्च, 1940 को तूफानी मौसम के बावजूद संपन्न हो सका। कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित कर 'पूर्ण स्वराज' और 'वयस्क मताधिकार' के आधार पर चुनी गयी संविधान सभा के निर्माण की मांग भी रखी। इसी प्रकार मुस्लिम लीग ने लाहौर में 23 मार्च, 1940 को 'पाकिस्तान' प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। ऐसी परिस्थिति में क्रिप्स जो चाहते थे और उसके लिए प्रयास कर रहे थे उसमें भारी अड़चन ब्रिटिश सरकार की ओर से आई। 'लेकिन यह कहा जा सकता है कि क्रिप्स ने 1939 में जो निष्कर्ष निकाले, वह उन दिनों की ब्रिटिश सरकार की नीतियों की तुलना में राजनीतिक वास्तविकताओं से कहीं अधिक मेल खाते थे। मार्च, 1940 में क्रिप्स ने चीन से पंडित नेहरू को खेदपूर्वक एक पत्र लिखा था, ब्रिटिश सरकार 'काफी मूर्खतापूर्ण तरीके से व्यवहार कर रही है, वायसराय के साथ बातचीत के बाद मुझे कुछ उम्मीद बंधने लगी थी कि हालात सुधर सकते हैं, परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ।'

ब्रिटेन में भी राजनीतिक परिवर्तन हुआ। इसका पूर्वानुमान स्वयं चर्चिल ने लगाया था। 1939 के नवंबर में यह कहा था कि अगले छः सप्ताह में स्थिति में बड़ा परिवर्तन हो जाएगा। उस समय सीमा में भले न हो पर, 10 मई, 1940 को विंस्टन चर्चिल प्रधानमंत्री बने। ब्रिटिश सरकार का दृष्टिकोण भी बदला और भारत के लिए मंत्री भी बदले। वे लियोपोल्ड एमरी थे। उन्होंने जटलैंड की जगह ली।

ब्रिटेन में भी राजनीतिक परिवर्तन हुआ। इसका पूर्वानुमान स्वयं चर्चिल ने लगाया था। 1939 के नवंबर में यह कहा था कि अगले छः सप्ताह में स्थिति में बड़ा परिवर्तन हो जाएगा। उस समय सीमा में भले न हो पर, 10 मई, 1940 को विंस्टन चर्चिल प्रधानमंत्री बने। ब्रिटिश सरकार का दृष्टिकोण भी बदला और भारत के लिए मंत्री भी बदले। वे लियोपोल्ड एमरी थे। उन्होंने जटलैंड की जगह ली। एमरी तो शुरू से ही भारत विरोधी थे। उनसे क्रिप्स ने कहा कि, अब तय कर लेना बहुत जरूरी हो गया है कि कांग्रेस के साथ क्या रुख अपनाया जाए-आक्रामक, या शांतिपूर्ण तरीके से व्यवहार? उन्होंने एमरी से तब कहा कि 'युद्ध के बीच में भी नागरिक अवज्ञा का खतरा ब्रिटिश राज के सामने अवश्य है। इसीलिए उन्होंने यह घोषणा करने का आग्रह किया कि 'भारत को अपना भविष्य तय करने का अधिकार होगा।' भारत की समस्या के समाधान में क्रिप्स का तब तक यही योगदान था। उन्हें चर्चिल ने राजदूत बनाकर मास्को भेज दिया। जहां वे जनवरी, 1942 तक थे। चर्चिल को मास्को में ब्रिटेन की बात रखने के लिए एक वामपंथी राजनीतिक नेता चाहिए था। उस युद्ध काल में स्टालिन एक बहुत महत्वपूर्ण सहयोगी थे। लेकिन क्या चर्चिल क्रिप्स को भारत से अलग भी करना चाहते थे? कम-से-कम उस समय तक, जब तक ब्रिटेन जर्मनी के खिलाफ जीवन-मरण के युद्ध में जूझ रहा हो।

दूसरी बार क्रिप्स चर्चिल के युद्ध मंत्रिमंडल के मिशन पर 23 मार्च, 1942 को भारत आए। उनकी इस यात्रा को ही 'क्रिप्स मिशन' के रूप में जाना जाता है। इस यात्रा में वे चर्चिल के ऐसे दूत बने कि भारत का नेतृत्व हैरान और परेशान रह गया। उससे पहले उन्हें स्पष्ट वक्ता, स्वतंत्र विचारक, आमूल परिवर्तन का पक्षपाती, भारत का हितैषी और पंडित नेहरू का मित्र माना जाता था। उनके इस मिशन से वह भ्रम दूर हो गया। जवाहरलाल नेहरू ने निराशा में कहा-'यह अपार दुख की बात है कि क्रिप्स जैसा सज्जन भी शैतान का वकील बन गया है।' गांधीजी भी बड़े दुखी हुए। क्रिप्स के प्रस्ताव पर उन्होंने जो टिप्पणी की, वह इतिहास में यादगार बन गई है। 'क्रिप्स का प्रस्ताव एक डूबते हुए बैंक का पोस्ट डेटेड चेक है।' भारत ने क्रिप्स का इस बार दूसरा चेहरा देखा। वे चर्चिल के युद्ध मंत्रिमंडल के सदस्य के रूप में जब भारत आए तो वे चतुर वकील ज्यादा थे। लंदन लौटकर उन्होंने कांग्रेस पर आरोप लगाए। कुछ आरोप बेतुके और झूठे थे। क्रिप्स उन दिनों लार्ड प्रिवी सील थे। चर्चिल के मंत्रिमंडल में यह उनका पद था। वे क्रिप्स मिशन के रूप में तीन हफ्ते भारत में थे।

कांग्रेस और क्रिप्स में बात कहां टूटी? क्रिप्स ने कांग्रेस पर आरोप लगाया कि उसने संविधान में परिवर्तन की मांग की। सच यह है कि कांग्रेस ने यह मांग रखी ही नहीं। बातचीत टूटी इस पर कि वायसराय की कार्यकारी परिषद में एक भारतीय सदस्य हो। वह युद्ध के दिनों में भारत की सुरक्षा के लिए निर्णय करने में पूरी तरह सक्षम हो। स्वाभाविक रूप से कांग्रेस अपना प्रतिनिधि चाहती थी। उस समय के वायसराय लिनलिथगो ने जुलाई में आई.सी.एस. अफसर सर मलिक फिरोज खान नून को अपनी परिषद में रक्षा सदस्य के रूप में मनोनीत किया। वे ही मलिक फिरोज खान नून 1957 में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री बने। जवाहरलाल नेहरू ने भांप लिया था कि क्रिप्स गलतबयानी करेंगे। इसलिए उन्होंने मेनन को सारे तथ्य भेजे। मेनन ने लंदन में एक प्रेस कांफ्रेंरस कर भारत का पक्ष रखा। उस समय पंडित नेहरू और मेनन दोनों क्रिप्स से बहुत निराश हुए। क्या इसलिए कि क्रिप्स से बड़ी उम्मीदें लगा ली थी? यह तो था ही। पंडित नेहरू पर निराशा का भाव कई साल तक बना रहा। यह उनके उन पत्रों में मिलता है जो उन्होंने समय-समय पर वी.के. कृष्णमेनन को लिखे। क्रिप्स तीसरी बार केबिनेट मिशन के प्रमुख सदस्य होकर भारत आए थे। क्रिप्स और पंडित नेहरू में संपर्क सूत्र वी.के. कृष्णमेनन रहे। मेनन और क्रिप्स का संबंध बना रहा।

महामारी से कितनी बदल जाएगी दुनिया

बनवारी

पिछले साल नवंबर में चीन के एक शहर वुहान में कोरोना वायरस संक्रमण का पहला मामला सामने आया था। वुहान चीन का एक महत्वपूर्ण शहर है, जहां वायरस संबंधी शोध के लिए विख्यात संस्थान भी है। उस समय इतना ही मालूम था कि यह एक नए प्रकार का संक्रमण है। लेकिन दिसंबर के अंत तक कम से कम चीन को यह पता चल गया था कि यह एक नया वायरस है। जनवरी में इसके अनेक मामले सामने आए और विश्व स्वास्थ्य संगठन के चीन स्थित कार्यालय ने उसकी सूचना मुख्यालय को भेज दी थी। चीन तबतक इस पूरे मामले पर पर्दा डाले रहा था। जल्द ही यह स्पष्ट हो गया कि यह संक्रमण एक महामारी का रूप ले सकता है। इसलिए वुहान शहर ही नहीं, वह जिस हूबे प्रांत में स्थित है, उसे चीन के अन्य प्रांतों से काटने के लिए परिवहन व्यवस्था स्थगित करनी पड़ी। वुहान अंतरराष्ट्रीय यात्रा के लिए भी चीन का सबसे बड़ा केंद्र है। यह आश्चर्य की बात है कि हवाई उड़ानों पर रोक नहीं लगाई गई थी। कोरोना वायरस से संक्रमित लोग चीन से उड़कर सभी क्षेत्रों में पहुंचते रहे और चीन के संक्रमण ने विश्वव्यापी महामारी का रूप ले लिया। बाद में चीन की उड़ानों पर अमेरिका ने रोक लगाई। भारत ने भी इस वर्ष मार्च में चीन जाने-आने वाली उड़ानों पर पाबंदी लगा दी। तब से पूरी दुनिया में उड़ाने स्थगित हैं और सभी देश इस महामारी से जूझ रहे हैं। चीन के व्यवहार से यह संदेह पैदा हुआ था कि यह वायरस उसकी प्रयोगशाला में पैदा हुआ है और उसने षडयंत्र पूर्वक उसे फैलाया है। चीन एक कम्यूनिस्ट देश है जिसमें सभी तरह की जानकारी सरकार द्वारा नियंत्रित रहती है। इसलिए यह कभी नहीं पता

चिकित्सा के क्षेत्र में भी यह अंधविश्वास पनप रहा था कि सब रोग चिकित्सा साध्य हैं। इसलिए जीवन को किसी अनुशासन में बांधने की आवश्यकता नहीं है। इस महामारी ने सिद्ध कर दिया है कि आप वायरस से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता के आधार पर ही जीत सकते हैं, चिकित्सा तंत्र के भरोसे नहीं।

पड़ेगा कि उसके बारे में प्रकट किया गया यह संदेह सही है, यह नहीं।

इस महामारी से अबतक सबसे अधिक अमेरिका प्रभावित हुआ है। अब तक अमेरिका के 40 लाख लोग इस वायरस से संक्रमित हो चुके हैं। अमेरिका में संसार का सबसे उन्नत, विस्तृत और आधुनिक चिकित्सा तंत्र है। उसके बाद भी उसके डेढ़ लाख से अधिक नागरिक इस वायरस की बलि चढ़ चुके हैं। इस महामारी को फैले लगभग छह माह होने वाले हैं। फिर भी उसका प्रभाव कम होता नहीं दिखाई दे रहा है। पहले यूरोप उससे सबसे अधिक संक्रमित था। अब उसका सबसे अधिक प्रभाव अमेरिका, ब्राजील और भारत में दिखाई दे रहा है। दुनिया में हर दिन लगभग पौने तीन लाख लोग संक्रमित हो रहे हैं। इनमें से पौने दो लाख लोग इन तीन देशों में हैं। यूरोप में यह महामारी कुछ थमी है, पर विशेषज्ञों की आशंका है कि अगले कुछ महीने में उसकी दूसरी लहर आ सकती है। अब इस महामारी का अमेरिका के बाद सबसे तेजी से विस्तार दक्षिण अमेरिकी देशों में हो रहा है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि इस महामारी का अगला निशाना अफ्रीका हो सकता है। भारत में इस महामारी से जूझते हुए चार महीने से अधिक हो चुके हैं। अभी भी यह बढ़ती ही जा रही है। भारत में कब वह शिखर छू लेने के बाद ढलना आरंभ करेगी, अभी किसी को नहीं मालूम। दुनिया भर में उसका टीका तैयार करने की कोशिश हो रही है। सबसे आशाजनक सूचना यह है कि इस वर्ष के अंत तक उसका टीका तैयार हो जाएगा और अगले वर्ष के आरंभ में वह लोगों को उपलब्ध होने लगेगा। सबसे निराशाजनक सूचना विश्व स्वास्थ्य संगठन से जुड़े विशेषज्ञों की यह आशंका है कि हो सकता है कि उसका टीका बन ही न पाए। दुनिया में अब तक डेढ़ करोड़ से अधिक लोग संक्रमित हो चुके हैं। संतोष की बात यह है कि मरने वालों की संख्या छह लाख से कुछ ही अधिक है। 1918 की महामारी ने कई करोड़ लोगों की जान ले ली थी।

इस महामारी के अब तक तीन प्रभाव स्पष्ट दिखाई देने लगे है। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि चीन अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अलग-थलग पड़ता जा रहा है। उसका दूसरा बड़ा प्रभाव यह है कि विश्व के औद्योगिक रूप से अग्रणी देशों ने अपनी वैश्वीकरण संबंधी नीति के बारे में पुनर्विचार करना शुरू कर दिया है। उसका तीसरा प्रभाव यह है कि पिछली शताब्दी में पश्चिमी विज्ञान के बारे में जो सकारात्मक धारणाएं बनी थीं, वे अब डगमगाने लगी हैं। इससे आने वाले समय में लोगों की जीवनशैली में परिवर्तन दिखाई देने लग सकता है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध में दुनिया की जो दिशा स्थिर हुई थी, उसमें व्यापक परिवर्तन हो सकते हैं। पिछली शताब्दी के अंत तक दुनिया के अधिकांश देशों में यह धारणा बन चली थी कि अमेरिका और यूरोपीय देशों ने जीवन का जो ताना-बाना खड़ा किया है, वह ही आदर्श है। अन्य सभी देशों को अपने यहां भी वैसा ताना-बाना खड़ा करने की कोशिश में लग जाना चाहिए। आर्थिक संमृद्धि की इस दिशा को अमेरिकन ड्रीम के रूप में प्रचारित किया गया। उसका सबसे गहरा असर चीन पर पड़ा था। चीन में 1949 में कंम्युनिस्ट शासन होते ही उन्होंने अपने आप को पश्चिमी देशों जैसी ही औद्योगिक शक्ति बनाने का फैसला कर लिया था। शी के चीन के राष्ट्रपति बनने के बाद वे 2049 तक अमेरिका को पछाड़ कर संसार की प्रधान शक्ति बनने का सपना देखने लगे थे। चीन की यह अमेरिकन ड्रीम अब खटाई पड़ती दिख रही है। इस सब का मतलब यह नहीं है कि दुनिया आर्थिक प्रगति का रास्ता छोड़ देगी। पर उसमें यह जमाया गया अंधविश्वास समाप्त हो जाएगा कि आर्थिक प्रगति का रास्ता बड़ा सीधा और निर्विघ्न है।

इस महामारी से अबतक सबसे अधिक अमेरिका प्रभावित हुआ है। अब तक अमेरिका के 40 लाख लोग इस वायरस से संक्रमित हो चुके हैं। अमेरिका में संसार का सबसे उन्नत, विस्तृत और आधुनिक चिकित्सा तंत्र है। उसके बाद भी उसके डेढ़ लाख से अधिक नागरिक इस वायरस की बलि चढ़ चुके हैं।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चीन की घेरेबंदी यह महामारी फैलने से पहले ही शुरू हो गई थी। अमेरिका में 2008 की मंदी के बाद यह अनुभव किया जाने लगा था कि पिछले 50 वर्षों में चीन से सहयोग करते हुए अमेरिका ने पाया कम है, खोया ज्यादा है। 1970 के आसपास अमेरिका ने चीन से संपर्क साधना शुरू किया था। 1980 के आसपास उसने अपने कल कारखानों को चीन स्थानांतरित किया। अमेरिकियों का मानना था कि चीन और दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में श्रम सस्ता है। इसलिए कम कीमत पर उत्पादन हो सकता है। अमेरिका 1970 तक संमृद्धि का शिखर छू चुका था। उसके बाद वह स्तर बनाए रखना था। उसे लगा कि चीन आदि देशों में कम लागत पर उपभोक्ता वस्तुएं पैदा करवाकर वह अपने उपभोग स्तर को बनाए रख सकता है। 2008 में यह पता चला कि कल कारखानें स्थानांतरित हो जाने से आम अमेरिकी की आमदनी और खरीदने की क्षमता घट गई है। कल कारखानों को लाए बिना स्थिति सुधरेगी नहीं। उसे यह भी दिखने लगा कि

चीन उसकी प्रौद्योगिकी और पूंजी के बल पर अपनी आर्थिक शक्ति बढ़ाता जा रहा है और अंतरराष्ट्रीय व्यपार में उसे चुनौती देने लगा है। राष्ट्र शक्ति बनने के बाद डोनाल्ड ट्रंप ने इन भावनाओं को आक्रामकता के साथ रखना शुरू किया। उससे अमेरिका और चीन के बीच व्यपारिक युद्ध शुरू हुआ। वह शीत युद्ध में बदलता जा रहा था। तभी चीन से कोरोना वायरस का संक्रमण हुआ और उसने एक विश्वव्यापी महामारी का रूप ले लिया। इसने विश्व की बड़ी शक्तियों को चीन के खिलाफ अमेरिका के समर्थन में आगे आने को विवश कर दिया। क्योंकि यह धारणा बनी कि चीन की नीयत साफ नहीं है। वह अन्य व्यवस्थाओं को नुकसान पहुंचा कर आगे निकलने की कोशिश कर रहा है। अपने आप को महाशक्ति सिद्ध करने की उतावली में चीन ने पिछले दिनों जो आक्रमता दिखाई है, उसने उसे खलनायक बना दिया है।

महामारी फैलने से पहले यूरोपीय देश चीन के विरूद्ध छेड़े गए व्यापार युद्ध में अमेरिका का साथ देने से इसलिए कतरा रहे थे कि उन्हें लगता था कि इससे विश्वव्यापी अर्थ तंत्र खतरे में पड़ सकता है। पिछले 50 वर्ष में यूरोप-अमेरिकी कपंनियों ने अपना उत्पादन तंत्र पूर्व और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में फैला रखा है। चीन का अपना बाजार भी बहुत बड़ा है। इसलिए वह आसानी से इस सप्लाई चेन का केंद्र हो गया है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में पैठ बढ़ाकर उसने अपनी वित्तीय शक्ति भी काफी मजबूत कर ली है। इसलिए यूरोपीय शक्तियों को लग रहा था कि अमेरिका और चीन के बीच व्यापार युद्ध इस वैश्वीकरण को नुकसान पहुंचा सकता है। लेकिन महामारी के दौरान यूरोपीय शक्तियों को समझ में आया कि इस वैश्वीकरण के खतरे भी कम नहीं हैं। संकट के समय अनेक क्षेत्रों पर निर्भरता खतरनाक सिद्ध हो सकती है। चीन बहुत सी जीवनरक्षक दवाओं का एकमात्र स्रोत है। ऐसे ही अनेक क्षेत्र हैं। अगर पश्चिमी देश ऐसे सभी रणनीतिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त नहीं करते तो वे कभी भी मुसीबत में पड़ सकते हैं। उन्हें यह भी समझ में आया कि चीन एक नियंत्रित व्यवस्था है। वह अपने राजनीतिक और आर्थिक तंत्र के बारे में संपूर्ण गोपनीयता बनाए रखता है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी उसका व्यवहार संदेहास्पद रहा है। चीन के प्रति इन सब संदेहों के कारण यूरोपीय देशों ने भी चीन से किनारा करना शुरू कर दिया है। उसके प्रति अब तक सकारात्मक रुख रखने वाला जर्मनी भी इस मंदी के समय अपनी कंपनियों को चीन के द्वारा हस्तगत किए जाने से बचाने के लिए कानून कड़े करने पर मजबूर हो गया। इस समय ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया और जापान चीन की घेरेबंदी में पूरी तरह अमेरिका के साथ हैं। अन्य देश भी धीरे-धीरे शामिल होते जा रहे हैं।

महामारी फैलने से पहले यूरोपीय देश चीन के विरूद्ध छेड़े गए व्यापार युद्ध में अमेरिका का साथ देने से इसलिए कतरा रहे थे कि उन्हें लगता था कि इससे विश्वव्यापी अर्थ तंत्र खतरे में पड़ सकता है। पिछले 50 वर्ष में यूरोप-अमेरिकी कपंनियों ने अपना उत्पादन तंत्र पूर्व और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में फैला रखा है।

चीन जानता है कि वह अभी न अमेरिका को सामरिक रूप से चुनौती देने की स्थिति में है और न आर्थिक रूप से। अमेरिका की सामरिक शक्ति ही उसे प्रधान शक्ति बनाती है। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों पर अमेरिका का कब्जा है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में अमेरिकी डालर को ही विनिमय

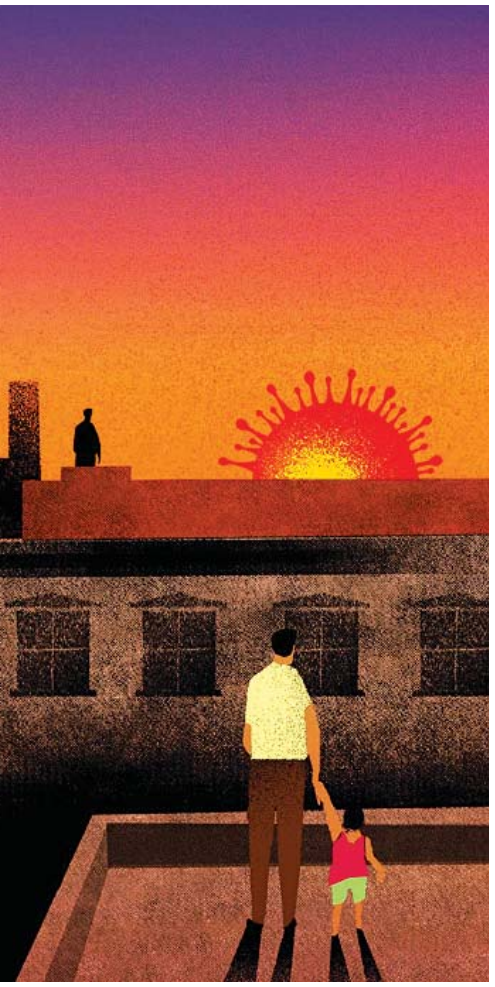

की मुद्रा के रूप में स्वीकृति प्राप्त है। आज भी अमेरिकी बाजार दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है। चीन अमेरिकी बाजार पर निर्भर है। अमेरिका चीनी बाजार पर निर्भर नहीं है। चीन जिसे अपनी सबसे बड़ी शक्ति समझता है, वही उसकी सबसे बड़ी कमजोरी भी है। उसके पास तीन हजार अरब डालर का विदेशी मुद्रा भंडार है। उसका महत्व तभी तक है, जबतक अमेरिका और उसकी सहयोगी शक्तियां उससे सहयोग कर रही हैं। चीन अभी भी यह आशा लगाए हुए है कि इस वर्ष नवंबर में होने वाले चुनावों में डोनाल्ड ट्रंप हार जाएंगे और डेमोक्रेटिक उम्मीदवार बाइडेन अमेरिका के राष्ट्रपति हो जाएंगे। डोनाल्ड ट्रंप की बिदाई के बाद उसका अमेरिका से टकराव समाप्त हो जाएगा। पर चीन का यह विश्वास सही नहीं है। अमेरिका में चीन के खिलाफ लिए

विश्व के आर्थिक ढांचे में होने वाले इन परिवर्तनों का भारत पर क्या असर पड़ेगा? भारत की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि उसकी अर्थ व्यवस्था विदेश व्यापार पर निर्भर नहीं है।

गए अनेक फैसलों में रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक सांसदों ने मिलकर वोट दिया है। बाइडेन जीत भी गए तो भी अमेरिका की चीन के बारे में नीति अधिक नहीं बदलने वाली। चीन की दूसरी समस्या यह है कि उसने पश्चिमी शक्तियों की नकल करते हुए अपनी अर्थ व्यवस्था को विदेश व्यापार पर आश्रित कर दिया है। इस महामारी के कारण विश्व अर्थ व्यवस्था गंभीर मंदी का शिकार होने वाली है और उसमें व्यापक परिवर्तन होने वाले हैं। चीन को उसकी वन वेल्ट वन रोड योजना भी बड़ा आघात पहुंचाने वाली है। बदली परिस्थितियों में यह योजना सफेद हाथी साबित होने वाली है।

विश्व के आर्थिक ढांचे में होने वाले इन परिवर्तनों का भारत पर क्या असर पड़ेगा? भारत की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि उसकी अर्थ व्यवस्था विदेश व्यापार पर निर्भर नहीं है। भारत ने स्वेच्छा से ही अपनी अर्थ व्यवस्था का स्वरूप ऐसा रखा है। लेकिन आज की दुनिया में प्रौद्योगिकी की उपेक्षा करके आर्थिक और सामरिक शक्ति नहीं बढ़ाई जा सकती। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पश्चिमी देशों से सहयोग आवश्यक है। हमारी अबतक की सरकारें स्वतंत्र विदेश नीति की दुहाई देते हुए भारत को अलग-थलग बनाए रहीं। राष्ट्रपति बुश के समय अमेरिका ने नाभिकीय संधि के द्वारा भारत से निकट संबंध बनाने की पहल की थी। पर हमारी सरकार सोनिया गांधी कांग्रेस की परंपरागत नीति से बंधी रही और मनमोहन सिंह उस संधि का पूरा लाभ नहीं उठा पाए। मोदी सरकार ने भारत की यह लंबे समय की हिचकिचाहट समाप्त करके अमेरिका से निकटता बनाई। हाल में विदेशमंत्री जयशंकर ने स्पष्ट किया कि भारत की नई विदेश नीति बहुध्रुवीय विश्व की दिशा में ही है। भारत बिना किसी गुट में शामिल हुए पश्चिमी शक्तियों से सहयोग को नई ऊचाइंयों पर ले जाने को कृतसंकल्प है। चीन की बढ़ती हुई सामरिक चुनौती ने मोदी सरकार की नई नीति के लिये देश में सर्वसम्मित पैदा कर दी है। पश्चिमी शक्तियों से सहयोग की निति के आधार पर चीन छोड़ने वाली अनेक अमेरिकी और यूरोपीय कंपनियों को भारत अपने यहां आमंत्रित करने की कोशिश कर रहा है। पर इस दिशा में अधिक आशा नहीं बांधी जानी चाहिए। अलबत्ता चीन और महामारी की चुनौती ने भारत में सामरिक और आर्थिक रूप से मजबूत होने का एक संकल्प पैदा कर दिया है। आने वाले समय में उसके सकारात्मक परिणाम ही निकलेंगे।

इस महामारी के इन सब प्रभावों के अलावा उसका हमारी जीवन दृष्टि पर भी गहरा असर पड़ने वाला है। पश्चिमी विज्ञान के विकास के साथ-साथ यह धारणा पनपी थी कि मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सकता है। अपनी तर्क बुद्धि से वह प्रकृति की प्रक्रियायों में निहित कार्य-कारण समझ कर उस पर नियंत्रण कर सकता है। इस महामारी ने पश्चिमी विज्ञान का यह अंहकार समाप्त कर दिया है। इस अंहकार ने पश्चिमी समाज में अनास्था व स्वेच्छाचार को बढ़ावा दिया था और इससे लोगों की नैतिक धारणाएं कमजोर हो रहीं थी। चिकित्सा के क्षेत्र में भी यह अंधविश्वास पनप रहा था कि सब रोग चिकित्सा साध्य हैं। इसलिए जीवन को किसी अनुशासन में बांधने की आवश्यकता नहीं है। इस महामारी ने सिद्ध कर दिया है कि आप वायरस से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता के आधार पर ही जीत सकते हैं, चिकित्सा तंत्र के भरोसे नहीं। रोग प्रतिरोधक क्षमता रहन-सहन में सात्विक अनुशासन से आती है। भारत में आयुर्वेद सदा इसी तत्व पर जोर देता रहा है। अगर हम आयुर्वेद के सिद्धांतों का ठीक से प्रचार करें तो वह संसार भर में एक वैकल्पिक और अधिक विश्वासनीय चिकित्सा पद्धति के रूप में उभर सकता है। भारत में लोग फिर से प्राकृतिक जीवन के महत्व को समझने लगे हैं। यहां तक कि महामारी में काम-धंधे बंद होने के कारण जो मजदूर अपने गांव लौट गये थे, उन्हें भी अपनी खेती और ग्रामीण वातावरण फिर सुहाने लगा है। उनमें से बहुत से लोग वापस शहर नहीं जाना चाहते। महामारी के कारण लोगों की जीवनदृष्टि में हो रहे यह परिवर्तन काफी सकारात्मक है। आने वाला समय बताएगा कि यह महामारी दुनिया को कितना बदल पाएगी।

गुरुदेव और बाबा साहेब ने
क्यों ली थी मातृभाषा में शिक्षा

शिक्षा का अर्थ है ज्ञान। बच्चे को ज्ञान कहां मिला? हम तो उन्हें नौकरी पाने के लिए तैयार करते रहते हैं। हमारे यहां पर दुर्भाग्यवश स्कूली या कॉलेज शिक्षा का अर्थ नौकरी पाने से अधिक कुछ नहीं रहा है। स्कूली शिक्षा में बच्चों को मातृभाषा से इतर किसी अन्य भाषा में पढ़ाना उनके साथ अन्याय करने से कम नहीं है। यह मानसिक प्रताड़ना के अतिरिक्त और क्या है ?

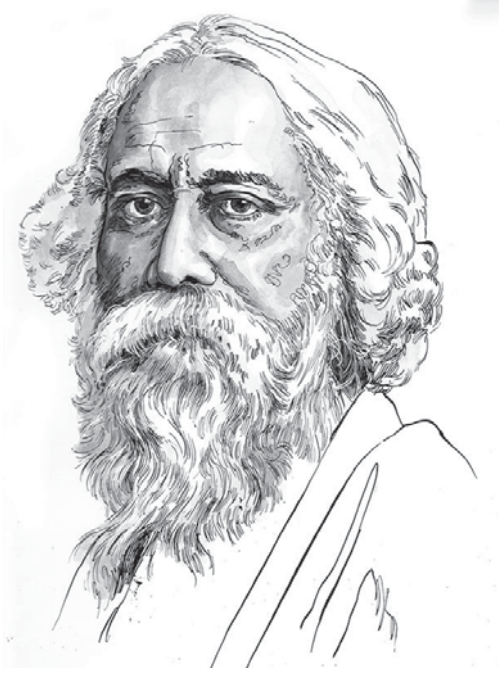

आर. के. सिन्हा

नई शिक्षा नीति-2020 की घोषणा हो गई है। इसके विभिन्न बिन्दुओं पर बहस तो होगी ही। इसने एक बड़े और महत्वपूर्ण दिशा में कदम बढ़ाने का इरादा व्यक्त किया है। उदाहरण के रूप में नई शिक्षा नीति में पांचवी क्लास तक मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को ही पढ़ाई का माध्यम रखने की बात कही गई है। इसे क्लास आठ या उससे आगे तक भी बढ़ाया जा सकता है। विदेशी भाषाओं की पढ़ाई सेकेंडरी स्तर से होगी। नई शिक्षा नीति में यह भी कहा गया है कि किसी भी भाषा को विद्यार्थियों पर जबरदस्ती थोपा नहीं जाएगा।

यह बार-बार सिद्ध हो चुका है कि बच्चा सबसे आराम से सहज भाव से अपनी भाषा में पढाए जाने पर उसे तत्काल ग्रहण करता है। जैसे ही उसे मातृभाषा की जगह किसी अन्य भाषा में पढ़ाया जाने लगता है, तब ही गड़बड़ चालू हो जाती है। जो बच्चे अपनी मातृभाषा में शुरू से ही पढ़ना चालू करते हैं, उनके लिए शिक्षा क्षेत्र में आगे बढ़ने की संभावनाएं अधिक प्रबल रहती हैं। यानी बच्चे जिस भाषा को घर में अपने अभिभावकों, भाई-बहनों, मित्रों के साथ बोलते हैं, उसमें ही पढ़ने में उन्हें अधिक सुविधा रहती है। पर हमारे यहाँ तो कुछ दशकों से अंग्रेजी माध्यम से स्कूली शिक्षा लेने-देने की महामारी ने अखिल भारतीय स्वरूप ले रखा था। क्या आप मानेंगे कि

जम्मू-कश्मीर तथा नागालैंड ने अपने सभी स्कूलों में शिक्षा का एकमात्र माध्यम अंग्रेजी ही किया हुआ है? महाराष्ट्र, दिल्ली, तमिलनाडू, बंगाल समेत कुछ अन्य राज्यों में छात्रों को विकल्प दिए जाते रहे कि वे चाहे तो अपनी पढाई का माध्यम अंग्रेजी रख सकते हैं । यानि उन्हें अपनी मातृभाषा से दूर करने के सरकारी स्तर पर ही प्रयास हुए लेकिन, यह स्थिति अब खत्म होगी।

कोई भी देश तब ही तेजी से आगे बढ़ सकता है, जब उसके नौनिहाल अपनी जुबान में ही पढ़ाई शुरू करने का सौभाग्य पाते हैं। और, बच्चों को नर्सरी से पांचवी कक्षा तक की प्रारंभिक शिक्षा यदिउसी भाषा में दी जाय जो वह अपने घर में अपनी माँ और दादा-दादी से बोलना पसंद करता है तो इससे बेहतर कुछ हो ही नहीं सकता ।

आपको जीवन के अलग-अलग क्षेत्रों में अपने लिए खास जगह बनाने वाली अनेक हस्तियां मिल जाएंगी, जिन्होंने अपनी प्राइमरी शिक्षा अपनी मातृभाषा में ही ग्रहण की। इनमें गुरुदेव रविन्द्र नाथ टेगौर से लेकर प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद और बाबा साहेब अंबेडकर शामिल हैं।

गुरुदेव रविन्द्र नाथ टैगोर की शुरूआती शिक्षा का श्रीगणेश अपने उत्तर कलकत्ता के घर में ही हुआ। उनके परिवार में बांग्ला भाषा ही बोली जाती थी। उन्होंने जिस स्कूल में दाखिला लिया, वहां पर भी पढ़ाई का माध्यम बांग्ला ही था। यानी बंगाल की धरती की भाषा। देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आरंभिक शिक्षा बिहार के सीवान जिले के अपने गांव जीरादेई में ही हुई। उधर तब तक अंग्रेजी का नामोनिशान भी नहीं था। उन्होंने स्कूल में हिन्दी, संस्कृत और फारसी पढ़ी।

उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा कोलकात्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज से ली। बाबा साहेब की प्राथमिक शिक्षा सतारा, महाराष्ट्र के एक सामान्य स्कूल से हुई। उधर पढ़ाई का माध्यम मराठी था। भारत की चोटी की इंजीनियरिंग और इंफ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र में सक्रिय लार्सन एंड टुब्रो के चेयरमेन रहे ए.वी.नाईक का संबंध दक्षिण गुजरात से है। उन्हें अपने इंदहल गांव के प्राइमरी स्कूली में दाखिला दिलवाया गया। वहां पर उन्होंने पांचवीं तक गुजराती, हिन्दी, सामाजिक ज्ञान जैसे विषय पढ़े। अंग्रेजी से उनका संबंध स्थापित हुआ आठवीं कक्षा में आने के बाद। टाटा समूह के नए चेयरमेन नटराजन चंद्रशेखरन के नाम की घोषणा हुई। तब कुछ समाचार पत्रों ने उनका जीवन परिचय देते हुए लिखा कि चंद्रशेखरन जी ने अपनी स्कूली शिक्षा अपनी मातृभाषा तमिल में ग्रहण की थी। उन्होंने स्कूल के बाद इंजीनियरिंग की डिग्री रीजनल इंजीनयरिंग कालेज (आरईसी), त्रिचि से हासिल की। यह जानकारी अपने आप में महत्वपूर्ण थी। खास इस दृष्टि से थी कि तमिल भाषा से स्कूली शिक्षा लेने वाले विद्यार्थी ने आगे चलकर अंग्रेजी में भी महारथ हासिल किया और करियर के शिखर को छुआ।

बेशक, एड गुरु और गीतकार प्रसून जोशी के पिता उत्तर प्रदेश में एक सरकारी स्कूल के अध्यापक थे। इसलिए उन्होंने जगह-जगह तबादले होते रहते थे। इसके चलते प्रसून ने मेरठ, गोपेश्वर, हापुड़ वगैरह के सरकारी स्कूलों में विशुद्ध हिन्दी माध्यम से अपनी स्कूली शिक्षा लेनी शुरू की थी। वे कहते है कि अगर उन्होंने स्कूली दिनों में हिन्दी का बढ़िया तरीके से अध्ययन न किया होता तो वे एड की दुनिया में अपने पैर नहीं जमा पाते।

भारत में अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करने की अंधी दौड़ के चलते अधिकतर बच्चे असली शिक्षा को पाने के आनंद से वंचित रह जाते हैं। दिक्कत ये है कि अधिकतर अंग्रेजी के मास्टरजी तो अंग्रेजी की व्याकरण से स्वयं ही वाकिफ नहीं होते। बहरहाल, आप असली शिक्षा का आनंद तो तब ही पा सकते हैं,जब आपने कम से कम पांचवीं तक की शिक्षा अपनी मातृभाषा में हासिल की हो। ऐसे सौभाग्यशाली लोगों में मैं भी शामिल हूँ और मुझे इस बात पर गर्व है।

गुरुदेव रविन्द्र नाथ टैगोर की शुरूआती शिक्षा का श्रीगणेश अपने उत्तर कलकत्ता के घर में ही हुआ। उनके परिवार में बांग्ला भाषा ही बोली जाती थी। उन्होंने जिस स्कूल में दाखिला लिया, वहां पर भी पढ़ाई का माध्यम बांग्ला ही था। यानी बंगाल की धरती की भाषा। देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आरंभिक शिक्षा बिहार के सीवान जिले के अपने गांव जीरादेई में ही हुई। उधर तब तक अंग्रेजी का नामोनिशान भी नहीं था।

स्पष्ट कर दूं कि अंग्रेजी का कोई विरोध नहीं है। अंग्रेजी शिक्षा या अध्ययन को लेकर कोई आपत्ति भी नहीं है। मसला यह है कि हम अपनी मातृभाषा, चाहे हिन्दी, तमिल, बांग्ला असमिया, उड़िया, तेलगू, मलयालम, मराठी, गुजरती में प्राइमरी स्कूली शिक्षा देने के संबंध में कब गंभीर होंगे? अब नई शिक्षा नीति के लागू होने से स्थिति बदलेगी। अभी तक तो हम बच्चों को सही मायने में शिक्षा तो नहीं दे रहे थे। हां, शिक्षा के नाम पर प्रमाणपत्र जरूर दिलवा देते थे। शिक्षा का अर्थ है ज्ञान। बच्चे को ज्ञान कहां मिला? हम तो उन्हें नौकरी पाने के लिए तैयार करते रहते हैं। हमारे यहां पर दुर्भाग्यवश स्कूली या कॉलेज शिक्षा का अर्थ नौकरी पाने से अधिक कुछ नहीं रहा है। स्कूली शिक्षा में बच्चों को मातृभाषा से इतर किसी अन्य भाषा में पढ़ाना उनके साथ अन्याय करने से कम नहीं है। यह मानसिक प्रताड़ना के अतिरिक्त और क्या है?

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य क्या हो? तैत्तिरीय उपनिषद तथा अन्य शास्त्रों में शिक्षा का प्रथम उद्देश्य शिशु को मानव बनाना है, दूसरा, उसे उत्तम नागरिक तथा तीसरा, परिवार को पालन पोषण करने योग्य और अंतिम सुख की प्राप्ति कराना है। हमारी संस्कृति में तो जीवन के चार पुरुषार्थ, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के आधार में यह उद्देश्य हैं। क्या जो शिक्षा हमारे देश के करोड़ों बच्चों को मिलती रही है उससे उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति हो हुई? नहीं। इधर तो व्यवसाय या नौकरी ही शिक्षा का उद्देश्य रहा। जब इस तरह की सोच के साथ हम शिक्षा का प्रसार-प्रचार करेंगे तो मातृभाषा की अनदेखी स्वाभाविक ही है। बहरहाल, अब लगता है कि हालात बदलेंगे।

(लेखक बहुभाषी संवाद समिति हिन्दुस्थान समाचार के अध्यक्ष और राज्यसभा के पूर्व सदस्य हैं)

सन 2020 की 29 जुलाई को भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने का प्रस्ताव पारित हुआ तो दरअसल ये 34 वर्ष बाद किया जाने वाला परिवर्तन नहीं है। यह परिवर्तन वस्तुतः भारत के इतिहास में 185 वर्ष बाद आया है। जैसे हम आजादी के बाद से औपनिवेशिक मानसिकता से उबरने के लिये संघर्षरत थे और भौतिक रूप से स्वतंत्र होने के बाद भी मानसिक गुलामी से मुक्त होने के लिये छटपटा रहे थे। वैसे ही हम विगत 185 वर्षों से हमें गुलाम और जर्जर बनाने वाली शिक्षा व्यवस्था से मुक्त होने के लिये छटपटा रहे थे।

"सा विद्या या विमुक्तये"

डॉ. सच्चिदानंद जोशी

विष्णुपुराण में कहा गया है:-
तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये।
आयासायापरं कर्म विद्याऽन्या शिल्पनैपुणम्॥ १-१९-४१॥

अर्थात कर्म वही है जो बंधनों से मुक्त करे और विद्या वही है जो मुक्ति का मार्ग दिखाये। इसके अतिरिक्त जो भी काम है वे सब निपुणता देने वाले मात्र हैं।

शिक्षा के इस संकल्प को भारतीय परंपरा में वर्षों से अंगीकृत किया जाता रहा और तद्नुरूप ही विश्वविद्यालयों और गुरुकुलों में शिक्षा दी जाती रही। शिक्षा के साथ, संस्कार भी दिये जाते रहे और एक संपूर्ण मनुष्य बनाने की प्रक्रिया निरंतर जारी रही।

यह भारतीय शिक्षा व्यवस्था की मजबूती का ही प्रभाव था कि कई विदेशी आततायियों के आक्रमण और भारत के एक बड़े भूभाग पर उनके द्वारा राज करने के बावजूद भारत का नैतिक और सांस्कृतिक आधार मजबूत बना रहा। आक्रमणकारी मंदिर और प्रतिमायें तो तोड़ पाये लेकिन भारतवासियों के मन में स्थित संस्कारों के मजबूत दुर्ग को नहीं भेद पाये। विश्वविद्यालय के पुस्तकालय जलाने से ग्रंथ सम्पदा तो नष्ट हो गई लेकिन ज्ञान सम्पदा शास्वत बनी रही।

संभवतः भारतीय शिक्षा व्यवस्था का यही मजबूत आधार अंग्रेजी हुकूमत को बुरी तरह खटकने लगा था, क्योंकि भारत पर व्यापारिक सत्ता प्राप्त करने के बावजूद अंग्रेज न तो भारत की राजनैतिक सत्ता को प्राप्त कर सके थे और न ही सांस्कृतिक सत्ता को छिन्न विछिन्न कर पाये थे। सन 1835 में लाये गये इंग्लिश एज्युकेशन एक्ट

के माध्यम से ब्रिटिश सरकार ने भारतीय भाषाओं, विशेषकर संस्कृत और अरबी में होने वाली शिक्षा पर गहरी चोट की। अंग्रेजी में शिक्षा को प्रोत्साहन दिया। उस समय भारत के गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैटिंक थे, लेकिन इस पूरे शिक्षा तंत्र को आमूलाग्र बदलने का कार्य किया था लार्ड थामस बेबिंगटन मैकाले ने। मैकाले का मानना था कि भारत की सांस्कृतिक जड़ों को खोखला करने के लिये शिक्षा व्यवस्था पर पकड़ बनाना जरूरी है। वह संस्कृत और अरबी में दी गई शिक्षा एवं ज्ञान को

दोयम दर्जे का मानता था। मैकाले द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था में इसी दुर्भावना से किये गये परिवर्तनों के परिणाम को भारत अपनी आजादी के बहत्तर साल बाद भी भुगत रहा है।

सन 2020 की 29 जुलाई को भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने का प्रस्ताव पारित हुआ तो दरअसल ये 34 वर्ष बाद किया जाने वाला परिवर्तन नहीं है। यह परिवर्तन वस्तुतः भारत के इतिहास में 185 वर्ष बाद आया है। जैसे हम आजादी के बाद से औपनिवेशिक मानसिकता से उबरने के लिये संघर्षरत थे और भौतिक रूप से स्वतंत्र होने के बाद भी मानसिक गुलामी से मुक्त होने के लिये छटपटा रहे थे। वैसे ही हम विगत 185 वर्षों से हमें गुलाम और जर्जर बनाने वाली शिक्षा व्यवस्था से मुक्त होने के लिये छटपटा रहे थे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति भारत के लिये सही मायनों में ''सा विद्या या विमुक्तये'' का संदेश लेकर आई है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा के पूर्व 29 सितम्बर, 2018 के ऐतिहासिक दिन का स्मरण करना भी अप्रासंगिक नहीं होगा, जब दिल्ली में देश की शीर्ष शैक्षणिक संस्थाओं ने रिसर्च फॉर रिसर्जेन्स की अगुवाई में तथा भारतीय मनीषा के प्रखर चिंतक श्री रामबहादुर राय की अध्यक्षता में ''एज्युकेशन फॉर रिसर्जेन्स'' सम्मेलन आयोजित किया था। इस सम्मेलन के आयोजकों में यूजीसी, एआईसीटीई, आईसीएसएसआर, आईजीएनसी, इग्नू, जेएनयू तथा एसजीटी विश्वविद्यालय जैसी संस्थायें शामिल थीं और देश के 400 कुलपतियों सहित एक हजार वरिष्ठ शिक्षाविदों ने इसमें भाग लिया था। भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इसका शुभारंभ किया तथा तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर और तत्कालीन राज्यमंत्री श्री सत्यपाल सिंह उसमें पूरे समय उपस्थित थे। श्री रामबहादुर राय ने इसे शिक्षा पर आयोजित ''उपनिषद'' की संज्ञा दी और वहीं उद्घोष किया कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर पुनः शिक्षा मंत्रालय किया जाना चाहिये। 400 कुलपतियों सहित पूरे सभागृह ने 'ओम' की ध्वनि के साथ उनके इस उद्घोष का समर्थन किया। पिछले कुछ वर्षों में शिक्षा पर चिंतन के लिये आयोजित यह सबसे बड़ा सम्मेलन था।

मंत्रालय के नाम का परिवर्तन तो एक प्रतीकात्मक परिवर्तन है। इसके साथ ही परिवर्तन के कई ऐसे सूत्र हैं जिनका समावेश शिक्षा नीति में है। ये परिवर्तन युगानुकूल है तथा भारत केन्द्रित है। इन परिवर्तनों के माध्यम से हम एक ऐसे आत्मनिर्भर भारत को बनता देख सकते हैं, जहां नौकरी पाने के बजाय नौकरी देने की लालसा ज्यादा प्रबल है।

आज जब हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रस्ताव में मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदल कर शिक्षा मंत्रालय किये जाने का समावेश देखते हैं तो 2018 की उस उपनिषद् की याद बरबस आ ही जाती है।

मंत्रालय के नाम का परिवर्तन तो एक प्रतीकात्मक परिवर्तन है। इसके साथ ही परिवर्तन के कई ऐसे सूत्र हैं जिनका समावेश शिक्षा नीति में है। ये परिवर्तन युगानुकूल है तथा भारत केन्द्रित है। इन परिवर्तनों के माध्यम से हम एक ऐसे आत्मनिर्भर भारत को बनता देख सकते हैं, जहां नौकरी पाने के बजाय नौकरी देने की लालसा ज्यादा प्रबल है। हम एक ऐसा भारत बनता देख सकते हैं, जिसकी युवा शक्ति भारत ही नहीं, समूचे विश्व को दिशा और ऊर्जा दोनों प्रदान करेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कुछ विशेषताओं का उल्लेख करना यहां समीचीन होगा।

लचीलापनः

शिक्षा की संरचना में लचीलापन अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षा नीति में 5-3-3-4 की रचना प्रस्तुत की है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा को भी जोड़ा गया है। 9-12 को एकत्र सोचा गया है। इस स्तर पर विषय चुनाव में लचीले विकल्प प्रदान किए गए हैं। विज्ञान, वाणिज्य, कला शखाओं में भेद को मिटा कर मिश्रित विषय चयन का विकल्प भी रखा गया है। इससे ज्ञान के मुक्त प्रवाह की संभावना बढ़ेगी और रचनात्मकता भी प्रेरित होगी।

भारतीय भाषाः

शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं के महत्व को अधोरेखित अवश्य किया है। उच्च शिक्षा भी भारतीय भाषाओं में उपलब्ध हो, ऐसी अनुशंसा नीति करती है। यह क्रांतिकारी है। अभियांत्रिकी, चिकित्सा जैसे व्यावसायिक पाठ्यक्रमों सहित सभी पाठ्यक्रमों में

भारतीय भाषाओं का विकल्प उपलब्ध कराना आवश्यक है। इससे प्राथमिक कक्षाओं में भारतीय भाषाओं का महत्व बढ़ जाएगा। भाषा नीति में शास्त्रीय भाषा का उल्लेख तो है किंतु उसकी परिभाषा स्पष्ट नहीं है। संस्कृत केवल अनेक भाषाओं में से एक न होकर सभी भाषाओं के शुद्ध अध्ययन में उसका महत्व सर्वविदित है। इसे भविष्य में भी ध्यान रखा जाना चाहिये।

नेशनल रिसर्च फाउंडेशनः

राष्ट्रीय अनुसंधान संगठन एक क्रांतिकारी संकल्पना है जिसके अंतर्गत उच्च शिक्षा में अनुसंधान को नई गति मिलेगी। इससे समाजोपयोगी, उद्देश्यपूर्ण और परिणामकारी अनुसंधान होगा। इससे भारत केन्द्रित अनुसंधान तथा मौलिक शोध, दोनों को प्रोत्साहन मिलेगा।

शिक्षक की अस्मिताः

शिक्षक का सम्मान भारत में हमेशा से रहा है। गत कुछ वर्षों में कुछ प्रमाण में सम्मान कम होता प्रतीत हो रहा है। शिक्षकत्व समाज में पुनः प्रतिष्ठित होगा तो समाज समर्थ बनेगा। इस हेतु शिक्षा नीति में दो उपाय सुझाये हैं - अध्यापक शिक्षा का व्यावसायिक स्वरूप तथा अनुबंध नियुक्ति पूर्ण प्रतिबंध। वर्तमान में अध्यापक बनना सबसे अंतिम विकल्प के रूप में देखा जाता है। शिक्षा नीति में कहा है कि दो वर्ष के पाठ्यक्रम को त्वरित बंद किया जाए और केवल चार वर्ष का एकीकृत पाठ्यक्रम चलाया जाए, जिससे बारहवीं के बाद संकल्पबद्ध छात्र ही अध्यापन शिक्षा में प्रवेश लें। वर्तमान में शिक्षाकर्मी, गुरुजी के नाम से दिहाड़ी शिक्षक हैं, वे काम तो शिक्षक का करते हैं किंतु वेतन बहुत कम मिलता है। अतः इस प्रावधान को बंद करना भी स्वागतयोग्य है। शिक्षक की प्रतिष्ठा बढ़ाने में यह एक प्रभावी उपाय है।

व्यावसायिक शिक्षा एवं कौशल विकासः

कौशल शिक्षा के नाम पर पूरे देश में बहुत बड़ा प्रपंच खड़ा हुआ है किंतु औपचारिक शिक्षा में उसे पर्याप्त स्थान नहीं है। शिक्षा नीति में शालेय शिक्षा में ही व्यावसायिक शिक्षा भी जोड़ा गया है। 9वीं से 12वीं के स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को मुख्य शिक्षा का भाग बनाया गया है। इससे आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना को भी बल मिलेगा। इससे श्रम की महत्ता स्थापित होगी और कौशल को सामाजिक प्रतिष्ठा भी मिलेगी।

वर्तमान में अध्यापक बनना सबसे अंतिम विकल्प के रूप में देखा जाता है। शिक्षा नीति में कहा है कि दो वर्ष के पाठ्यक्रम को त्वरित बंद किया जाए और केवल चार वर्ष का एकीकृत पाठ्यक्रम चलाया जाए, जिससे बारहवीं के बाद संकल्पबद्ध छात्र ही अध्यापन शिक्षा में प्रवेश लें। वर्तमान में शिक्षाकर्मी, गुरुजी के नाम से दिहाड़ी शिक्षक हैं, वे काम तो शिक्षक का करते हैं किंतु वेतन बहुत कम मिलता है।

शिक्षण विधिः

वर्तमान में अध्येता केंद्रित, (learner centric) बालक केंद्रित (Child centric) शिक्षा की चर्चा होती है। इस हेतु अनेक उपाय पूर्व में किए गए हैं। लेकिन उसमें आशातीत सफलता नहीं मिली है। हमारी शिक्षा अभी भी उसी रूढ़िवादी ढांचे से जकड़ी है। भारत का आदर्श अध्ययन केंद्रित (Learning Centric) तथा शिक्षक आधारित (teacher based) शिक्षा है। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इन दोनों बातों को महत्व दिया गया है। अध्ययन का दायित्व विद्यार्थी का है। शिक्षक तो मार्गदर्शक की भूमिका में होता है। पाठ्यक्रम निर्धारण की जिम्मेवारी शिक्षकों पर दी गई है। यदि विद्यार्थी, शिक्षक और अभिभावक सभी अपनी भूमिकाओं का सही निर्वाह करेंगे तो गुरुकुल जैसी आदर्श शिक्षा संभव हो सकेगी।

समाज पोषणः

भारत में सदैव शासन मुक्त शिक्षा व्यवस्था की बात की गई है किंतु इसका अर्थ वर्तमान में निजीकरण से नहीं रहा है। शिक्षा सदा ही समाज का दायित्व रहा है। अतः शिक्षा व्यवस्था समाज पोषित हो, ऐसी अपेक्षा की जाती रही है। शिक्षा नीति में प्रशासन में समाज के सहभाग की व्यवस्था की गई है।

वित्त विपुलताः

अनेक वर्षों से विभिन्न संगठन यह मांग करते रहे हैं कि शिक्षा मद में सरकार के व्यय को जीडीपी के 6 प्रतिशत तक बढ़ाया जाना चाहिये। इस बात का संज्ञान लेते हुए नीति में समुचित आर्थिक व्यवस्था की बात की है। व्यापारिक संस्थानों को भी सीएसआर कॉरपोरेट सोशल रिस्पांसिबिलिटी के माध्यम से शिक्षा में योगदान करने का प्रावधान विधि में सुधार द्वारा करने की बात नीति में की गई है। यदि उचित राजनीतिक इच्छाशक्ति के साथ नीति को क्रियान्वित किया जाता है तो शिक्षा के क्षेत्र में विपुल मात्रा में वित्त की उपलब्धता हो सकेगी और सभी शिक्षकों को नियमित करने जैसे क्रांतिकारी उपायों को लागू किया जा सकेगा।

वैश्विकताः

भारत में ज्ञान के क्षेत्र में कभी सीमाओं का निर्धारण नहीं किया गया। हमारे शिक्षक सारे विश्व में शिक्षा प्रदान करते रहे हैं और सारे विश्व के जिज्ञासु भारतीय विश्वविद्यालयों में आकर ज्ञान प्राप्त करते रहे हैं। विदेशी शासन के बाद इस स्थिति में परिवर्तन हुआ और हम अपने राजनैतिक सीमाओं में सिमट गए। वर्तमान में भारतीय विश्वविद्यालयों को विदेशों में शिक्षा देने का अधिकार नहीं है। विदेशी छात्रों के प्रवेश की भी अत्यंत सीमित संभावना अभी भारत के विश्वविद्यालयों में है। शिक्षा नीति सीमाओं को खोलती है। विदेशी विश्वविद्यालयों का भारत में स्वागत करने के साथ ही भारतीय विश्वविद्यालयों के विदेशों में परिसर खोलने की बात शिक्षा नीति ने की है।

राष्ट्रीय पाठ्यक्रमः

शालेय स्तर पर राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की अनुशंसा स्वागतयोग्य है। इसके लिये राष्ट्रीय पाठ्य सामग्री का निर्माण भी होगा। उच्च शिक्षा तक सभी वर्ष विशेष विषयों के साथ आधार पाठ्यक्रम (फाउंडेशन कोर्स) शिक्षा की समग्रता के लिए आवश्यक है। चाहे जिस भी विषय के विशेषज्ञ हमें बनाने हों, कुछ मूलभूत बातें सभी के लिए अनिवार्य होती हैं। देश का इतिहास, भूगोल, उसकी परंपराओं का ज्ञान, साथ ही सामान्य नागरिक नियम-पर्यावरण, स्वच्छता के

नियम आदि का भी शिक्षा के औपचारिक रूप में प्रावधान होना आवश्यक है। समय का मूल्य, समय का नियोजन, कठोर समय पालन जैसे विषय भी इस आधार पाठ्यक्रम का अंग बनने चाहिए।

भारत केन्द्रित पाठ्यक्रमः

इसी के अंतर्गत देश के सांस्कृतिक आध्यात्मिक ज्ञान के बारे में पाठ्यक्रम की बात भी शिक्षा नीति में की गई है। वर्तमान में उत्तर प्रदेश में 'राष्ट्र गौरव' नाम से इस प्रकार की पुस्तक शालेय स्तर पर पाठ्यक्रम का अंग है। शिक्षा नीति में भारत की ज्ञान परंपरा, गौरव बिंदु, ज्ञानिक परंपरा आदि को सम्मिलित कर एक 'भारत बोध' जैसे पाठ्यक्रम हर स्तर पर समाविष्ट किया जा सकता है।

पारदर्शी गुणवत्तापूर्ण व्यवस्थापनः

व्यावसायिक पाठ्यक्रमों (Professional courses) के नियमन हेतु बने - MCI, ICAR, BCI, NCTE जैसी संस्थाएं वर्तमान शिक्षा क्षेत्र के व्यापार और भ्रष्टाचार का केंद्र बन गई हैं। शिक्षा नीति में इन संस्थाओं की भूमिका में पूर्ण परिवर्तन सुझाया है। ये संस्थाएं व्यावसायिक मानक निर्धारण संस्था (professional standards setting body - PSSB) बनें, नियंत्रक नहीं, इसका ध्यान रखा जाना आवश्यक है।

उद्योग का सहभागः

वित्त विपुलता हेतु आर्थिक योगदान के साथ ही शैक्षिक रूप से भी उद्योग जगत का सहभाग शिक्षा में हो, ऐसी मंशा नीति में है। पाठ्यक्रम निर्धारण, अनुसंधान तथा शिक्षकों को कार्यानुभव जैसे उपायों से उद्योग जगत को शैक्षिक गतिविधि में भागीदार बनाकर उच्च शिक्षा को अधिक व्यावहारिक बनाया जा सकता है।

रचनात्मकताः

इस शिक्षा नीति में विद्यार्थी की रचनात्मकता को प्रोत्साहन देने के लिये विशेष प्रावधान किये गये हैं। इसमें शिक्षा व्यवस्था में आ रही जड़ता और एकरसता को तोड़ते हुये रचनात्मक मेधा और प्रतिभा को प्रोत्साहन मिलने की संभावना बनती है। इसे मूर्त रूप तभी मिल सकेगा जब इसका क्रियान्वयन अच्छी तरह से हो तथा विगत डेढ़ सौ वर्षों से रूढ़िवादी सोच को बदला जाये।

कला और संस्कृति को महत्वः

वैसे तो मंत्रालय का नाम बदलने की प्रक्रिया को पूर्णता मिल जाती, यदि मंत्रालय का नाम बदलकर ''शिक्षा और संस्कृति मंत्रालय'' किया जाता। विगत वर्षों में शिक्षा का संस्कृति से संबंध दूर होता चला जा रहा था। संस्कृति मात्र औपचारिकता के लिये ही या अतिरिक्त कार्य के रूप में ही शिक्षा के साथ बची थी। अति व्यावसायिकता तथा व्यावहारिकता मूलक शिक्षा, संस्कृति और संस्कार की समझ विकसित करने में अक्षम साबित हो रही थी। इस शिक्षा नीति में संस्कृति के मर्म को समझते हुये शिक्षा के साथ संस्कृति का समन्वय स्थापित करने की कोशिश की गई है। आशा की जानी चाहिये कि संस्कार और मूल्य बोध देने वाली शिक्षा का उद्भव होगा और इससे भारतीय समाज में हम सकारात्मक परिवर्तन देख पायेंगे।

होलिस्टिक आर्ट्स जैसी विधा को प्राथमिकता से उभारा गया है। साथ ही सॉफ्ट स्किल्स पर भी खासा जोर है। ये शब्द लुभाने वाले ही बन कर रह जायेंगे यदि उनके मर्म तक जाकर सचमुच उस भावना से क्रियान्वयन नहीं हुआ तो। इसलिये आवश्यक होगा कि सरकारों और समाज का शिक्षा की ओर देखने का नजरिया बदले।

स्वायत्तताः

इस नीति में शिक्षा व्यवस्था को स्वायत्त बनाने पर जोर दिया गया है। अब तक जिन प्राधिकरणों के माध्यम से काम हो रहा था, उन्हें सशक्त और स्वायत्त बनाकर ही इस नीति का प्रभावी क्रियान्वयन हो सकता है। स्कूल एवं उच्च शिक्षा, दोनों स्तरों पर अधिकाधिक स्वायत्तता मिले और वह स्वच्छंदता में न बदले, ये दोनों ही बातें आवश्यक हैं। शिक्षा एक संवेदनशील विषय है और इसमें स्वतंत्र वैचारिक प्रवाह आवश्यक है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि यह प्रवाह द्वंद्व में न बदले। इसलिये इस नीति के क्रियान्वयन में जितनी स्वायत्तता प्राप्त होगी, उतनी ही यह नीति प्रभावकारी होगी।

स्कूल एवं उच्च शिक्षा, दोनों स्तरों पर अधिकाधिक स्वायत्तता मिले और वह स्वच्छंदता में न बदले, ये दोनों ही बातें आवश्यक हैं। शिक्षा एक संवेदनशील विषय है और इसमें स्वतंत्र वैचारिक प्रवाह आवश्यक है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि यह प्रवाह द्वंद्व में न बदले। इसलिये इस नीति के क्रियान्वयन में जितनी स्वायत्तता प्राप्त होगी, उतनी ही यह नीति प्रभावकारी होगी।

कला और सामाजिक विषय के राष्ट्रीय महत्व के संस्थानः

कला, साहित्य में रुचि होते हुए भी केवल सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण अनेक छात्र आईआईटी में प्रवेश लेते हैं। मौलिक विज्ञान के प्रति छात्रों का रुझान बढ़ाने हेतु 10-15 वर्ष ISER, NISER जैसी संस्थाओं का प्रारंभ किया गया। इस शिक्षा नीति में कला क्षेत्र में इस प्रकार के राष्ट्रीय महत्व के संस्थान स्थापित करने का निर्णय लिया गया है। Indian Institute of liberal Arts – IILA तथा अनुवाद के लिए 'Indian Institute of Translation & Interpretation – IITI का उल्लेख नीति में है।

इस शिक्षा नीति की विशेषता है कि इसमें सभी स्तरों पर भारत को केंद्र में रखा गया है। भारत की परिस्थितियों के अनुसार नीति बनाई गई हैं। वैश्विक स्तर तथा प्रतिस्पर्धा की चर्चा तो है किंतु विश्व में स्थान प्राप्त करने के लिए अंधानुकरण की बात नहीं की गई है। वैश्विक बातों को देशानुकूल कर स्वीकार करने की संभावना इस नीति में है।

यह नीति एक युगांतरकारी कदम है जो भारत को उत्कर्ष और उन्नति की ओर ले जायेगा। आशा की जानी चाहिये कि इसका क्रियान्वयन उसी भावना से हो जिस भावना से यह नीति बनी है। यदि ऐसा होता है तो हम निश्चित ही एक दैदीप्यमान भारत का सपना साकार होते देख पायेंगे।

(शिक्षाविद् और साहित्यकार डॉ. जोशी पूर्व कुलपति और सम्प्रति इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव हैं)
Sjoshi09@yahoo.com

परिवार में कांग्रेस

राहुल गांधी से गहरी मित्रता के बावजूद सचिन पायलट ने असहमति का स्वर इतना जोर से गूंजा दिया है कि कांग्रेस में कोई भी अपने आपे में नहीं है। इतना बड़ा भूचाल बहुत दिनों बाद देखा जा रहा है। एक बड़ी चुनौती उपस्थित हो गई है। वह जमीन से आसमान तक फैली है और नेतृत्व का उपहास कर रही है।

रामबहादुर राय

सचिन पायलट ने सोनिया कांग्रेस में नया इतिहास रच दिया है। वह कर दिखाया, जो उनके पिता राजेश पायलट सोचते तो थे पर कर नहीं सके। वह घटना आज बड़ी प्रासंगिक हो गई है। कांग्रेस में अध्यक्ष का चुनाव हो रहा था। वे भी उम्मीदवार थे। उन्हें आलाकमान का निर्देश मिला कि अधिकृत उम्मीदवार के पक्ष में अपना नाम वापस ले लें। वैसा ही किया। पर उनका मन अफसोस के सागर में गोते लगाने लगा। उससे मुक्ति पाने के लिए वे पूर्व प्रधानमंत्री और इंदिरा गांधी के जमाने के मशहूर युवा तुर्क चंद्रशेखर के पास पहुंचे। पूरी बात बताई। फिर पूछा कि आप कैसे खुलकर अपनी असहमति व्यक्त कर पाते थे? इसका राज चंद्रशेखर ने उस दिन जिस तरह समझाया, राजेश पायलट को कांग्रेस की मूल बिमारी समझ में आ गई। चंद्रशेखर ने उनसे कहा कि असहमति व्यक्त करने में कोई बाधा नहीं है। यह मानसिक अवस्था है। ऐसा करने की शर्त सिर्फ इतनी होती है कि जो ऐसा करता है, उसे पार्टी और सरकार से अपने लिए कोई उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। इसका संबंध वैचारिक प्रतिबद्धता से भी है। जो सोचते हैं उसे बोलने के निश्चय से है।

राहुल गांधी से गहरी मित्रता के बावजूद सचिन पायलट ने असहमति का स्वर इतना जोर से गूंजा दिया है कि कांग्रेस में कोई भी अपने आपे में नहीं है। इतना बड़ा भूचाल बहुत दिनों बाद देखा जा रहा है। एक बड़ी चुनौती उपस्थित हो गई है। वह जमीन से आसमान तक फैली है और नेतृत्व का उपहास कर रही है। चुनौती दोहरी है। सिर्फ असहमति नहीं जताई है, बल्कि नेतृत्व पर पूरा प्रश्न खड़ा कर दिया है। जो बयान

दिया है, वही दोहरी चुनौती का प्रतीक है। सचिन पायलट ने कहा है कि वे भाजपा में नहीं जा रहे हैं। इसी से कांग्रेस नेतृत्व की उलझन ज्यादा बढ़ी है। अगर वे भाजपा में जाने का मार्ग चुनते तो उन्हें खारिज कर देने में कांग्रेस को एक क्षण भी नहीं लगता। प्रश्न यह नहीं है कि सचिन पायलट क्या करेंगे। अब तक जो किया है, उसे समझ लें तो भविष्य की उनकी दिशा के बारे में भम्र नहीं रहेगा। सचिन पायलट ने प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष पद ठुकराया है और राजस्थान सरकार के उपमुख्यमंत्री की कुर्सी को त्याग दिया है। क्या अपनी असहमति का इतना बड़ा मूल्य किसी ने कांग्रेस में अब तक चुकाया है? यह प्रश्न मामूली है, कम महत्व का है कि वे ममता बनर्जी, जगनमोहन रेड्डी की राह पर चलेंगे?

सचिन पायलट की उम्र इस समय 43 साल है। 26 साल की उम्र में वे लोकसभा में पहुंच गए थे। 32 साल की उम्र में केंद्र में मंत्री हो गए थे। 37 साल की उम्र में राजस्थान कांग्रेस के अध्यक्ष हो गए थे। वसुंधरा राजे की प्रतापी सत्ता को चुनौती दी। चुनाव में कांग्रेस को विजय दिलाई। वे ऐसा कर सके क्योंकि सचिन पायलट सामाजिक पूंजी का उत्तराधिकार बखूबी संभाल सके। ऐसे हैं सचिन पायलट। दूसरी तरफ राहुल गांधी ने गांठ की पूंजी भी गंवा दी। नेहरू वंश की सामाजिक पूंजी के रक्षक और संवर्द्धक बनने के बजाए उसे लूटे जाते देखते रह रहे हैं। सचिन पायलट जैसा राजनीतिक नेता जब असहमति व्यक्त करने की ठान लेता है तो उसका वह मार्ग भी जानता है और मंजिल भी। कोई इसे मात्र महत्वाकांक्षा की दृष्टि से देखे तो वह भूल करेगा। आखिर सचिन पायलट को सक्रिय राजनीति में ढेड़ दशक से ज्यादा का अनुभव हो चुका है। क्या यह अवधि कम है? इसलिए यह अटकल लगाना व्यर्थ है कि क्या वे कांग्रेस में वापस आएंगे? उनकी वापसी को रोकने के दो इंतजाम हो गए दिखते हैं। अशोक गहलोत और दिल्ली में इस पर सहमति दिख रही है। अशोक गहलोत 'जादूगर' रहे हैं और उस हुनर को इस बार फिर अपने लिए आजमाया है। लेकिन कांग्रेस का भारी नुकसान कर दिया है। आलाकमान अशोक गहलोत की जादूगरी में आ गया है। वह भूल ही गया है कि कोई राजनीतिक दल राष्ट्रीय स्तर पर मजबूत, लोकप्रिय, संवादी और सक्षम नेतृत्व जब देने की क्षमता रखता है तो राज्यों में इस तरह की समस्या पैदा नहीं होती। सोनिया कांग्रेस में आलाकमान तो है पर नेतृत्व की क्षमता का अभाव है। राजस्थान ने उस पर निशान लगाकर सबको बता दिया है। इस घटना से एक बात और स्पष्ट हुई है कि कांग्रेस का नेतृत्व मात्र अपनी वैधता के लिए चिंतित है। अपने किले में ही कैद है।

इस तरह राजस्थान की घटना ने कांग्रेस के सामने अस्तित्व का संकट खड़ा कर दिया है। क्या वह खंडहर पार्टी बन जाएगी और याद किया जाएगा कि इसकी इमारत कभी बहुत बुलंद थी! जिस तरह बड़े-बड़े नेता पार्टी छोड़ रहे हैं, उससे तो यही लगता है कि यह एक दिन खंडहर की विरानी में चली जाएगी। इस समय मीडिया में एक सिलसिला चल रहा है। उसमें कांग्रेस के मौजूदा संकट को समझने-समझाने के प्रयास हो रहे हैं। लोकतंत्र के इस चौथे अखाड़े में उतना ही जोर-शोर से बौद्धिक मल्लयुद्ध छिड़ा हुआ है, जितना कांग्रेस में दिख रहा है। अब तक जो लिखा गया है और लिखा जा रहा है, उसे पढ़ें तो तीन नजरिए सामने आते हैं। पहले में कांग्रेस को कांग्रेस की नजर से देखने-दिखाने का प्रयास है। इसमें कांग्रेस के नेता बढ़ चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं। संजय झा कल तक कांग्रेस के प्रवक्ता थे। अब उन्हें निलंबित कर दिया गया है। उनका अपना विश्लेषण समय-समय पर टाइम्स ऑफ इंडिया में छप रहा है। कांग्रेस से उनके निलंबन का एक कारण यह भी है।

सचिन पायलट की उम्र इस समय 43 साल है। 26 साल की उम्र में वे लोकसभा में पहुंच गए थे। 32 साल की उम्र में केंद्र में मंत्री हो गए थे। 37 साल की उम्र में राजस्थान कांग्रेस के अध्यक्ष हो गए थे। वसुंधरा राजे की प्रतापी सत्ता को चुनौती दी। चुनाव में कांग्रेस को विजय दिलाई।

इससे एक बड़ा प्रश्न प्रवक्ता बिरादरी पर जहां खड़ा हो रहा है, वहीं कांग्रेस के चरित्र पर भी वह प्रश्न है। वह यह कि क्या कांग्रेस में अभिव्यक्ति की कोई स्वतंत्रता है? लोकतंत्र का दूसरा नाम व्यक्ति की मौलिक स्वतंत्रता का खुला अवसर होता है। कांग्रेस ने जब 45 साल पहले देश पर तानाशाही थोपी, उससे पहले उसने पार्टी में उसे कायम किया। संजय झा को यह अब समझ में आया है। वे जो संघर्ष कर रहे हैं, वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से भी उंचा इसलिए है क्योंकि वे कांग्रेस को सुधारने और संवारने के लिए आवाज दे रहे हैं। संजय नाम के चमत्कार से कौन अपरिचित होगा!

इसी क्रम में मणि शंकर अय्यर का जिक्र जरूरी हो जाता है। वे अतिपरिचय के मारे हुए हैं। राजीव गांधी के कभी दिल और दिमाग होते थे। अब राहुल गांधी पर व्यंग्य के बाण चला रहे हैं। मानो कह रहे हैं कि मुझे कांग्रेस से निकालो तो जानूं। उनका एक लेख इंडियन एक्सप्रेस में छपा है। वह पढ़ने लायक है। उसमें उन्होंने एक मार्मिक प्रश्न उठाया है। क्यों वे नेता कांग्रेस छोड़ रहे हैं जो राहुल गांधी के बहुत यार थे। उन्होंने एक शब्द प्रयोग किया है, जो सिक्के की तरह चल निकलेगा। वह है-प्रियंका गांधी वाड्रा। यह बहुत सोच समझकर उन्होंने लिखा होगा। दूसरे प्रकार के लेखन में वे लोग हैं जो इसे वंशवादी राजनीति के संदर्भ में देख रहे हैं। इसी दृष्टि से उन लोगों ने अपने लेख में तथ्य और विश्लेषण दिए हैं। जैसे पवन वर्मा और राकेश सिन्हा। इनके लेख में पंडित नेहरू को कांग्रेस की इस दुर्गति के लिए ऐतिहासिक रूप से दोषी ठहराया गया है। पवन वर्मा ने 1959 में इंदिरा गांधी के अध्यक्ष बनने का उल्लेख कर अपनी बात कही है। उसे ही लोकतंत्र के साथ विश्वासघात भी बताया है। वहीं राकेश सिन्हा ने पंडित नेहरू को एकाधिकारी नेता सिद्ध करने के लिए 1951 की उस घटना का जिक्र किया है, जिसमें पंडित नेहरू ने स्वयं कांग्रेस अध्यक्ष बनने के लिए पुरूषोत्तम दास टंडन को हटाया था। तीसरे प्रकार के लेखन में कांग्रेस को जिंदा करने के लिए उपाय सुझाए जा रहे हैं। इस श्रेणी में पत्रकार हरीश खरे का लेख उल्लेखनीय है। उन्होंने उदाहरणों से बताया है कि कांग्रेस समन्वय और सहभागिता के दो पहिए पर चलती रही है। जब इसमें कमी

आती है तो उसकी गाड़ी पटरी से उतर जाती है। हर लेख में यह अनिवार्य तथ्य उजागर हुआ है कि कांग्रेस को जिंदा रहने के लिए नेहरू वंश के बाहर अपनी जड़ खोजनी होगी। क्या सोनिया गांधी ऐसा करने देंगी?

कांग्रेस के इतिहास में सचिन पायलट के विद्रोह जैसी घटना पहली नहीं है। हां, ऐसा बहुत दिनों बाद हुआ है। लेकिन ऐसे उदाहरण अनेक हैं। टूटने, बंटने और बिखरने की राजनीतिक घटनाएं कांग्रेस के 135 साल के इतिहास में बहुत हैं। उसकी लंबी सूची बनाई जा सकती है। उन घटनाओं में एक समानता रही है। वह यह कि जब भी ऐसा हुआ तो मतभेद के गुदे वैचारिक होते थे। असहमति जब इस हद तक हो जाती थी कि पार्टी में रहना विचार के स्तर पर आत्मधाती लगता था, तब पार्टी में टूटन होती थी। यह भी होता था कि एक नेता या एक समूह पार्टी से अलग हो जाता था। वह इसका कारण भी बताता था। आजादी के ठीक बाद की ही घटनाओं को अगर देखें तो अगले ही साल इसकी शुरूआत हो गई। समाजवादी नेता कांग्रेस से बाहर निकले। जवाहरलाल नेहरू को समाजवादी खेमा अपना नेता मानता था। उस खेमे को कांग्रेस से बाहर जाना पड़ा। जिसका नेतृत्व जयप्रकाश नारायण, डॉ. राममनोहर लोहिया, आचार्य नरेंद्र देव कर रहे थे। वे कांग्रेस से बाहर इसलिए गए क्योंकि उन्हें लगा कि यह समाजवादी नहीं रह सकेगी। उस दौर की कांग्रेस का नेतृत्व स्वयं जवाहरलाल नेहरू कर रहे थे। समाजवादी नेताओं से उनके निजी, पुराने और गहरे संबंध थे। डॉ. राममनोहर लोहिया ने समाजवादी आंदोलन के इतिहास में इसका बड़े चटकारे लेकर उल्लेख किया है। उसी दौर में थोड़े दिनों बाद आचार्य जेबी कृपलानी ने भी यह समझकर कांग्रेस छोड़ दी कि यह गांधी के रास्ते से भटक गई है।

कांग्रेस में टूटन की दूसरी बड़ी घटना सत्ता संघर्ष में हुई। उसके केंद्र में इंदिरा गांधी थीं। जिन नेताओं ने उन्हें प्रधानमंत्री बनवाया था, उनको अपेक्षा थी कि इंदिरा गांधी उनके अनुभव और उम्र का सम्मान करेंगी। बजाए इसके इंदिरा गांधी ने उनको धीरे-धीरे हासिए पर पहुंचाना शुरू किया। नई पीढ़ी के नेताओं से उन पर सवाल दगवाए। तब टकराव बढ़ा। इसका एक मुद्दा भी उपस्थित हो गया क्योंकि डॉ. जाकिर हुसैन के निधन से राष्ट्रपति पद खाली हुआ। नए राष्ट्रपति के चुनाव पर कांग्रेस टूटी। मीडिया ने उस टूट को सिंडिकेट और इंडिकेट का नाम दिया। तब से कांग्रेस में टूटन का एक सिलसिला ही चल निकला है। हर टूटन का ब्योरा न तो जरूरी है और न यहां प्रासंगिक है। इतना ही बताना काफी है कि इंदिरा गांधी के कार्यकाल में कांग्रेस में टूटन एक बार नहीं, कई बार हुई।

इमरजेंसी के विरोध में जगजीवन राम ने कांग्रेस फॉर डिमोक्रेसी बनाई थी। उस दौर के भी ये उदाहरण बताते हैं कि वैचारिक असहमति और सत्ता के द्वंद से कांग्रेस में विभाजन हुए। पंडित नेहरू और इंदिरा गांधी ने अपनी लोकप्रियता चुनावों में दिखाई और प्रमाणित किया कि वे लोगों में सबसे बड़े नेता हैं। वे ही कांग्रेस को वोट दिला सकते हैं। सत्ता में पहुंचा सकते हैं। इस भाव दशा

राजीव-सोनिया दौरः कुछ बड़े नेताओं का जाना

इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सहानुभूति लहर में 400 से अधिक सीटें जीतने वाली कांग्रेस 1989 के चुनाव में 200 से भी कम सीटों पर सिमट गई। राजीव गांधी के नेतृत्व में पार्टी की इस हार में उन्हीं के मंत्रिमंडल में वित्त और रक्षा मंत्री रहे वीपी सिंह ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। टैक्स चोरी के मामलों में उन्होंने कुछ बड़े उद्योगपतियों के खिलाफ कारवाई की, तो बोफोर्स तोप खरीद घोटाले का मुद्दा घर घर तक पहुंचा दिया। इस चुनाव के बाद वे देश के प्रधानमंत्री बने।

राजीव गांधी की तरह सोनिया गांधी के अध्यक्ष रहते भी बगावत की घटनाएं हुईं। इनमें सबसे बड़े नेता शरद पवार हैं। पवार ने पहले भी कई जगह कहा है कि 1991 में सोनिया गांधी के 'वीटो' की वजह से वे प्रधानमंत्री नहीं बन पाए थे। तब इस कुर्सी पर नरसिंह राव पहुंचे थे। बाद में शरद पवार ने अपनी नई पार्टी नेशनलिस्ट कांग्रेस पार्टी (एनसीपी) बना ली। वैसे केंद्र में यूपीए की गठबंधन वाली सरकार में पवार की पार्टी शामिल हुई और आज महाराष्ट्र में भी शिवसेना के नेतृत्व वाली सरकार में कांग्रेस के साथ है।

कभी पश्चिम बंगाल कांग्रेस की तेज तर्रार नेता ममता बनर्जी पीवी नरसिंह राव सरकार में दो साल तक मंत्री भी रहीं। बंगाल में काम करने के नाम पर सरकार और बाद में 1998 में कांग्रेस पर माकपा के सामने हथियार डालने का आरोप लगाते हुए ममता ने अलग पार्टी बना ली। वर्ष 2011 के विधानसभा चुनावों से ही उनकी पार्टी तृणमूल कांग्रेस राज्य की सत्ता में है।

आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ. वाईएस राजशेखर रेड्डी की 2009 में हेलिकॉप्टर दुर्घटना में निधन के बाद उनके पुत्र वाईएस जगनमोहन रेड्डी अपनी लोकप्रियता पर भरोसा रखते थे। साल 2009 में लोकसभा पहुंचे जगह ने पहले 2010 में लोकसभा की सीट से इस्तीफा देकर उपचुनाव जीता। एक विधानसभा चुनाव में उन्हें नेता विपक्ष के पद से ही संतोष करना पड़ा, पर दूसरे निर्वाचन के बाद अब वे आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं। पूर्वी गोदावरी में मार्च 2011 में उन्होंने नई पार्टी वाईएसआर कांग्रेस बनाई थी। इस वाईएसआर का मतलब उनके पिता वाईएस राजशेखर रेड्डी से नहीं, बल्कि युवजन श्रमिक रायतू कांग्रेस से है।

ने कांग्रेस के दूसरे नेताओं की भंगिमा बदल दी। इस कारण कांग्रेस की मुख्य धारा पहले जवाहरलाल नेहरू और बाद में इंदिरा गांधी के ही नेतृत्व में बनी रही। कांग्रेस से निकली दूसरी पार्टियां इतिहास में समा गईं। यह भी हुआ कि जो अलग होते थे, वे भी कांग्रेस की सहायक धारा के रूप में एक समय बाद परिवर्तित हो जाते थे। इसीलिए उस दौर को डॉ. रजनी कोठारी ने कांग्रेस प्रणाली की संज्ञा दी थी।

भारतीय लोकतंत्र में कांग्रेस का एक प्रणाली बनना सकारात्मक था। राजनीतिक दल की दृष्टि से वह एक सामाजिक प्रयोग भी था। लोकतांत्रिक यात्रा में उस प्रयोग से बड़ी आशाएं थी। जिसे इमरजेंसी के पहले ही इंदिरा गांधी ने अपनी तानाशाही मनोदशा से नुकसान पहुंचाना शुरू कर दिया था। इमरजेंसी के लगते ही कांग्रेस के युवा तुर्क समूह को जेल में जब डाला गया तब तो वे कांग्रेस के बड़े नेता भी थे। चंद्रशेखर उस समय कांग्रेस कार्यसमिति के निर्वाचित सदस्य थे। उनका निर्वाचन इंदिरा गांधी की मर्जी के विपरीत हुआ था। उन्हें कब पार्टी से निकाला गया, यह वे लोग भी नहीं जानते। वे साधारण नेता नहीं थे। विचार की राजनीति के लिए जाने जाते थे। चंद्रशेखर, रामधन, मोहन धारिया, कृष्णकांत और अर्जुन अरोड़ा के नाम में युवा तुर्क का पंख लगा हुआ था। इमरजेंसी के बाद भी कांग्रेस कई बार टूटी और वह इंदिरा गांधी की निजी राजनीतिक पार्टी बन कर रह गई।

उस कांग्रेस प्रणाली में वैचारिक दरार तो इमरजेंसी में पड़ गई थी। लेकिन उसका विघटन शुरू हुआ जब राजीव गांधी ने कमान संभाली। संजय गांधी की जहाज दुर्घटना में मृत्यु और प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या का जो दुर्योग घटित हुआ, उससे राजीव गांधी पर कांग्रेस का भार आया। उनको राजनीतिक अनुभव नहीं था। जैसे सलाहकार मिले, वैसे उन्होंने कांग्रेस को बनाया। जिसमें विचार के तत्व नहीं थे,सत्ता का सहारा था। 1984 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को 413 सीटें जो मिलीं, वह राजीव गांधी के नेतृत्व का कमाल नहीं था। वह तो इंदिरा गांधी को देश की श्रद्धांजलि थी। राजीव गांधी की परीक्षा प्रधानमंत्री बनने के बाद शुरू हुई।

एक ईमानदार और योग्य वित्तमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने जो सवाल उठाए, वे ही राजीव गांधी की कसौटी बन गए। राजीव गांधी उस परीक्षा में खोटे साबित हुए। फिर तो लुढ़कते ही चले गए। लोकतंत्र भारतीय स्वराज यात्रा में एक उपलब्धि है। लेकिन ऊंचे पदों पर बैठे नेताओं का भ्रष्टाचार और पार्टी में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव ऐसी चुनौती है, जो यक्ष प्रश्न के रूप में कांग्रेस में तब से उपस्थित है। सत्तारूढ़ दल के रंगढंग से राजनीतिक दलों की संस्कृति बनती है। कांग्रेस ने ऐसा उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया कि वह चुनौती जो थी, उसका सामना करे और समाधान भी दे। नतीजा यह हुआ कि कांग्रेस खोखली होती चली गई। उसका संकट बड़ा संक्रामक है। अगर राजीव गांधी ने बोफोर्स सौदे में कमीशनखोरी की जांच को पटरी से न उतारा होता तो वे अपनी साख बचा ले जाते। वैसा हुआ नहीं। जो राजीव गांधी नहीं कर सके, उसे कर पाने की क्षमता न सोनिया गांधी में है और उनकी संतानों में है।

लेकिन कांग्रेस एक मानसिक ग्रंथि में उलझी हुई है। कांग्रेस का इसे टोटका भी समझा जा सकता है। वह कांग्रेस का मनोरोग बन गया है। कांग्रेस ने अपनी नियति नेहरू वंश से जोड़ लिया है। इसीलिए जब मणिशंकर अय्यर प्रियंका गांधी वाड्रा लिखते हैं तो उनका आशय यह होता है कि नेहरू वंश है कहां? जो भी हो, कांग्रेस को अब कांग्रेसी ही समझाने में लगे हैं कि एक राजनीतिक दल की नियति एक खानदान से नहीं जोड़ी जानी चाहिए। उसके बाहर की दुनिया बड़ी है। चुनावों के परिणाम और उसके आंकड़े भी इसी तर्क को पुष्ट करते नजर आ रहे हैं। 1998 का साल कांग्रेस के लिए आशाप्रद था। कारण कि एक साल पहले सोनिया गांधी ने कांग्रेस की सदस्यता ली थी। सीताराम केसरी को अपमानित कर अध्यक्ष पद से हटाया और स्वयं अध्यक्ष बनीं। उस साल लोकसभा के चुनाव थे। मीडिया के बड़े वर्ग ने भी कांग्रेसियों का हौसला बढ़ाया। मानो सोनिया गांधी के चुनाव अभियान में उतरने से कोई बड़ा चमत्कार होने वाला है। नतीजा आया तो पता चला कि दस साल पहले यानी राजीव गांधी के नेतृत्व में जो चुनाव लड़ा गया था, उसकी तुलना में कांग्रेस का जनाधार आधा हो गया है। दूसरी बार 2014 में और तीसरी बार 2019 में नेहरू वंश का राजनीतिक प्रभाव निरंतर कम होता गया है। जनाधार सिकुड़ रहा है। इन चुनावों ने यह साबित कर दिया कि नेहरू खानदान से कांग्रेस सत्ता में नहीं पहुंच सकती। प्रश्न है कि क्या कांग्रेस नेहरू खानदान के वगैर जिंदा रह सकेगी? यही प्रश्न उलट कर भी पूछें तो सही उत्तर मिल जाता है। जिसे सचिन पायलट ने सही समय पर सुन लिया है।

बीते सात सालों में कांग्रेस से नेताओं का निकलना जारी है। यह सिलसिला 2013 में शुरू हुआ। यह रुकने और थमने का नाम नहीं ले रहा है। कांग्रेसी सांसद, पूर्व मंत्री और राज्य कांग्रेस के पूर्व अध्यक्षों की कुल संख्या तीस से ज्यादा है, जो कांग्रेस से भाजपा में गए हैं। कांग्रेस नेतृत्व को इससे ही चौंकन्ना हो जाना चाहिए था। क्यों विचारधारा के विपरीत प्रवाह में कांग्रेसी जा रहे हैं। पूर्व विदेश मंत्री एस.एम. कृष्णा, ज्योतिरादित्य सिंधिया, राव इंद्रजीत सिंह, नारायण राने, शंकर सिंह बाघेला, विजय बहुगुणा, रीता बहुगुणा जोशी, जगदंबिका पाल, रवि किशन, रामदयाल उइके, एन वीरेंद्र सिंह, आईबोबी सिंह, प्रेम खांडू, हेमंत विस्वा, टोम बड़कन, जयंती नटराज, जीके वासन आदि के नाम हैं, जो कभी कांग्रेस में एक स्थान रखते थे। यह क्रम बना रहा तो कांग्रेस ए. ओ. ह्यूम के दौर में पहुंच जाएगी। जब कांग्रेस का सदस्य बनने के लिए दो शर्तें पूरी करनी होती थी। अच्छी अंग्रेजी आना चाहिए और अंग्रेजों के प्रति राजभक्ति संदेह से परे होना चाहिए। अब उसमें से दूसरी शर्त बदल गई है। सोनिया गांधी के प्रति निष्ठा ही सबसे बड़ी शर्त है। ऐसी कांग्रेस को एक उद्धारक चाहिए।

कांग्रेस में टूटन की दूसरी बड़ी घटना सत्ता संघर्ष में हुई। उसके केंद्र में इंदिरा गांधी थीं। जिन नेताओं ने उन्हें प्रधानमंत्री बनवाया था, उनको अपेक्षा थी कि इंदिरा गांधी उनके अनुभव और उम्र का सम्मान करेंगी। बजाए इसके इंदिरा गांधी ने उनको धीरे-धीरे हासिए पर पहुंचाना शुरू किया।

135 में नेहरू-गांधी 46 साल

कांग्रेस की स्थापना में ए. ओ. ह्यूम का मकसद ब्रिटिश सत्ता का राजनीतिक हित साधने का था। बाद में पार्टी आजादी के आंदोलन का हिस्सा बन गई। अलग बात है कि आजादी के बाद महात्मा गांधी ने कांग्रेस को खत्म करने का प्रस्ताव रखा था। ऐसा होने की जगह कांग्रेस ने जो दौर देखा, उसमें नेहरू-इंदिरा परिवार के ही पार्टी पर काबिज होने का नजारा है।

डॉ. प्रभात ओझा

सोनिया गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस जैसी भी है, उसे ए ओ ह्यूम के नेतृत्व में स्थापित संगठन से जोड़कर देखें,तो यह पार्टी पांच महीने बाद 28 दिसंबर को अपना 136 वां स्थापना दिवस मना सकती है। इसके पहले दिल्ली में कांग्रेस के वरिष्ठ नेता संदीप दीक्षित ने अपनी पार्टी में स्थायी अध्यक्ष की जरूरत बतायी है। उनका बयान ऐसे समय आया है, जब कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में सोनिया गांधी काम कर रही हैं। दीक्षित कहते हैं कि यह सही समय है कि हम एक स्थायी अध्यक्ष का चुनाव चयन अथवा निर्वाचन से कर लें। चयन से उनका आशय उस ढंग से है, जो अब परंपरा बन चुकी है। इस ढंग में सोनिया गांधी जिसे चाहेंगी, अध्यक्ष बन जायेगा। कारण यह कि सोनिया की इच्छा पर ही पार्टी कार्य समिति अपनी स्वीकृति दे देगी। निर्वाचन तो अब गये जमाने की बात हो चुकी है। संदीप दीक्षित भी निर्वाचन की वकालत करते नहीं दिखते। शायद उन्हें नेहरू-गांधी परिवार की कांग्रेस का भान पहले ही हो चुका है। वे स्वयं कभी कांग्रेस के धुरंधर नेता रहे उमाशंकर दीक्षित के पोते और दिल्ली की पूर्व मुख्यमंत्री शीला दीक्षित के पुत्र हैं। दीक्षित परिवार एक ही समय में एक साथ कितना सक्रिय रह सका, अलग मसला है। मुद्दा तो यह है कि संदीप दीक्षित फिर से राहुल गांधी को स्थायी अध्यक्ष बनाये जाने के पक्ष में दिखाई देते हैं।

सोनिया गांधी के पहले पार्टी के ताजा इतिहास में करीब तीन साल पहले राहुल गांधी को पार्टी अध्यक्ष बनाने की प्रक्रिया शुरू हुई थी। आम तौर पर यह प्रक्रिया अब गांधी परिवार के अनुकूल ही हुआ करती है। गांधी परिवार की इच्छा से कार्यसमिति के मनोनयन और महासमिति की अनुशंसा के बाद अधिवेशन की मुहर लगा करती है। बहरहाल, कांग्रेस महासमिति (आल इंडिया कांग्रेस कमेटी) और अधिवेशन, दोनों ही अब औपचारिक ही रह गये हैं। गांधी परिवार की इच्छा हुई और अध्यक्ष बदला। कार्यसमिति की मुहर लगना सुनिश्चित हुआ करता है। राहुल गांधी को जैसे तैसे अध्यक्ष बनने के लिए मनाया गया था। उन्हें जब तक कुछ बेहतर लगा, अध्यक्ष बने रहे। परिस्थितियां

बिगड़ीं तो कार्यसमिति बैठी ही थी परिवार में ही पद रखने को मंजूरी देने के लिए। लिहाजा अब सोनिया गांधी कार्यवाहक अध्यक्ष हैं। यह कार्यवाहक कब स्थायी में बदले, इसकी भी कोई सीमा नहीं है। जब गांधी परिवार चाहेगा, बात आगे बढ़ेगी। सच यही है कि कांग्रेस और नेहरू-गांधी परिवार अब कांग्रेस के पर्याय बन चुके हैं। ऐसे में 135 साल के इतिहास में यह परिवार 46 साल पार्टी पर काबिज रहा, यह जानना रोचक है।

28 दिसंबर 1885 को एक अंग्रेज प्रशासक ए ओ ह्यूम के नेतृत्व में देश की जरूरतों के हिसाब से ब्रिटिश सरकार को सुझाव देते रहने के गरज से कांग्रेस की स्थासपना की गई थी। ह्यूम से लेकर आज तक इस पार्टी के 88 अध्यक्ष बने और इस पद पर 61 व्यक्ति आसीन हो चुके हैं। राहुल 60 वें और सोनिया गांधी कांग्रेस की 61वीं अध्यवक्ष हैं। सबसे लंबे समय तक अध्यक्ष बने रहने का रिकॉर्ड सोनिया गांधी के पास ही है। राहुल गांधी से पहले वह 1998 में पहली बार कांग्रेस अध्य्क्ष बनीं थीं। साल 2017 तक इस पद पर रहकर वह गांधी नेहरू परिवार में सबसे लंबे समय तक अध्यक्ष बनी रहीं। दूसरे स्थान पर उनकी सास और देश की पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का ही नाम है। इंदिरा गांधी 1959 में दिल्ली के विशेष अधिवेशन में अध्यक्ष बनीं। तब वह साल भर इस पद पर रहीं। बाद में नीलम संजीव रेड्डी लगातार तीन अधिवेशनों में अध्यक्ष बने। इस तरह वह तीन साल तक इस पद पर रहे। आपातकाल के बाद 1978 में इंदिरा गांधी फिर जब अध्यक्ष बनीं, तो मृत्युपर्यंत 1984 तक पार्टी प्रमुख रहीं।

135 वर्षों की कांग्रेस में उसके प्रमुख पद पर नेहरू-गांधी परिवार का आसीन होना मोतीलाल नेहरू से शुरू होता है। यह तब की बात है, जब अध्यक्ष पद पर हर साल चुनाव होता था। कारण यह था कि वार्षिक अधिवेशन भी नियमित रूप से हुआ करते थे। नेहरू-गांधी परिवार की तीन पीढियां कम से कम दिखावे के तौर पर ही सही, इस प्रकिया से ही अध्यक्ष बनीं। इनमें मोतीलाल नेहरू, जवाहर लाल नेहरू और पहली बार 1959 में इंदिरा गांधी शामिल हैं। फिर बाद में इंदिरा गांधी तो लंबे समय तक प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष, दोनों पदों पर विराजमान रहीं।

प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के पिता और देश के प्रसिद्ध बैरिस्टर मोतीलाल नेहरू 1919 में पहली बार कांग्रेस अध्यक्ष बने। तब अधिवेशन अमृतसर में हुआ था। फिर वह 1928-29 के लिए कलकत्ता अधिवेशन में अध्यक्ष चुने गए। गांधी जी और तमाम वरिष्ठ नेताओं की इच्छा से ही सही, अगले ही साल लाहौर अधिवेशन ने वह मंजर दिखाया, जब मोतीलाल नेहरू ने अपने पुत्र जवाहर लाल नेहरू को पार्टी की कमान सौंपी। फिर तो जवाहर लाल नेहरू 1936, 1937, 1951, 1953 और 1954 यानी कुल छह बार पार्टी प्रमुख चुने गए। ये अधिवेशन क्रमशः लखनऊ, फैजपुर, दिल्ली, हैदराबाद और कलकत्ता में हुए थे।

पहली बार 1959 में दिल्ली के विशेष अधिवेशन में दिरा गांधी कांग्रेस अध्यक्ष बनीं। तब पिता देश के प्रधानमंत्री और पुत्री सत्तारूढ़ पार्टी की अध्यक्ष थीं। बाद में दिरा गांधी 1978में जब अध्यक्ष बनीं तो वह देश की प्रधानमंत्री भी थीं। इन दोनों पदों पर वह हत्या के दिन तक बनी रहीं। यह समय छह साल का था। इस तरह इंदिरा गांधी दो बार मिलाकर करीब सात साल पार्टी अध्यक्ष रहीं। इंदिरा गांधी के ठीक बाद उनके पुत्र राजीव गांधी प्रधानमंत्री बने। फिर उसी साल 1984 के मुंबई अधिवेशन में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। वह 1991 तक इस पद पर थे। इसी साल राजीव गांधी की हत्या हो गई।

राजीव गांधी की हत्यात के बाद कांग्रेस से नेहरू-गांधी परिवार की दूरी का समय शुरू हुआ। कहा तो यहां तक गया कि सोनिया गांधी काफी डर गई थीं। पहले सास और पति की हत्या के बाद वह सिर्फ अपने और अपने बच्चों की चिंता में लग गईं। यही वह दौर था, जब कांग्रेस की कीमत पर क्षेत्रीय दल मजबूत हुए। कांग्रेस से निकले नेताओं ने इन दलों के साथ मिलकर सरकार बनाई। हालांकि तभी कांग्रेस के पीवी नरसिंह राव ने भी कुछ दलों के साथ पूरे पांच साल तक सरकार चलाई। वे करीब चार साल तक कांग्रेस अध्यक्ष भी रहे। फिर सीताराम केसरी का नंबर आया।

1998 में बड़े नाटकीय ढंग से सोनिया गांधी का राजनीति में प्रवेश हुआ। तत्कालीन अध्यक्ष सीताराम केसरी को अपमानित होना पड़ा। फिर तो सोनिया 19 साल तक कांग्रेस अध्यक्ष रहीं। उनके नेतृत्व में पार्टी ने 2004 और 2009 का लोकसभा चुनाव भी जीता। वर्ष 2004 में तो वह प्रधानमंत्री पद की प्रबल दावेदार भी थीं। ऐन समय पर उन्होंने कई तरह की आशंकाओं को भांप कर प्रधानमंत्री का पद ठुकरा दिया।

1998 में बड़े नाटकीय ढंग से सोनिया गांधी का राजनीति में प्रवेश हुआ। तत्कालीन अध्यक्ष सीताराम केसरी को अपमानित होना पड़ा। फिर तो सोनिया 19 साल तक कांग्रेस अध्यक्ष रहीं। उनके नेतृत्व में पार्टी ने 2004 और 2009 का लोकसभा चुनाव भी जीता। फिर वह अध्यक्ष पद पर 19 साल तक रहीं। वर्ष 2004 में तो वह प्रधानमंत्री पद की प्रबल दावेदार भी थीं। ऐन समय पर उन्होंने कई तरह की आशंकाओं को भांप कर प्रधानमंत्री का पद ठुकरा दिया। इन परिस्थितियों में डॉ. मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री बने।

मनमोहन सिंह सरकार में सोनिया- राहुल का प्रभाव बना रहा। सरकार और पार्टी भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरती गई। उधर भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाले एनडीए को मजबूती मिली। नरेंद्र मोदी को पीएम उम्मीदवार बनाने के बाद तो भाजपा को जैसे पंख लग गए। छह साल से भी अधिक समय से मोदी प्रदानमंत्री हैं। कांग्रेस के सिकुड़ने के दौर में राहुल गांधी 2013 में उपाध्यक्ष और 2017 में अध्यक्ष बने। इस बीच कांग्रेस को जरूर कुछ उम्मीद बंधी थी, पर जल्द ही निराशा का समय शुरू हुआ। राहुल अजीब तरह के अध्यक्ष साबित हुए कि मन मान गया तो जिम्मेदारी ली और उचट गया तो चल दिए। यह कांग्रेस के प्रति गाधी परिवार की मनमानी ही कही जायेगी।

मां के बाद पुत्र और पुत्र के पलायन के बाद अब मां ने जिम्मेदारी संभाली है। देखते हैं कि संदीप दीक्षित जैसे नेताओं की मांग के बाद कांग्रेस अपने स्थायी अध्यक्ष की तलाश में किस ओर चलती है। वैसे मार्गरेट अल्वा जैसी नेता यह भी कहती हैं कि कांग्रेस कार्यसमिति में 60 प्रतिशत तक सदस्य 75 से 85 साल की उम्र वाले हैं। यह कांग्रे के अंदर ओल्ड गार्ड्स की बढ़ती दखल की ओर इशारा है। आज यह भी देखने की बात है कि 136 साल की कांग्रेस कितना जवान होगी।

मां-बेटे का जमीन घोटाला

गांधी परिवार ने ट्रस्ट को हड़प लिया है। यह काम योजनाबद्ध तरीके से किया गया। हालांकि ट्रस्ट से इस परिवार का कोई सरोकार नहीं था। वैसे ही जैसे नेशनल हेराल्ड से नहीं था। फिर भी उसकी संपत्ति पर गांधी परिवार ने कब्जा कर लिया। वहीं खेल तमिलनाडु कांग्रेस कमेटी चैरिटेबल ट्रस्ट के साथ भी हुआ। 20 हजार करोड़ रुपये की संपत्ति है ट्रस्ट के पास। उस पर परिवार ने गैर-कानूनी तरीके से कब्जा कर लिया है।

जितेन्द्र चतुर्वेदी

सोनिया गांधी ने चौंकाने वाला फैसला लिया है। उन्होंने मोती लाल वोरा को तमिलनाडु कांग्रेस कमेटी चैरिटेबल ट्रस्ट का ट्रस्टी नियुक्त किया है। वे पहले ऐसे ट्रस्टी होंगे जो तमिलनाडु से नहीं हैं। इसे लेकर चर्चा खूब है। प्रदेश कांग्रेस के लोगों का कहना है कि वरिष्ठ कांग्रेसी तो प्रदेश में भी हैं। उन्हें नियुक्त करना चाहिए था। हालांकि उन लोगों की मानें तो मोतीलाल वोरा को इसलिए लाया गया है ताकि ट्रस्ट की संपंति पर कांग्रेस नेतृत्व का सीधा नियंत्रण हो। ...

यह 'द हिन्दू' की खबर है जो 14 फरवरी 2015 को छपी थी। इसमें जो लिखा है, एस.गुरुमूर्ति उसी को बता रहे हैं। बस अंतर इतना ही है कि वे पूरे रहस्य से पर्दा हटा रहे हैं। इसलिए वे लिखते हैं... सोनिया गांधी ने आश्चर्यजनक निर्णय नहीं लिया। वह सोचा समझा निर्णय था ताकि ट्रस्ट की संपंति पर उनका पूरा नियंत्रण हो।... ट्रस्ट की संपंति एक दो रुपये तो है नहीं। 20 हजार करोड़ रुपये की है। उस पर कांग्रेस नेतृत्व ने कब्जा कर लिया है। इसकी किसी को कानों कान खबर नहीं थी। यह रहस्य तब खुला जब एस.गुरुमूर्ति ने लिखना शुरू किया। खबरों से तो किसी को हेराफेरी का अंदाजा भी नहीं था। हां उसमें संकेत जरूर था, पर अस्पष्टता नहीं थी। उसे गुरुमूर्ति ने सबके सामने रख दिया और कांग्रेस नेतृत्व का भांडा फूट गया।

मामला तमिलनाडु कांग्रेस कमेटी चैरिटेबल ट्रस्ट से जुड़ा है। यह 1958 में बना थे। बनाने वाले तमिलनाडु के तत्कालीन मुख्यमंत्री के.कामराज और रामनाथ गोयनका थे। इसे सामाजिक सरोकार के लिए बनाया गया था। तय हुआ था कि सर्वोदय और अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए, गरीबों के लिए कल्याणकारी योजनाओं को बढ़ावा देना है। कृषि, उद्योग, व्यापार, साहित्य और कला से जुड़ी शिक्षा पर काम करना है। गांव और कुटीर उद्योग पर ध्यान देना हैं। शोषित और वंचित के उत्थान के लिए प्रयास करना है। खादी को जनमानस के आर्थिक उन्नति का साधन बनाना है। इसी उद्देश्य के साथ ट्रस्ट का चलना तय हुआ।

इसके संचालन के लिए नियम बनाए गए। उसके हिसाब से ट्रस्ट में ट्रस्टी की नियुक्ति तमिलनाडु कांग्रेस कमेटी करती है। मतलब साफ है कि कांग्रेस अध्यक्ष की इसमें कोई भूमिका नहीं होती है। मगर सोनिया गांधी के रहते ऐसा मुमकिन कहां। वे तो सरकार की तरह कांग्रेस से जुड़ी सभी संस्थाओं को पर्दे के पीछे से चलाती हैं। शायद इसकी वजह यही है कि वे कांग्रेस को पारिवारिक पार्टी मानती हैं। यही वजह है कि अपने हिसाब हांकती है।

तमिलनाडु कांग्रेस चैरिटेबल ट्रस्ट उसकी ताजा मिसाल है। उसकी 20 हजार करोड़ की संपंति है। एस.गुरुमूर्ति का आरोप है कि सोनिया गांधी ने उस पर कब्जा जमा लिया है। उनकी मानें तो हड़पने का खेल 2009 में शुरू हो गया था। हालांकि शुरू हो गया था, लिखना ठीक नहीं होगा। वह इसलिए क्योंकि कायदे से तब हड़पने की प्रक्रिया पूरी हो चुकी थी। ऐसा कहने की वजह एस.गुरुमूर्ति का बयान है। वे कहते हैं... 2009 में ट्रस्ट के सभी ट्रस्टी से कहा गया कि वे राहुल गांधी से मिलें। उन्हें निर्देश दिया गया था कि राहुल गांधी जहां कहें, वहां हस्ताक्षर कर दें। ट्रस्ट का एक सदस्य उस समय देश में नहीं था। उसे जब इस बात की सूचना मिली तो उन्होंने पत्र के जरिए राहुल गांधी को अपनी गैरहाजरी के बारे में सूचित किया। उन्होंने पत्र में ट्रस्ट को लेकर चिंता जाहिर की और कहा की इस संदर्भ में आप से बात करना चाहता हूं। ...गुरुमूर्ति आगे कहते हैं कि उस ट्रस्टी के पत्र का जवाब राहुल गांधी ने नहीं दिया।

शायद देना भी नहीं था क्योंकि जो उन्हें चाहिए था, वह मिल चुका था। इसीलिए गुरुमूर्ति दावा कर रहे हैं कि ट्रस्ट के दस्तावेज राहुल गांधी के खास कनिष्क सिंह के पास हैं। उनके पास ट्रस्ट के दस्तावेज होने का कोई औचित्य नहीं है। फिर भी है। तो क्या इसका मतलब यह हुआ कि ट्रस्ट गांधी परिवार का हो चुका है।

इस सवाल का जवाब भी गुरुमूर्ति देते हैं। वे महज जवाब ही नहीं दे रहे हैं बल्कि उस दौर जो खबर हुई, उसका भी हवाला दे रहे हैं। बात 2015 की है। जयंती नटराजन कांग्रेस छोड़ चुकी थीं। वे भी ट्रस्टी थीं। उनके जाने के बाद जगह खाली हो गई। उसी दौर में एक और ट्रस्टी जिनका नाम जीके वसन है, वे ट्रस्ट से बाहर चले गए। इस वजह से ट्रस्ट में दो जगह खाली हो गई। नियमतः दो खाली ट्रस्टी नियुक्त करने का काम एक्जक्यूटिव कांउसिल को करना था। लेकिन हुआ उलटा। ट्रस्टी की नियुक्ति कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी करने लगीं। इसका प्रमाण 'द हिन्दू' की खबर है। उसी को गुरुमूर्ति ने आगे बढ़ाया है।

एस.गुरुमूर्ति उसी को बता रहे हैं। बस अंतर इतना ही है कि वे पूरे रहस्य से पर्दा हटा रहे हैं। इसलिए वे लिखते हैं...सोनिया गांधी ने आश्चर्यजनक निर्णय नहीं लिया। वह सोचा समझा निर्णय था ताकि ट्रस्ट की संपंति पर उनका पूरा नियंत्रण हो।... ट्रस्ट की संपंति एक दो रुपये तो है नहीं। 20 हजार करोड़ रुपये की है। उस पर कांग्रेस नेतृत्व ने कब्जा कर लिया है।

वे कहते हैं कि नेशनल हेराल्ड की ही तरह मोतीलाल वोरा को ट्रस्ट में भेज दिया। हालांकि अब बात ट्रस्टी नियुक्त करने तक सीमित नहीं रह गई। वह उससे भी आगे जा चुकी है। ट्रस्ट की माउंट रोड वाली जमीन पर निर्माणहोने जा रहा है। नक्शा बनाने का काम मुंबई के एक वास्तुकार को दिया गया है। कहा जा रहा है उस जमीन पर पांच सितारा होटल बनाने की योजना है। उस बाबत एमओयू पर हस्ताक्षर हो चुका है। एमओयू के मुताबिक जमीन का40 फीसदी हिस्सा बिल्डर को दिया गया है। शेष 60 फीसदी हिस्सा एक कांग्रेसी नेता के नाम है। वह कौन है? उसकी जानकारी नहीं है।

एस.गुरुमूर्ति का दावा है कि यह घोटाला नेशनल हेराल्ड से भी बड़ा है। हालांकि है उसके जैसा ही। नेशनल हेराल्ड को भी कांग्रेस नेतृत्व ने संपंति के लिए हड़प लिया। हुआ यह था कि कांग्रेस ने नेशल हेराल्ड को चलाने वाली कंपनी एजेएल को 90 करोड़ रुपये का ब्याज मुक्त कर्ज दिए थे। यह कानून के खिलाफ है। कोई राजनीतिक पार्टी किसी व्यावसायिक कंपनी को कर्ज नहीं दे सकती है। चूंकि एजेएल अखबार निकालने के व्यवसाय से जुड़ी है, इसलिए उसे कर्ज देना कानून का उल्लंघन है। सभी जानते हैं कि राजनीतिक दल को चंदा से पैसा मिलता है। वह आम आदमी का होता है। इसी कारण राजनीतिक दल को आयकर से छूट मिलती है। ऐसे धन को व्यवसाय में लगाना ही अपराध है जो सोनिया और राहुल ने किया है।

हालांकि इस अपराध के जरिए एजेएल को हड़पने की जमीन तैयार की जा रही थी। एक तरफ कांग्रेस ने एजेएल को कर्ज दिया तो दूसरी तरफ यंग इंडिया नाम की कंपनी बना ली। उसका मालिकाना हक सोनिया गांधी और राहुल गांधी के पास है। इस कंपनी ने एजेएल को खरीद लिया। उसके एवज में एजेएल का कर्जा चुका दिया। कर्जा 90 करोड़ रुपये का था। दिया कांग्रेस ने था। उसको सोनिया गांधी की कंपनी ने चुका दिया और नेशनल हेराल्ड को हड़प लिया। कुछ इसी तरह का खेल नए ट्रस्ट को लेकर भी हुआ है। उस पर भी कांग्रेस नेतृत्व का कब्जा हो चुका है।

चीन का कूटनीतिक छल बनाम
नेहरू का कोरा आदर्शवाद

उस दौर में जहां चीन खुद को ताकतवर, आक्रामक और कूटनीतिक रूप से मजबूत करता चला गया, वहीं नेहरू की जमीन छिन जाने के बाद भी शांति की वकालत करने, युद्ध से दूर भागने की नीति और उनके व्यक्तित्व में आत्मविश्वास की कमी भारत की पहचान बन गई। नेहरू में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के बीच नेतागीरी करने का लोभ तो नजर आता है, वहीं दूसरी तरफ बड़ी शक्तियों से दूरी को वो अपनी ताकत मान लेते हैं। नेहरू के इस आदर्शवाद का चीन ने पूरा फायदा उठाया।

हरीश चन्द्र बर्णवाल

भारत में आज चाहे राफेल का आना हो, या एप्स पर लगाए जा रहे प्रतिबंध,सरकारी खरीद में नए नियम-कानून हों या फिर राहुल गांधी समेत कुछ नेताओं का सत्ता पक्ष पर हमला, इनमें जो सबसे कॉमन है, जो इन सबके केंद्र में है, वो है चीन। जाहिर है यह समस्या देश में आजादी के बाद से ही शुरू हो गई थी, जो 1962 के युद्ध में भारत की बुरी पराजय के तौर पर सामने आई। इसके बाद भी भारत-चीन के बीच सीमा विवाद हल नहीं हुआ। मेरा मानना है कि जब तक भारत-चीन रिश्ते को ऐतिहासिक संदर्भ में नहीं परखा जाएगा, जब तक आजादी के बाद के चीनी रवैये और अपनी रणनीतिक गलतियों का आकलन नहीं किया जाएगा, इस समस्या का स्थायी हल संभव नहीं है। प्रधानमंत्री मोदी ने 3 जुलाई, 2020 को लेह जाकर एक नई लकीर खींच दी और साफ-साफ कह दिया कि वीरता शांति की पहली शर्त है और कमजोर कभी शांति की पहल नहीं कर सकता। इसका मतलब साफ है कि उस दिशा में प्रधानमंत्री मोदी ने मजबूत और तेज कदम उठा लिए हैं।

अब सवाल यह है कि आखिर भारत-चीन के बीच सीमा को लेकर इतना पेच कहां और क्यों फंसा है, जो वो सुरसा की तरह अपना विकराल रूप धारण करता चला गया। आखिर दोनों देशों के दावे क्या हैं, आधार क्या है? किस प्रकार इसका हल निकाला जा सकता है। इस आलेख में मैं अपनी रिसर्च के जरिए एक-एक पहलू को सामने लाने की कोशिश करूंगा, साथ ही यह बताऊंगा कि सीमा विवाद को सुलझाने को लेकर कब-कब गंभीर प्रयास किए गए और किस-किसने किए। वैसे इसे जानने से पहले यह समझ लीजिए कि इस समय भारत चीन के साथ 3,488 किलोमीटर लंबी सीमा साझा करता है। यह नॉर्थ ईस्ट के राज्यों से लेकर जम्मू कश्मीर तक शामिल है।

भारत-चीन के बीच सीमा विवाद मुख्य रूप से दो क्षेत्रों में है। एक तरफ पूर्वी क्षेत्र है, जहां अरुणाचल प्रदेश से सीमा लगती है। दूसरी तरफ पश्चिमी क्षेत्र है, जिसमें जम्मू कश्मीर की सीमा लगती है। चीन अरुणाचल प्रदेश में मैकमोहन लाइन को नहीं मानता और कई हिस्सों पर अपना दावा करता है। वहीं दूसरी तरफ उसने अक्साई चिन पर भी कब्जा कर लिया है, जबकि लगातार भारत की सीमा का अतिक्रमण करने का प्रयास करता है। ऐसा नहीं है कि भारत-चीन के बीच सीमाओं का बंटवारा करने की कोशिश नहीं की गई। ऐतिहासिक संदर्भ बहुत सारी बातों की पुष्टि भी करते हैं, लेकिन चीन उसे अपने अलग-अलग तर्क देकर उसे खारिज करता है। एक बात महत्वपूर्ण यह है कि इस मामले में अब तक चीन का एप्रोच एग्रेसिव रहा है और भारत का डिफेंसिव। मतलब चीन कहता है कि यह इलाका हमारा है और हम उसे ठुकराते हैं। भारत ने कभी भी अपने धर्मग्रंथों का हवाला देकर कैलाश मानसरोवर आदि पर अपना दावा नहीं किया। हालांकि 2017 में डोकलाम की घटना के बाद इस एप्रोच में काफी बदलाव आया। आइए, सबसे पहले यह जानने का प्रयास करते हैं कि कब-कब भारत-चीन सीमा के बीच मैप बनवाने की कोशिश की गई।

1762- चीनी राजा ने बनवाया नक्शा

भारत-चीन के बीच सबसे पुराना उपलब्ध नक्शा 1762 का है। यह नक्शा सम्राट चिएन लपंग के आदेश पर बनाया गया था। इसमें सिंकियांग का विस्तार दक्षिण में लुन रेंज तक था। इसमें साफ दिखाया गया है कि भारत कुनलुन पर्वतों के दक्षिण में है। इस नक्शे के आधार पर अक्साई चिन भारत का हिस्सा था।

1865- जॉनसन लाइन

1865 में सर्वे ऑफ इंडिया के अफसर डब्लू एच जॉनसन ने अपने हिसाब से भारत-चीन के बीच एक सीमा खींचने की कोशिश की। इसमें अक्साई चिन का इलाका भारत में था। लेकिन जॉनसन लाइन को न तो जम्मू कश्मीर के महाराजा ने माना और न ही चीन ने।

1873 - ट्रेलावने सॉन्डर्स लाइन

1873 में भी भारत के एक आधिकारिक नक्शानवीस ने दक्षिण से काफी दूर एक सीमा रेखा खींचने की कोशिश की थी। यह काराकोरोम पर्वत श्रृंखला के साथ-साथ सरहद को निर्धारित करती थी। इसे ट्रेलावने सॉन्डर्स लाइन के रूप में जाना जाता है। मगर इसे किसी ने भी मान्यता नहीं दी।

1897 - जॉन्सन-आरदाग लाइन

भारत-चीन सीमा को बांटती हुई एक गंभीर कोशिश की सर जॉन आरदाग ने। आरदाग ब्रिटिश सैन्य अधिकारी थे। जॉन आरदाग ने कुनलुन पहाड़ों से गुजरती हुई एक रेखा खींची। हालांकि एक प्रकार से यह जॉनसन लाइन का मोडिफिकेशन था। इस सीमा को खींचने का आधार यह था कि उस समय रूसी प्रभुत्व बढ़ रहा था। उसे रोकने के लिए आरदाग ने सीमा रेखा खींचने की कोशिश की। लेकिन यह प्रयास भी कागजों में सीमित रह गया।

1893-1899 - मैक्कार्टनी-मैक्डॉनल्ड लाइन

भारत-चीन सरहद पर खींची गई यह तीसरी लाइन है। इसका नक्शा खुद चीनी अधिकारियों ने ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों को सौंपा था। चीन के शिंजियांग प्रांत के वरिष्ठ अधिकारी ने 1893 में काशगर में ब्रिटेन के काउंसिल जनरल जॉर्ज मैक्कार्टनी को एक नक्शा दिया, जिसमें चीन के द्वारा सीमा का प्रस्ताव था। चीन द्वारा प्रस्तावित सीमा के इस नक्शे मंक अक्साई चिन के इलाके देवसांग, चांग चिन्मो और गलवान वैली को भारत में ही दिखाया गया है। यह नक्शा आज भी भारत सरकार के पास है।

जॉर्ज मैक्कार्टनी ने इस नक्शे को भारत में ब्रिटिश सरकार को भेजा। फिर 1899 में ब्रिटिश सरकार की तरफ से सर क्लाउड मैक्डॉनल्ड ने पत्र के साथ इस नक्शे को चीन के राजा को दिया। चीन ने उस समय इस नक्शे को मान लिया था। गौरतलब है कि उस समय रूसी खतरे की वजह से ब्रिटेन और चीन गहरे दोस्त बन गए थे। इस नक्शे को ही मैक्कार्टनी-मैक्डॉनल्ड लाइन कहा जाता है।

1909 का लद्दाख तहसील का मैप

भारत सरकार के पास 1909 का लद्दाख तहसील का मैप भी पड़ा है। इसमें भी बहुत साफ-साफ तरीके से अक्साई चिन का इलाका

भारत के हिस्से में दिखाया गया है। इसमें देवसांग, गलवान और नॉर्थ पेंगॉन्ग त्सो के इलाके भी शामिल हैं।

1914 का शिमला समझौता- मैकमोहन लाइन

तिब्बत के साथ सीमा निर्धारण के लिए ब्रिटिश साम्राज्य और तिब्बत के बीच एक शिमला समझौता किया गया था। इस बातचीत के मुख्य वार्ताकार थे सर हेनरी मैकमोहन, जो उस समय भारतीय साम्राज्य के विदेश सचिव थे। इस बातचीत के बाद ब्रिटिश इंडिया और तिब्बत के बीच 890 किलोमीटर लंबी सीमा खींची गई। इसी रेखा को मैकमोहन लाइन कहा जाता है। इसमें तवांग (अरुणाचल प्रदेश) को भारत का हिस्सा माना गया। समझौते के समय तिब्बत एक स्वतंत्र देश था। यही नहीं, प्रथम विश्व युद्ध के बाद 1937 में ब्रिटेन ने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें सभी संधियों का जिक्र था। उसमें मैकमोहन लाइन को अंतरराष्ट्रीय मान्यता भी मिली। हालांकि 1960 में चीन ने तिब्बत पर पूरी तरह से अपना कब्जा जमा लिया और वो मैकमोहन लाइन को मानने से इनकार करता रहा।

1917 का चीन का न्यू एटलस एंड कमर्शियल गैजेट -

चीन के शंघाई से जो नक्शा प्रकाशित किया गया, उसमें अक्साई चिन का इलाका भारत का हिस्सा है। इसमें डेमचॉक और पेंगॉन्ग के पास के कुछ इलाकों को तिब्बत का हिस्सा दिखाया गया है।

1919 का चीन का नक्शा

1919 में जारी चीन का एक और मैप सीमा विवाद पर एक सबूत की तरह है। पेकिंग में चीन की सरकार ने यह नक्शा जारी किया था। यह मैप चाइना पोस्टल एलबम का है। इस मैप से भी साफ होता है कि अक्साई चिन का इलाका भारत का है। यही नहीं, पारंपरिक रूप से भारत के मानचित्र में जिन इलाकों को दिखाया जाता है, वैसा ही करीब इस नक्शे में भी दिखाया गया है।

1954 में भारत का मैप-

भारत ने एक मैप जारी किया, जिसमें पश्चिमी हिस्से में आरदाग-जॉनसन लाइन और पूर्वी हिस्से में मैकमोहन लाइन को स्थायी सीमा के तौर पर दिखाया गया, जिसे चीन ने मानने से इनकार कर दिया। चीन का कहना था कि अक्साई चिन उसका अभिन्न हिस्सा है और मैकमोहन लाइन अवैध है।

1958 में चीन का मैप-

चीन ने एक मैप प्रकाशित किया, जिसमें शिंजियांग-तिब्बत हाइवे अक्साई चिन के पूर्वी हिस्से से गुजर रहा था। इसमें नेफा, लद्दाख के हिस्से, उत्तर प्रदेश और हिमाचल के कुछ हिस्से को भी चीनी मैप में दिखाया गया। इस मैप के प्रकाशित होने और कुछ अखबारों में छपने के बाद भारतीय अधिकारियों को पता चला कि चीन ने भारत के एक बड़े हिस्से पर कब्जा जमा लिया है।

नवंबर 1959 में प्रकाशित नक्शा -

यह नक्शा भारत सरकार के श्वेत पत्र में है। इस नक्शे को भारत और चीन की सरकारों ने सितंबर से नवंबर 1959 के दौरान साझा किया। इसमें दिखाया गया है कि अक्साई चिन पर भारत और तवांग पर चीन अपना कब्जा दिखा रहा है।

जून-दिसंबर 1960 -

इस दौरान बीजिंग, नई दिल्ली और यांगून में मैप को लेकर लंबी बातचीत हुई। चीन ने अपने मैप के जरिए कई हिस्सो पर कब्जा मांगा।

1962 भारत-चीन युद्ध

20 अक्टूबर, 1962 को चीन ने भारत पर हमला बोल दिया। उसने एक साथ पूर्वी और पश्चिमी दोनों सेक्टर पर हमला किया। पूर्वी सेक्टर में लद्दाख में, तो वहीं पश्चिमी सेक्टर में मैकमोहन लाइन के पास हमला किया गया। चीन ने जब 20 नवंबर, 1962 को एकतरफा रूप से युद्धविराम की घोषणा की, तब तक वो भारत-चीन सीमा के बीच एक नई लकीर खींच चुका था। चीन ने जिस शिनजियांग-तिब्बत मार्ग के जरिए अक्साई चिन पर कब्जा जमाया था, युद्ध के बाद उसे पक्का कर लिया। वहीं पूर्वी क्षेत्र में तवांग पर अपना कब्जा जमा लिया था। हालांकि युद्धविराम की घोषणा के साथ ही चीन तवांग और गलवान से भी पीछे हट गया। लेकिन लद्दाख में युद्ध के पहले छअउ जो गलवान नदी के पूर्वी किनारे पर थी, उसे युद्धविराम के बाद चीन ने खिसकाकर नदी के पश्चिमी किनारे पर कर लिया।

मैप को लेकर 2002 में बैठक -

साल 2002 में एक बार फिर एक्सपर्ट ग्रुप की बैठक में मानचित्रों का लेनदेन हुआ, लेकिन चीन के इस मैप में 1960 से स्थिति बहुत अलग थी। दोनों देशों के बीच मैप की अदला-बदली 2002 से रुकी हुई है।

भारत-चीन के बीच अब क्या है विवाद?

एक युद्ध, कई बार की खूनी भिड़ंत, अतिक्रमण और अनगिनत बातचीत के बाद भी भारत-चीन सीमा विवाद वहीं अटका हुआ है। चीन के छल की वजह से यह साफ है कि सीमा विवाद के समाधान की दिशा में हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाए हैं। ऐसे में यह जानना जरूरी है कि आखिर अब किन इलाकों में मतभेद बना हुआ है।

पेंगॉन्ग त्सो झील - यह झील हिमालय की गोद में बसी है। करीब 14,000 फीट से ज्यादा की ऊंचाई पर स्थित इस झील का 45 किलोमीटर हिस्सा भारत में पड़ता है, जबकि 90 किलोमीटर का क्षेत्र चीन में आता है। परंतु चीन यहां बार-बार भारतीय सीमा में अतिक्रमण करता है।

गलवान घाटी -15 जून, 2020 को जिस प्रकार गलवान की घाटी में खूनी झड़प हुई, उससे साफ है कि इस घाटी में चीन लगातार भारत की सीमा पर घुसपैठ करता है। गलवान घाटी अक्साई चिन में है। यह इलाका भारत को अक्साई चिन

भारत-चीन सीमा विवाद को लेकर देश के पहले प्रधानमंत्री नेहरू के क्या विचार रहे हैं। उस समय सासाराम से कांग्रेस सांसद डॉ. राम सुभग सिंह ने पूछा था कि आखिर चीन किस सीमा को मानता है। इस पर नेहरू ने जवाब देते हुए बताया कि चीन तो किसी नक्शे को मानता ही नहीं है, बल्कि वह तो अपना ही नक्शा पेश करता है। जबकि भारत मैकमोहन लाइन को अपनी सीमा स्वीकार करता है।

से अलग करता है। इस घाटी का महत्त्व इसी बात से है कि इसी क्षेत्र से 1962 के युद्ध की शुरूआत हुई थी। सामरिक रूप से यह इलाका बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पाकिस्तान, चीन के शिनजियांग और लद्दाख की सीमा के साथ लगा हुआ है। यहां पर चीन ने अपने इलाके में आधारभूत ढांचे को विकसित कर रखा है, लेकिन मोदी सरकार जबसे यहां पर आधारभूत ढांचे का निर्माण कर रही है तो चीन विरोध करता है। हालांकि सरकार ने निर्माण कार्यों में और तेजी ला दी है।

डोकलाम - डोकलाम पर सीधे भारत का तो दावा नहीं है, लेकिन इस पर भूटान और चीन दोनों ही अपने दावे करते हैं। यह इलाका मुख्य रूप से सिक्किम बॉर्डर के नजदीक है और एक ट्राई जंक्शन प्वॉइंट है। डोकलाम में जिस प्रकार चीन ने ढांचों का निर्माण शुरू किया, उसका भारत ने तीखा विरोध किया था। 2017 में दोनों देशों के बीच काफी समय तक विवाद बना रहा था।

तवांग - अरुणाचल प्रदेश के तवांग इलाके पर चीन ने हमेशा नजरें गड़ाए रखी। 1914 में ब्रिटिश भारत और तिब्बत के बीच जो समझौता हुआ था, उसके तहत अरुणाचल प्रदेश के उत्तरी हिस्से तवांग और दक्षिणी हिस्से को भारत का हिस्सा मान लिया गया था। इसे मैकमोहन लाइन भी कहा जाता है। लेकिन चीन इसे मानने से इनकार करता रहा है। 1962 के युद्ध में चीन ने तवांग पर कब्जा भी जमा लिया था, लेकिन भौगोलिक स्थिति भारत के पक्ष में होने के कारण उसे पीछे हटना पड़ गया था।

नाथूला - नाथूला दर्रा सिक्किम राज्य को दक्षिण तिब्बत में चुम्बा घाटी से जोड़ता है। हिमालय की गोद में बसा यह पहाड़ी दर्रा सिक्किम की राजधानी गंगटोक से करीब 54 किलोमीटर दूर है। 14,200 फीट की ऊंचाई पर बसा नाथूला दर्रा भारत के लिए इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि तिब्बत में स्थित कैलाश मानसरोवर के लिए भारतीय श्रद्धालु यहीं से होकर जाते हैं।

अब तक आप समझ गए होंगे कि भारत-चीन के बीच सीमा को लेकर संघर्ष का एक लंबा इतिहास है। लेकिन इसे सुलझाने का एक सुनहरा दौर वो था, जब भारत को आजादी मिली थी और चीन में साम्यवादियों ने अपनी सत्ता स्थापित की थी। लेकिन उस समय चीन जहां पूरी तरह से आक्रामक था, वहीं भारत चीन को सहलाने-फुसलाने में लगा था। चीन भारतीय भूभाग पर कब्जा कर रहा था और भारत उसे संयुक्त राष्ट्र में जगह दिलाने के लिए लड़ रहा था। उल्टे-सीधे मैप दिखाकर चीन भारत को भ्रम में डाल रहा था और भारत भी समस्या को मूल रूप से दूर करने की जगह उसे टालने में लगा था। एक प्रकार से देखें तो चीन खुद को ताकतवर बनाने में जुटा था और भारत आदर्शवाद की दुनिया में गोते लगा रहा था। जाहिर है सीमा विवाद को लेकर उन परिस्थितियों का आकलन नए भारत के लिए बेहद जरूरी है।

नेहरू के आदर्शवाद को वाजपेयी का जवाब

4 सितंबर, 1959 को पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने लोकसभा में एक प्रस्ताव रखा था, जिसमें तिब्बत का मामला संयुक्त राष्ट्र में सौंपने की मांग की गई थी। वाजपेयी उस समय बलरामपुर से सांसद थे। उनके प्रस्ताव पर लोकसभा में चर्चा भी हुई थी। उस प्रस्ताव पर चर्चा के दौरान प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने सीमा विवाद संबंधी अपने विचार रखे थे और उस पर वाजपेयी ने जो वक्तव्य दिया था, वो आज भी बेहद काम का है। नेहरू ने कहा था, 'हमें हर हालत में अपना संतुलन बनाए रखना चाहिए, इस मायने में बनाए रखना चाहिए कि जहां हम अपनी बात सही समझें, हक की बात समझें, वहां मजबूती से अपनी नीति पर डटे तो रहें, लेकिन फिर भी दूसरे की बात सुनने और समझने की गुंजाइश बनाए रहें, और जहां भी मुमकिन हो सके समझौते का दरवाजा खुला रखें। सीमा की इन घटनाओं के बारे में, एक मोटे तौर पर, चीन सरकार का कहना है कि हमने उन पर हमला किया है। यह तो एक ऐसी बात है जिसका ताल्लुक तथ्यों से है। सवाल यह है कि कोई गांव या कोई क्षेत्र हमारे देश का हिस्सा है या चीन का। आम तौर पर जहां भी कहीं ऐसे छोटे-मोटे झगड़े, ऐसे विवाद खड़े होते हैं, तो उनको लेकर दो बड़े-बड़े या छोटे-छोटे मुल्कों का एक दूसरे का खून करने पर तैयार हो जाना, एक-दो मील के क्षेत्र के फैसले के लिए, और वह भी ऐसे ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों के मील-दो मील के क्षेत्रों का फैसला करने के लिए, जहां कोई आदमी रहता ही नहीं है, एक दूसरे पर चढ़ बैठना कुछ बड़ी अजीब सी, समझदारी से कुछ बाहर की बात मालूम पड़ती है। मुझे तो यही लगता है। लेकिन अगर उसमें देश की इज्जत और उसकी गरिमा का सवाल होता है, तो फिर वह मील-दो मील क्षेत्र का सवाल नहीं रह जाता। तब वह देश के आत्मसम्मान का, प्रतिष्ठा का सवाल बन जाता है। और इसीलिए उस पर इतना सब कुछ होता है। लेकिन मैं इस मसले को इतना बढ़ने नहीं देना चाहता कि फिर राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के कारण दोनों देशों में से किसी को भी कदम पीछे हटाने की कोई गुंजाइश न रहे। और दोनों के सामने हथियार उठाने के अलावा और कोई चारा ही न रहे।'

इस विचार से आपको समझ में आएगा कि भारत-चीन सीमा विवाद को लेकर देश के पहले प्रधानमंत्री नेहरू के क्या विचार रहे हैं। उस समय सासाराम से कांग्रेस सांसद डॉ. राम सुभग सिंह ने पूछा था कि आखिर चीन किस सीमा को मानता है। इस पर नेहरू ने जवाब देते हुए बताया कि चीन तो किसी नक्शे को मानता ही नहीं है, बल्कि वह तो अपना ही नक्शा पेश करता

है। जबकि भारत मैकमोहन लाइन को अपनी सीमा स्वीकार करता है। नेहरू कहते हैं, 'अपनी तरफ से मैंने कई बार कहा है कि बर्मा से भूटान तक हमारी सीमा मैकमोहन लाइन ही है, और हम इसी को मानते हैं।' लेकिन नेहरू जानते थे कि चीन शुरू से ही अपने नक्शे में आधा नेफा, एक तिहाई असम और एक तिहाई भूटान को दिखाता है। यहीं नहीं, भारत ने जब भी सवाल उठाया तो चीन ने हमेशा गोलमोल जवाब दिया। नेहरू कहते हैं, 'यह तो मैं समझ सकता हूं कि कभी किसी गलती की वजह से थोड़े अरसे के लिए कुछ हो गया हो, लेकिन अगर कोई दस साल तक हर साल आपसे यही कहता रहे कि हम फुर्सत के बाद उसकी जांच करेंगे, तो उसे कोई अच्छा, माकूल जवाब तो नहीं माना जा सकता।' नेहरू अपने इसी भाषण में लद्दाख को लेकर भी अपने विचार रखते हैं। वे कहते हैं, 'लद्दाख की स्थिति कुछ दूसरी है। वहां तक मैकमोहन लाइन नहीं पहुंचती। उसका आधार पुराने जमाने से, सौ सालों से, चली आ रही संधियां हैं। कश्मीर के शासक, महाराजा गुलाब सिंह - जो उस वक्त के पंजाब के सिख शासकों के सामंत थे, और ल्हासा के शासक तथा चीन के सम्राट के प्रतिनिधि के बीच संधि हुई थी। उस संधि में ही लद्दाख को कश्मीर राज्य का हिस्सा माना गया था।'

गौरतलब है कि अपने ही देश के जिस कश्मीर के मुद्दे को प्रधानमंत्री नेहरू संयुक्त राष्ट्र ले गए थे, उन्होंने तिब्बत के मसले को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने के वाजपेयी के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इस पर अटल बिहारी वाजपेयी ने एक बड़ी गंभीर बात कही थी। यह बयान आज भी मोदी सरकार के लिए एक मार्गदर्शक की तरह है। उन्होंने कहा था, 'चीन से मित्रता का यह अर्थ नहीं है कि वह लातें मारते जाएं और हम उनके चरणों को चूमते जाएं। मित्रता आत्मसम्मान के आधार पर हो सकती है। चीन आक्रमणकारी है, चीन हमारी सीमा पर प्रवेश करने आया है। हमारे दरवाजे खटखटा रहा है। और प्रधानमंत्री जी कहते हैं कि हम सीमा के सम्बन्ध में बात करने को तैयार नहीं हैं। मैं समझता हूं हमें अब चीन के सवाल को उठाना नहीं चाहिए। और मैं इस सदन से अपील करूंगा कि वह मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करे और यह सिद्ध करे कि शायद कुछ अन्तरराष्ट्रीय कठिनाइयों से भारत सरकार तिब्बत के सवाल को भले ही न उठा सके, मगर भारत की जनता की भावनाएं तिब्बत की जनता के साथ हैं, दलाई लामा के साथ हैं और इसका एक ही रास्ता है कि हम इस प्रस्ताव को स्वीकार करें।'

1954 का समझौता सतही, सीमा पर कोई बात नहीं

चीन में जब कम्युनिस्टों ने अपना राज कायम किया, उसके बाद नेहरू के नेतृत्व में भारत गैर सोशलिस्ट ब्लॉक में पहला देश था, जिसने चीन को मान्यता दे दी। यही नहीं, 1954 में पंचशील सिद्धांत पर आधारित एक समझौता भी किया। 1954 से 1956 के बीच भारत और चीन सरकार के बीच जो करार, पत्राचार, नोट्स के आदान-प्रदान हुए और ज्ञापन दिए गए, उस पर जारी किए गए श्वेत पत्र को लेकर कालाहांडी के सांसद श्री प्रताप केशरी देव ने एक प्रस्ताव पेश किया। इस पर अपनी स्पीच में उन्होंने कहा, 'चीनी लोग गत दो वर्षों से कश्मीर के एक भाग पर कब्जा किए हुए हैं। उन्होंने अपने राजपथ और सैनिक संस्थापन निर्मित किए हैं, जहां से भारत विरोधी कार्यवाही की जा रही है... इतिहास में पहली बार गत महीने की 25 और 26 तारीखों को दोनों देशों के बीच गोलियां चलीं। इसका कारण चीन में साम्यवादियों का सत्ता ग्रहण करना ही है। मैं समझता हूं कि चीन पंचशील के सिद्धान्तों में विश्वास नहीं करता है जिनका उल्लेख प्रत्येक पत्र के अन्त में किया गया है।' देव ने इस वक्तव्य में एक महत्वपूर्ण बात कही। उन्होंने कहा, 'भारत और चीनी गणतंत्र के बीच पहला करार 1954 में हुआ था। उसमें अनेक बातों का उल्लेख था, परन्तु हमारे सामान्य सीमान्त की व्याख्या नहीं की गई थी। भारत सरकार को इसके लिए यथाशीघ्र प्रयत्न करना चाहिए था। सीमारेखा की व्याख्या न होना हमारी सरकार की अदूरदर्शिता का प्रतीक है।'

अपने भाषण के दौरान ही श्री देव ने सीमा को लेकर चीन की नीतियों की एक बहुत सुंदर व्याख्या दी। उन्होंने कहा, 'अभी तक तो हमारा उत्तरी सीमान्त हिमालय के कारण सुरक्षित रहता आया है। परन्तु जब से तिब्बत में चीनी शासन आया है, तबसे हमारे लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। चीन ने इस प्रकार के नक्शे प्रकाशित किए हैं, जिनमें नेफा, बड़ाहोती तथा लद्दाख, सिक्किम और भूटान के बहुत से क्षेत्रों पर दावा किया गया है। पहले तो चीन ने यह बहाना किया कि ये नक्शे राष्ट्रवादी चीन के समय के बने हुए हैं, परन्तु अब श्री चाऊ एन लाई ने साफ-साफ कह दिया है कि ये नक्शे हमारी परम्परागत वास्तविक स्थिति के द्योतक हैं। इससे स्पष्ट है कि चीन साम्राज्यवादी नीति अपना रहा है।'

इसी प्रकार उन्होंने लद्दाख को लेकर चीनी चालबाजी के बारे में भी बताया। उन्होंने कहा, '1942 की शांति संधि के अनुसार वह (लद्दाख) हमारे राज्यक्षेत्र में आता है। चीन सरकार द्वारा 1847 में प्रकाशित नक्शों में उसे भारत का अंग ही समझा गया है। परन्तु अब नया चीन उसे अपने राज्य क्षेत्र में बताता है और 1942 की संधि को इस आधार पर मानने से

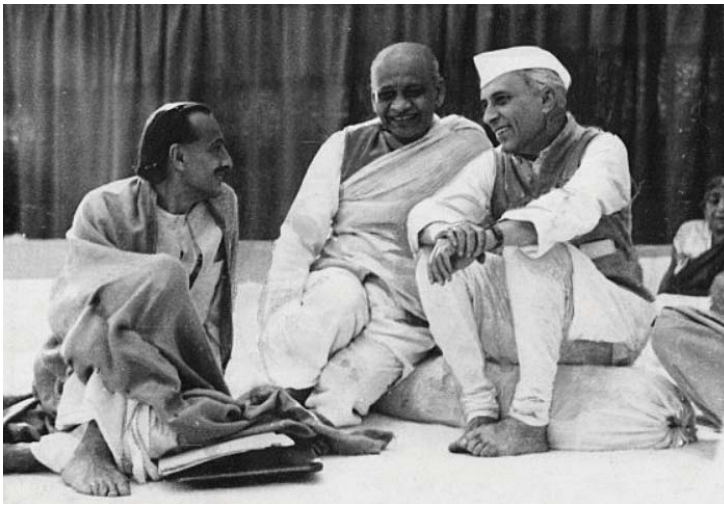

दूसरी गलती तिब्बत नीति को लेकर रही। आचार्य कृपलानी ने नेहरू की तिब्बत नीति पर भी सवाल उठाए और कहा, 'कुछ व्यक्तियों ने यह भी पूछा है कि ऐसी स्थिति में भारत क्या करता। हमें तिब्बत पर चीन का अधिकार स्वीकार नहीं करना चाहिए था। यह हमारा नैतिक कर्तव्य था।'

इनकार करता है कि उसमें चीनी सरकार का प्रतिनिधि उपस्थित नहीं था।'

श्वेत पत्र के जरिए ही चीनी षडयंत्र का पहली बार पता चला। उन्होंने कहा, 'जहां तक मैकमोहन लाइन का संबंध है, जब श्री चाऊ एन लाई 1956 में भारत आए थे, तो उन्होंने उसे भारत-चीन सीमा रेखा स्वीकार किया था। परन्तु अब अपने नवीनतम पत्र में उन्होंने उसे अस्वीकार किया है। यह लाइन हिमालय के निकट से गुजरती है और प्राकृतिक विभाजन रेखा है। हमारे प्रधानमंत्री ने उसे परम्परागत विभाजन रेखा कहा है और उसी पर दृढ़ रहने का निश्चय प्रकट किया है। परन्तु आश्चर्य है कि श्री चाऊ एन लाई ने उसे ब्रिटेन की साम्राज्यवादी नीति की उपज कहकर 90,000 वर्ग किलोमीटर राज्यक्षेत्र का दावा किया है।'

आचार्य कृपलानी ने गिनाई नेहरू की 7 खामियां

भारत-चीन सीमा विवाद पर 12 सितंबर, 1959 को आचार्य कृपलानी ने भी कई महत्वपूर्ण बातें उजागर कीं। उन्होंने बताया कि किस प्रकार वे 1950 और 1954 में भी चीन को लेकर प्रधानमंत्री नेहरू को सतर्क कर चुके थे। उन्होंने चीन की नीयत पर सवाल उठाया और बताया कि क्यों उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए था। उन्होंने कहा, 'चीन के क्रांति सम्बन्धी इतिहास का ध्यान हमने भी नहीं रखा है। चीन में एकाधिकारवादी सरकार है। एकाधिकारवादी सरकार में तर्क नहीं, सत्ता चलती है। वहां या तो एक अधिनायक शासन करता है या कुछ महत्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ। ऐसे राज्य की नीति हमेशा विस्तारवादी होती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि देश के भीतर चाहे कितनी बड़ी क्रांति हो जाए, पर विदेशी नीति (विस्तारवादी नीति) में कोई अन्तर नहीं पड़ता। इस सम्बन्ध में फ्रांस, जर्मनी, इटली, और रूस के उदाहरण हैं। अतः आप देखेंगे कि चीन अभी भी वही पुरानी विस्तारवादी नीति का पालन कर रहा है।'

कृपलानी ने नेहरू की कई नीतियों की गलतियों को उजागर किया। पहली, 'संसार के अन्य देशों ने जब चीन से होने वाले खतरों की चर्चा की तो हमने उस बात को हमेशा हल्के ढंग से टाल दिया। हमने उनसे खतरे को नहीं माना। उसी का नतीजा है कि आज हमें चीन ने अपनी नीति का मजा चखाया है।'

दूसरी गलती तिब्बत नीति को लेकर रही। आचार्य कृपलानी ने नेहरू की तिब्बत नीति पर भी सवाल उठाए और कहा, 'कुछ व्यक्तियों ने यह भी पूछा है कि ऐसी स्थिति में भारत क्या करता। हमें तिब्बत पर चीन का अधिकार स्वीकार नहीं करना चाहिए था। यह हमारा नैतिक कर्तव्य था।'

तीसरी गलती 1954 में चीन के साथ हुए करार के समय हुआ था। आचार्य ने कहा, 'हमने तिब्बत पर चीन का अधिराज्य ही नहीं, बल्कि चीन की प्रभुता भी स्वीकार कर ली थी क्योंकि हम चाहते थे कि चीन और भारत की सीमा निर्धारित हो जाए। पर उस समय भी कुछ पक्का निश्चय न हो सका। 1956 में फिर सीमा-निर्धारण की बात उठाई गई, फिर भी कुछ निश्चित न हो सका।'

चौथी गलती चीन के साथ नेहरू के कामकाज के तरीके को लेकर थी। इस गलती को खुद नेहरू ने भी संसद में दिए भाषणों में माना है। वे खुद की जुबानी बातचीत को ही महत्त्व देते थे, जबकि दो देशों के बीच बातचीत औपचारिक होने के साथ-साथ लिखित भी होनी चाहिए। आचार्य ने कहा, 'हमारे प्रधानमंत्री एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ हैं, उन्हें कम-से-कम चाहिए था कि जो बातें उस समय तय हुई थीं, उन्हें लिखित रूप में रखा जाए। आज शब्दों का गलत मतलब लगाया जाता है, अतः सब बातें लिखित रूप में रखना आवश्यक व बुद्धिमानीपूर्ण होता है।'

आचार्य कृपलानी ने जो बयान दिया, उसके मुताबिक नेहरू की पांचवीं गलती यह थी कि उन्होंने चीन के साथ बदलते रिश्तों को लेकर संसद को हमेशा अंधकार में रखा। कृपलानी ने कहा था, 'चीन ने जो कुछ किया है, उस पर मुझे बहुत क्षोभ है, पर उससे भी अधिक क्षोभ इस बात से है कि हमारी सरकार अभी तक क्या करती रही है। आपको मालूम होना चाहिए कि चीनी हमले हमारी सीमा पर काफी समय से होते आ रहे हैं। उनके बारे में दोनों सरकारों के बीच पत्र व्यवहार भी चलता रहा है। पर, हमारी सरकार ने संसद को कभी भी इन बातों से अवगत' नहीं कराया। सरकार ने हमेशा संसद से इन बातों को छिपाया है। लद्दाख में चीन द्वारा बनाई गई सड़क के सम्बन्ध में जब सभा से प्रश्न पूछा गया था, तो हमें बताया गया था कि रास्ता साफ करने के लिए पत्थर वगैरह रख लिए गए हैं। पर अब हमें बताया गया है कि वह सड़क पक्की है और उस पर मोटरगाड़ी चल सकती है। हवाई अड्डे की बात हमें कभी भी नहीं बताई गई। हवाई अड्डे के सम्बन्ध में पूछे जाने पर सरकार ने जवाब दिया था कि वह जगह ऐसी है, जहां न कोई रह सकता है न कुछ पैदा हो सकता है। ठीक है, तो भी क्या हम उसे छोड़ देंगे? यदि वह जगह बेकार है, तो चीन उस पर क्यों कब्जा करना चाहता है? अतः यह बात किसी बेकार पड़े भूमि खण्ड की नहीं है बल्कि देश की अखण्डता की है और देश की रक्षा की है।'

नेहरू की एक बड़ी गलती यह थी कि वह किसी भी कीमत पर युद्ध नहीं चाहते थे। भले ही चीन थोड़ी-बहुत जमीन हथिया ले। वे हमेशा इस आदर्शवाद में जीते रहे कि चीन के साथ भले ही थोड़ी-बहुत भिड़ंत हो जाए, लेकिन चीन आक्रमण नहीं करेगा। इसी वजह से उन्होंने कभी कोई सैन्य तैयारी नहीं की। आचार्य कृपलानी कहते हैं, 'उधर चीन हमारी सीमा पर

आक्रमण कर रहा है और हम चीनी-हिन्दी भाई-भाई का नारा बुलन्द कर रहे हैं। आखिर कब तक हम इसी तरह दबे रहेंगे। हमें दबकर नहीं स्पष्ट रूप से अपनी बात कहनी चाहिए। हम जानते हैं कि भारत और चीन का युद्ध एक विश्वयुद्ध का रूप धारण कर लेगा। फिर भी दूसरों को खुश करने की नीति का हम कब तक अनुसरण करेंगे। यूरोप में 1939 में दूसरों को खुश करने की नीति भी युद्ध को रोक नहीं सकी।'

नेहरू की सातवीं गलती मध्यस्थता को लेकर रही। वह बार-बार सीमा विवाद को हल करने के लिए किसी मध्यस्थ को लाने की वकालत करते थे। कश्मीर की स्थिति इसी वजह से हमेशा के लिए उलझकर रह गई, जबकि भारतीय सेना कश्मीर को वापस अपने कब्जे में ले रही थी। चीन को लेकर भी उनकी यही सोच आखिर तक रही। आचार्य कृपलानी कहते हैं, 'ऐसी स्थिति में मैं जानना चाहता हूं कि हमारी सरकार इस मामले में क्या करने जा रही है, हमें चाहिए कि हम पहले वह क्षेत्र, जिस पर चीन ने कब्जा कर लिया है, उसे पुनः प्राप्त कर लें। प्रधानमंत्री ने मध्यस्थ निर्णय की बात कही है। मेरा निवेदन है कि राष्ट्रीय राज्यक्षेत्र देश की जनता की सम्पत्ति है, उसके सम्बन्ध में मध्यस्थ निर्णय की कोई अवश्यकता ही नहीं है।'

चीन का कूटनीतिक छल और नेहरू का आदर्शवाद

16 नवंबर 1959 को आचार्य कृपलानी ने लोकसभा में एक स्थगन प्रस्ताव दिया। यह प्रस्ताव उन्होंने चीनी सैनिकों की टुकड़ी द्वारा भारतीय सीमा में घुसकर भारतीय सैनिकों की हत्या को लेकर दिया था। यह घटना 21 अक्टूबर, 1956 की थी। खास बात यह है कि अटल बिहारी वाजपेयी और आचार्य कृपलानी जहां इस पर चर्चा की मांग कर रहे थे, वहीं नेहरू चीनी प्रधानमंत्री को एक चिट्ठी भेजने का हवाला देकर इसे टाल रहे थे। नेहरू ने कहा, 'अभी कुछ ही समय पहले प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई के नाम मेरा जवाब दिल्ली में रहने वाले चीनी राजदूत को चीनी प्रधानमंत्री के पास पहुंचाने के लिए दे दिया गया है। पहले वह प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई के पास पहुंच जाना चाहिए, कायदा यही है। इसलिए मुझे तब तक रुकना पड़ेगा।' हालांकि प्रधानमंत्री नेहरू के इस आग्रह में कोई बुराई नहीं दिखती। लेकिन जिस प्रकार चीनी रवैया था, उसे देखते हुए यह एक गलत कदम था। खुद नेहरू ने आगे कहा, 'मुझे प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई का 7 नवंबर का एक पत्र मिला था। उसे श्वेत पत्र में शामिल नहीं किया जा सका, लेकिन चीन सरकार ने उसे प्रचारित कर दिया है और वह अखबारों में छप चुका है। आज मैंने चीनी राजदूतावास के जरिए उसी पत्र का जवाब भेजा है।' अब आप समझ लीजिए कि चीन की कूटनीति का छल यह था कि वो सिर्फ दिखावे के लिए पत्र लिखते थे, जबकि असली मकसद दुष्प्रचार करना था। जबकि नेहरू का आदर्शवाद यह था कि वे समस्या का समाधान तो चाहते थे, लेकिन चीन के कूटनीतिक छल को जानते-बूझते भी अनसुना और अनदेखा कर रहे थे।

भारत-चीन सीमा विवाद का आदर्श उदाहरण बड़ाहोती

17 नवंबर, 1959 को बड़ाहोती को लेकर स्थगन प्रस्ताव पर चर्चा हो रही थी तो नेहरू ने सहज तरीके से बता दिया कि वहां से सेना को वापस बुला लिया गया है। उन्होंने बताया कि भारत और चीन का करार हुआ है कि वो एक विवादास्पद क्षेत्र है, इसलिए भारत और चीन वहां पर अपने सैनिक नहीं रखेंगे। लेकिन सच्चाई यह थी कि इस करार के बावजूद चीन ने वहां पर लगातार सैनिक रखा था। यह बात न केवल नेहरू जानते थे, बल्कि उन्होंने श्वेत पत्र में इसका जिक्र भी किया था। इस संदर्भ में पहले तो सासाराम के सांसद डॉ. राम सुभग सिंह ने याद दिलाया और फिर बाद में मुजफ्फरपुर के सांसद श्री अशोक मेहता ने श्वेत पत्र के हिस्से को पढ़कर सुना दिया। भारत-चीन सीमा विवाद आजादी के बाद क्यों खिंचता चला गया और 1962 के युद्ध के बाद भी इसका समाधान नहीं हो पाया, इसका एक विशिष्ट उदाहरण बड़ाहोती ही है।

उत्तराखंड में स्थित बड़ाहोती में चीनी घुसपैठ को लेकर दिए गए इस स्थगन प्रस्ताव में प्रधानमंत्री नेहरू ने कई अजीबोगरीब तर्क दिए। ये तर्क सिर्फ यह जताने के लिए कि यह कोई बड़ा मुद्दा नहीं है और इस पर बातचीत करने की कोई जरूरत नहीं है। नेहरू ने पहला तर्क यह दिया कि यह एक छोटी सी चारागाह की जगह है। वे कहते हैं, 'यह एक बहुत छोटा क्षेत्र है, जो कुछ महीने चारागाह के रूप में काम आता है, अन्यथा वहां पहुंचना कठिन है।' दूसरा तर्क उन्होंने यह दिया कि हमारा समझौता हो गया है और कोई भी वहां नहीं है, जबकि चीनी वहां मौजूद थे। तीसरा तर्क उन्होंने यह दिया कि ये समस्या पहले से चली आ रही है। वे कहते हैं, 'बड़ाहोती एक ऐसा स्थान है, जिसके बारे में बहुत दिनों से झगड़ा है, चीनियों के आने के पहले से भी। चीनी लोग यहां अपनी पुलिस टुकड़ी अथवा एक छोटा सा दल भेजा करते थे और उत्तर प्रदेश सरकार भी अपना पुलिस दल भेजती थी। लगातार दो-तीन साल तक उस छोटे से क्षेत्र में दोनों ओर के दल एक दूसरे के आमने-सामने वहां बैठते रहे और फिर यह निश्चय हुआ कि सशस्त्र दल वहां नहीं भेजने चाहिए और यह निर्णय आपसी बातचीत के द्वारा होना चाहिए न कि एक पक्षीय कार्यवाही के द्वारा।' चौथा तर्क यह दिया कि वहां का मौसम खराब है, और अभी वहां पर हमारे सैनिक नहीं रह सकते। पांचवां तर्क देते हुए एक जगह वे इसे छोटी समस्या बता देते हैं। नेहरू कहते हैं, 'यह झगड़ा चीन में गणतंत्र राज्य स्थापित होने के पूर्व से ही है। यह झगड़ा तिब्बत सरकार से प्रारम्भ हुआ था। कहने का अभिप्राय यह है कि लड़ाई कभी नहीं हुई, लेकिन दोनों ओर एक-दूसरे के विरुद्ध शिकायतें की गई थीं। वे कर एकत्रित करने वाले अपने आदमी भेजा करते थे, जो चारागाह कर तथा अन्य कर एकत्रित किया करते थे। लगभग पिछले 50 वर्षों से सीमा के बहुत से भागों में ऐसा हुआ। यहां तक कि 1947-48-49 में भी ऐसा हुआ। अतः सीमा के दो-तीन स्थानों पर इस समस्या का मुकाबला करना पड़ा। हालांकि ये समस्याएं बहुत छोटी सी थीं।'

यह झगड़ा तिब्बत सरकार से प्रारम्भ हुआ था। कहने का अभिप्राय यह है कि लड़ाई कभी नहीं हुई, लेकिन दोनों ओर एक-दूसरे के विरुद्ध शिकायतें की गई थीं। वे कर एकत्रित करने वाले अपने आदमी भेजा करते थे, जो चारागाह कर तथा अन्य कर एकत्रित किया करते थे। लगभग पिछले 50 वर्षों से सीमा के बहुत से भागों में ऐसा हुआ।

चीनी अतिक्रमण और आक्रमण को लेकर भ्रम की स्थिति

कई वर्षों से चीन भारत के भू-भाग को कतरा-कतरा खाए जा रहा था, लेकिन नेहरू के नेतृत्व में भारत इस बात को यथार्थ की धरातल पर मानने को ही तैयार नहीं था। 1958 तक तो यही पता नहीं चला कि चीन शिंजियांग-तिब्बत हाइवे बनाकर अक्साई चिन को हड़प चुका है। ठीक इसी प्रकार अलग-अलग हिस्सों में चीन घुसपैठ कर रहा था। 29 अप्रैल, 1960 को भी लोकसभा में भारत-चीन को लेकर लंबी चर्चा हुई। इस दौरान सुरेंद्र नाथ द्विवेदी ने साफ कहा कि जनता की इच्छा न होते हुए भी चीन के प्रधानमंत्री को भारत आमंत्रित किया गया। उसका स्वागत किया गया। लेकिन कोई परिणाम नहीं निकला। यहां तक कि इस बात पर भी एकमत नहीं था कि चीन ने भारत में आक्रमण किया है। उन्होंने कहा, 'दोनों प्रधानमंत्रियों की इस संयुक्त विज्ञप्ति में कहा गया है कि दोनों पक्षों के पदाधिकारी कुछ प्रश्नों पर विचार करेंगे, वह भी 4 महीने तक। मैं समझता हूं कि इससे कोई लाभ नहीं होगा। व्यर्थ समय बर्बाद करने से कोई लाभ नहीं। मैं चाहता हूं कि प्रधानमंत्री सभा को यह बताएं कि दोनों पक्षों के पदाधिकारी किन बातों या तथ्यों का परीक्षण करेंगे। क्या इन्हीं तथ्यों के आधार पर चीन के साथ हमारा समझौता होगा, जैसे कि चीन के प्रधानमंत्री ने कहा है। मुझे आश्चर्य है कि हमारे देश में ही चीनी आक्रमण के संबंध में मतभेद हैं। हमारे प्रतिरक्षा मंत्री का कहना है कि यह चीन का अस्थाई प्रवेश है। चीन के प्रधानमंत्री भी इसे आक्रमण नहीं मानते। हमारे साम्यवादी मित्रों को अभी भी संदेह है कि इसे आक्रमण कहा जाए।' वे आगे कहते हैं, 'साम्यवाद और लोकतंत्र के बीच सह-अस्तित्व की बात नहीं चल सकती। हमारे देश में कुछ साम्यवादी गद्दारों को छोड़कर शेष सारा देश एकमत है।'

इससे पहले 12 सितंबर, 1959 की चर्चा के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी का भारत के प्रति दुराग्रह का भी पदार्फाश होता है। बंबई नगर मध्य से सीपीआई सांसद श्रीपद अमृत डांगे के बयान के दौरान कई बार बाकी सांसदों ने सवाल खड़े किए। केंद्रपाड़ा से सांसद सुरेंद्र नाथ द्विवेदी ने तो यहां तक पूछा कि क्या आप भारतीय नहीं हैं? आचार्य कृपलानी ने गाली गलौज से भरे चीनी पत्र की याद दिलाई। वाराणसी से सांसद रघुनाथ सिंह ने तो यहां तक पूछा कि 'आप चीन की तरफ से किस तरह बोल सकते हैं?' डांगे के बयान को सुनने के बाद सांसद ब्रजराज सिंह ने तो कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में यहां तक कह दिया कि 'यह अपनी मौत आप ही मर जाएगा।' कुल मिलाकर भारत-चीन संबंधों में कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका इसे और जटिल बना रही थी।

सरकार के भीतर भी चीनी घुसपैठ को लेकर कितना भ्रम था, इसका नजारा 3 सितंबर, 1962 को संसद में हुई बहस के दौरान भी दिखता है। लोकसभा अध्यक्ष जानकारी देते हैं कि चीन ने लद्दाख में 30 नई चौकियां स्थापित कर ली हैं, इस संदर्भ में प्रधानमंत्री एक वक्तव्य देना चाहते हैं। इस पर गुवाहाटी के सांसद हेम बरूआ पूछते हैं कि कब। तभी संसद में मौजूद वैदेशिक कार्य मंत्रालय में राज्यमंत्री श्रीमती लक्ष्मी मेनन बताती हैं कि प्रधामनंत्री नेहरू मौजूद नहीं हैं और उनकी जगह वो वक्तव्य देंगी। परंतु हेम बरूआ ने सवाल उठाया कि श्वेत पत्र के मुताबिक 20 चौकियां स्थापित हुईं थीं, यानी काफी कम समय में 10 चौकियां बढ़ गईं। यही नहीं, इन नई चौकियों की स्थापना के बाद क्या चीन ने भारत की और जमीन हड़प ली है। इसके बाद विदेश राज्य मंत्री लक्ष्मी मेनन और फिर रक्षा मंत्री कृष्ण मेनन ने जो कुछ कहा, उससे और भ्रम की स्थिति पैदा हो गई। अध्यक्ष महोदय ने भी इस बात को माना और उन्हें कहना पड़ा, 'कई बार सरकार की स्थिति बड़ी दुविधापूर्ण हो जाती है। हम सभी देश के हितों की रक्षा चाहते हैं। अतः हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि जरूरी नहीं है कि सरकार जानबूझकर किसी जानकारी को छिपाए। इस समय इस बात को ध्यान में रखते हुए सदैव उत्तर के लिए आग्रह करना ठीक नहीं होता।'

वाजपेयी ने चीन के कूटनीतिक छल की कलई खोली

29 अप्रैल, 1960 को लोकसभा में हुई परिचर्चा में अटल बिहारी वाजपेयी ने जो कहा, उससे चीन के कूटनीतिक छल की कलई खुल जाती है। उन्होंने कहा, 'भारत और चीन के बीच जो वार्ता हुई थी वह विफल हो गई, तस्वीर के एक ही पहलू को सामने रखना है। जहां तक भारत का संबंध है, निःसंदेह वार्ता विफल हो गई क्योंकि हमारे प्रधानमंत्री जी शांतिपूर्ण समझौता वार्ता द्वारा भारत की भूमि पर चीन के आक्रमण को समाप्त कराने में सफल नहीं हुए। लेकिन जहां तक चीन का प्रश्न है, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इस वार्ता द्वारा उसने अपने तीन उद्देश्यों को पूरा किया है। पहली बात, इस वार्ता के परिणामस्वरूप विश्व का और भारत का ध्यान चीनी आक्रमण की ओर से हटकर किसी सीमा संबंधी कल्पित विवाद की ओर मोड़ा गया है, जिसको हल करने के लिए कठोर कार्रवाई की आवश्यकता नहीं है, मगर सदियों पुराने नक्शे और रिकॉर्ड और दस्तावेजों की गहरी और बारीक छानबीन जरूरी है।

दूसरी बात, भारत की भूमि पर अपने आक्रमण को मजबूत करने के लिए चीन को समय मिल गया, और इस समय का वह लाभ भी उठा रहा है। भारत की भूमि में सड़कों का निर्माण कर रहा है, हवाई अड्डे बना रहा है। जिससे कभी यह वार्ता

कुल मिलाकर देखें तो जिस समय भारत और चीन अपने सीमा विवाद को आसानी से हल कर सकता था, उस दौर में नेहरू के आदर्शवाद और उनकी ढुलमुल नीति की वजह से ये लंबा खींचता चला गया। उस दौर में जहां चीन खुद को ताकतवर, आक्रामक और कूटनीतिक रूप से मजबूत करता चला गया, वहीं नेहरू की जमीन छिन जाने के बाद भी शांति की वकालत करने, युद्ध से दूर भागने की नीति और उनके व्यक्तित्व में आत्मविश्वास की कमी भारत की पहचान बन गई।

का नाटक समाप्त हो जाए और भारत अपनी भूमि को वापस लेने के लिए कोई कार्रवाई करे तो चीन उसको विफल बना सके और तीसरी बात, एक बार फिर से हमने चीन को इस बात का मौका दे दिया है कि वह अपनी शांतिवादिता और पंचशीलप्रियता का ढिंढोरा पीटे, जिसके विरुद्ध उसका आज तक का सारा आचरण रहा है।

मैं समझता हूं इन दृष्टियों से अगर हम विचार करें तो दिल्ली की वार्ता भारत के लिए बड़े घाटे का सौदा रही है। जो संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित किया गया है, उसमें चीनी आक्रमण का उल्लेख नहीं है। जो आक्रमण था वह ह्यडिफरेंसेजह्न रह गए हैं और सीमा संबंधी कागजपत्रों की जांच- पड़ताल के लिए अफसरों की बैठक का आयोजन किया जा रहा है, और भारत ने अपनी भूमि में अपने आदमी भेजने के अधिकार का परित्याग कर दिया है। मैं समझता हूं यह भारत के हितों के अनुकूल नहीं माना जा सकता।'

चीनी आक्रमण के समय भी नेहरू का आदर्शवाद हावी

भारत-चीन युद्ध चल रहा था। चीनी सेना एक-एक कर भारतीय जमीन पर कब्जा कर रही थी। उसी समय 8 नवंबर, 1962 को प्रधानमंत्री नेहरू संसद में आपातकाल की घोषणा का प्रस्ताव पेश करते हैं। उस दौरान उन्होंने पहली बार माना कि 5 साल से चीन भारत पर आक्रमण कर रहा है। उन्होंने कहा, 'उत्तर में 5 साल तक हमारी सीमा पर चीनियों ने हम पर आक्रमण जारी रखा है। शुरू में यह आक्रमण छिप कर होता था। कभी-कभी कुछ मुठभेड़ भी होती थी, जिन्हें सीमा घटनाएं कहा जा सकता है। इस समय हमें भारी फौजों के एक नियमित हमले का सामना करना पड़ा है।' वे आगे कहते हैं, 'हमारी सीमाओं पर 5 वर्षों में चीन के अतिक्रमणों से यद्यपि काफी परेशानी हुई, फिर भी हमें यह ख्याल नहीं था कि चीन भारी फौजों से भारत पर आक्रमण करेगा। अब हमने आपको देख लिया है और इससे हमें और बहुत से देशों को धक्का पहुंचा है।'

इसी भाषण के दौरान पंडित नेहरू की बातें बेहद चौंकाने वाली, हैरान करने वाली थीं। वे कहते हैं कि संयुक्त राष्ट्र में चीन को जगह दिए जाने का वो अब भी समर्थन करेंगे। उन्होंने कहा, 'चीन की वर्तमान सरकार का संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रतिनिधित्व नहीं है। माननीय सदस्य हैरान होते हैं जब हम प्रतिनिधित्व का समर्थन करते हैं। हमने वर्तमान हमले के बावजूद चीन का समर्थन किया है। यह पसंद या नापसंद का प्रश्न नहीं है। यदि चीन का संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व न हो, तो विश्व में निःशस्त्रीकरण नहीं हो सकता, क्योंकि यह तो हो नहीं सकता कि सारा विश्व तो निःशस्त्रीकरण अपना ले और चीन को पूरी तरह शस्त्रों से लैस रहने दिया जाए। इसलिए मुझे हर्ष है कि हमने क्रोध के बावजूद अपना दृष्टिकोण कायम रखा है और इसका समर्थन भी किया है।'

लेकिन इसी चर्चा के दौरान जबलपुर के सांसद डॉ. गोविंद दास ने जो बात कही, उसका जिक्र करना भी जरूरी है। उन्होंने नेहरू नीति को बदलने की वकालत की। 8 नवंबर, 1962 को लोकसभा में चर्चा के दौरान गोविंद दास ने बताया कि चीन के साथ भारत की नीति क्या होनी चाहिए। उन्होंने कहा, 'आज चीन मैकमोहन लाइन को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। जब से चीन का झगड़ा उठा है, मैने कई बार इस सदन में कहा है कि अगर उसको मैकमोहन लाइन स्वीकार नहीं है, तो हमें भी उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए। हमारे रामायण, महाभारत, पुराणों और काव्यों आदि में मानसरोवर और कैलाश का भारत के अंग के रूप में उल्लेख आया है। हम को कहना चाहिए कि हमको भी मैकमोहन लाइन स्वीकार नहीं है और हम भी आज मानसरोवर और कैलाश को अपने देश में लाना चाहते हैं।'

कुल मिलाकर देखें तो जिस समय भारत और चीन अपने सीमा विवाद को आसानी से हल कर सकता था, उस दौर में नेहरू के आदर्शवाद और उनकी ढुलमुल नीति की वजह से ये लंबा खींचता चला गया। उस दौर में जहां चीन खुद को ताकतवर, आक्रामक और कूटनीतिक रूप से मजबूत करता चला गया, वहीं नेहरू की जमीन छिन जाने के बाद भी शांति की वकालत करने, युद्ध से दूर भागने की नीति और उनके व्यक्तित्व में आत्मविश्वास की कमी भारत की पहचान बन गई। नेहरू में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के बीच नेतागीरी करने का लोभ तो नजर आता है, वहीं दूसरी तरफ बड़ी शक्तियों से दूरी को वो अपनी ताकत मान लेते हैं। नेहरू के इस आदर्शवाद का चीन ने पूरा फायदा उठाया। ऐसा नहीं था कि नेहरू को इस गलती का एहसास कराने वाला कोई नहीं था। एक तरफ जहां अटल बिहारी वाजपेयी से लेकर आचार्य कृपलानी तक ने उनकी गलतियों को उजागर किया, वहीं उनके समय में ही कांग्रेसी सांसदों ने नीतियों को बदलने की वकालत की। लेकिन नेहरू आखिर तक अपने आदर्शवाद की दुनिया में ही गोते लगाते रहे, जिसका खामियाजा आज भी देश भुगत रहा है।

(लेखक वरिष्ठ टीवी पत्रकार हैं। इस समय ब्लूक्राफ्ट डिजिटल फाउंडेशन में वाइस प्रेसिडेंट के तौर पर कार्यरत हैं। उन्हें उनके ईमेल hcburnwal@gmail.com के जरिए संपर्क किया जा सकता है।)

अधर में ऑनलाइन परीक्षा

श्वेतांक पाण्डेय

कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि किसी भी शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थियों का शैक्षणिक मूल्यांकन मील का पत्थर है। परीक्षाओं में प्रदर्शन विद्यार्थियों को आत्मविश्वास और संतुष्टि देता है। ये बातें मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने कही। शिक्षामंत्री का ये बयान उस समय आया, जब ऑनलाइन परीक्षाओं के खिलाफ मोचार्बंदी तेज हो गई है। ज्यादातर छात्र विश्वविद्यालयों व कॉलेजों में 30 सितंबर तक अंतिम वर्ष की परीक्षा कराने के खिलाफ हैं। इसके पीछे उनके अपने अपने दावे और तर्क हैं, जिसको सिरे से खारिज भी नहीं किया जा सकता ।

विद्यार्थियों का कहना है कि पिछले सालों के प्रदर्शन, असाइनमेंट और प्रोजेक्ट के आधार पर अंतिम वर्ष या समेस्टर का मूल्यांकन करना चाहिए। इससे कोरोना महामारी के दौरान उन पर परीक्षा का दबाव नहीं पड़ेगा। इसके विपरीत यूजीसी अपने फैसले से पीछे हटने को तैयार नहीं लग रहा है। उसने ऑनलाइन परीक्षाओं का लगभग मन बना रखा है।

यूजीसी ने जुलाई में विश्वविद्यालयों में परीक्षाएं कराने को लेकर दिशानिर्देश जारी किए थे। उसके आनुसार सितंबर, 2020 तक परीक्षाएं आयोजित करानी जरूरी हैं। परीक्षाएं ऑनलाइन या ऑफलाइन या मिश्रित (ऑनलाइन और ऑफलाइन) तरीकों से कराई जाएंगी। मिश्रित तरीके का मतलब है कि जो बच्चे ऑनलाइन परीक्षा के नतीजों से संतुष्ट ना हों, तो विश्वविद्यालय उनके लिए ऑफलाइन परीक्षा आयोजित करा सकता है। जो विद्यार्थी किसी वजह से परीक्षा नहीं दे पाता है, उसे विश्वविद्यालय अपनी सुविधानुसार विशेष परीक्षा देने का मौका दे सकता है। जिन विद्यार्थियों की बैकलॉग है यानी पहले के कुछ पेपर वो पास नहीं कर पाए हैं, उनकी भी ऑनलाइन या ऑफलाइन या मिश्रित तरीके से परीक्षा ली जाएगी। वहीं कुछ विश्वविद्यालयों में ऑनलाइन परीक्षाएं आयोजित कराने का तरीका ये होगा कि स्टूडेंट्स को ऑनलाइन प्रश्न पत्र डाउनलोड करना है। प्रश्नों के जवाब लिखकर उत्तर पुस्तिका को अपलोड करके सब्मिट कर देना है। परीक्षा कुल तीन घंटे की होगी। इसमें एक घंटे का समय डाउनलोड और अपलोड करने के लिए मिलेगा। हालांकि, विश्वविद्यालय दूसरा तरीका भी अपना सकते हैं।

इस पूरे मुद्दे पर शिक्षकों और कुलपतियों की राय भी एक जैसी नहीं है। कुछ इसे नई शुरूआत मान रहे हैं तो वहीं कुछ बच्चों के भविष्य से खिलवाड़ मान रहे हैं। उनका कहना है कि 'जेएनयू के वीसी एम जगदीश कुमार यूजीसी के संशोधित दिशा-निदेर्शों का स्वागत कर रहे हैं। जो छात्र ऑनलाइन परीक्षा नहीं दे पाएंगे, यूजीसी ने विश्वविद्यालयों को ऐसे छात्रों के लिए विशेष परीक्षाओं के आयोजन की अनुमति दी है।'

'जेएनयू में बहुत से स्कूल पहले से ही ऑनलाइन परीक्षाओं का आयोजन कर चुके हैं। जिन विद्यार्थियों के पास इंटरनेट का एक्सेस नहीं है और जो ऑनलाइन परीक्षा नहीं दे पाए, ऐसे विद्यार्थियों के लिए विश्वविद्यालय खुलने के बाद परीक्षाओं का आयोजन कराया जाएगा।'

- एम.जगदीश कुमार

ऐसा कहां संभव है कि मामला इतना बड़ा हो और उसमें राजनीति न हो। यहां भी राजनीति शुरू हो चुकी है। नेशनल स्टूडेंट्स यूनियन ऑफ इंडिया (एनएसयूआई) और अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) ने अपनी सुविधा के अनुसार इसपर अपना पक्ष रखना शुरू कर दिया है। एनएसयूआई के राष्ट्रीय महासचिव नागेश करियप्पा का कहना है कि ह्यदुनिया भर के विश्वविद्यालयों ने अंतिम परीक्षा रद्द कर दी है। आईआईटी तक ने अपनी डिग्री के मूल्य को कम करने की चिंता किए बिना ऐसा किया है। छात्रों ने दो मांगें रखी हैं- पिछले प्रदर्शन के आधार पर सभी परीक्षाओं में प्रोन्नति प्रदान करना और साथ ही सभी परीक्षाओं को रद्द करना। गरीब ग्रामीण छात्रों और बढ़ती कोविड 19 संख्या के लिए पहुँच की कमी के कारण ऑनलाइन कक्षाएं और परीक्षा भेदभावपूर्ण हैं, पिछले प्रदर्शन के आधार पर छात्रों को बढ़ावा, स्नातक करके अनिश्चितता को समाप्त करना सबसे अच्छा है। '

एनएसयूआई से अलग एबीवीपी ने कुछ मामलों में अपनी शर्त रखी है। विद्यार्थी परीषद के मीडिया कन्वेनर अशुतोष सिंह का कहना है कि ह्यहम असाइनमेंट बेस्ड मूल्यांकन की मांग कर रहे हैं । हम यूजीसी की गाइडलाइंस का स्वागत कर रहे हैं। साथ ही हमने विभिन्न परीक्षा विकल्पों को दिए जाने की मांग की है। जिससे कोई भी छात्र परीक्षा देने से वंचित न रह जाए।'

फिलहाल यूजीसी के फैसले को न्यायालय में चुनौती दी गई है। जिसपर फास्ट ट्रैक कोर्ट सुनवाई कर रहा है। इस याचिका पर सर्वेच्च न्यायालय ने यूजीसी से जवाब मांगा है। जस्टिस अशोक भूषण की अध्यक्षता वाली तीन सदस्यीय पीठ मामले की सुनवाई कर रही है।

मंत्रिमंडल का शपथग्रहण

राज्यपाल का पवित्र दायित्व

...उन्होंने प्रोटोकॉल तोड़ते हुए मुझे अपनी कार में बैठाया। मेरे बैठते ही उन्होंने प्रसन्न होकर कहा, ''आपने सरकार बनवाते समय कदम-दर-कदम संविधान का पालन किया था। मैं आपको 'फौलो' कर रहा था।'' मेरे मन में अपने निर्णय के बारे में यदि थोड़ा भी मैल था, वह धुल गया। प्रखर नेता, संविधानविद राष्ट्रपति के मुख से शब्द नहीं, मानो गंगाजल निःसरित हुआ था। मेरा अंतःकरण साफ था, और अधिक स्वच्छ एवं निर्मल हो गया।

मृदुला सिन्हा, पूर्व राज्यपाल, गोवा

संघीय व्यवस्था प्रणाली में राज्यपाल अपने राज्य का शासन प्रमुख होता है। राष्ट्र प्रमुख राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत राज्यपाल के अधिकार क्षेत्र में स्वयं अपने को ही सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद की जरूरत होती है। संविधान के भाग-6 के अनुच्छेद 163 में वर्णित है-

''जिन बातों में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि अपने कृत्यों या उनमें से किसी को अपने विवेकानुसार करे, उन बातों को छोड़कर राज्यपाल को अपने कृत्यों का प्रयोग करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होगी जिसका प्रधान, मुख्यमंत्री होगा।'' राज्यपाल

सर्वप्रथम मुख्यमंत्री के पद का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत की गई समर्थन सूची की जाँच कर उस व्यक्ति को मुख्यमंत्री पद का शपथ दिलाता है।

मैंने गोवा के राज्यपाल के रूप में 31 अगस्त, 2014 को शपथ ग्रहण किया। मुझे मुंबई उच्च न्यायालय के न्यायाधीश मोहित शाह ने शपथ दिलाई। गोवा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर परिंकर जी, मंत्रिगण तथा राज्य के प्रमुख जन उपस्थित थे। मंत्रिपरिषद के 12 सदस्यों से भी पहला परिचय हुआ। मेरे कार्यकाल की गतिविधियाँ प्रारंभ हुई। सर्वप्रथम मैंने 'भारत के संविधान' के छठे अध्याय 153 अनुच्छेद से लेकर 237 अनुच्छेद तक वर्णित विभिन्न धाराओं, जो राज्यपाल के कार्यक्षेत्र का वर्णन करते हैं, गंभीरता से पढ़कर समझने की कोशिश की। राज्यपाल के अधिकारों-कर्तव्यों तथा अपने विवेक से संपन्न करने वाली जिम्मेदारियों का ठीक से अध्ययन-मनन किया। मन-ही-मन यह संकल्प लिया कि अपने द्वारा ली गई शपथ का अक्षरशः पालन करने की कोशिश करुँगी।

लोकतांत्रिक प्रणाली से लोकप्रिय मुख्यमंत्री श्री परिंकर की सरकार चल रही थी। 2013 में श्री परिंकर गोवा के मुख्यमंत्री बने थे। 2014 में अचानक उन्हें दिल्ली में देश के केंद्रीय मंत्री पद की शपथ दिलवाई गई। उन्हें रक्षा मंत्रालय दिया गया। अपने काम के प्रति ईमानदार नीयत, सूझबूझ और राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत श्री परिंकर ने रक्षा मंत्रालय में भी अपनी विशेष पहचान बना ली। गोवा में मुख्यमंत्री के लिए श्री लक्ष्मी कांत पारसेकर (तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री) का नाम पार्टी ने चयनित किया था। मैंने पहली बार उन्हें मुख्यमंत्री पद की शपथ 08 नवंबर, 2014 को दिलाई। सरकार अच्छी तरह चल रही थी। उस सरकार ने भी अपना कार्यकाल पूर्ण किया।

2017 में पुनः विधान सभा का चुनाव आ गया। चुनाव के पूर्व भाजपा नेतृत्व के चयन के लिए गहमागहमी रही। अंततः श्री परिंकर को चुनाव का नेतृत्व सौंपकर दिल्ली से गोवा भेजा गया। मात्र 40 विधान सभा सदस्यों वाले गोवा राज्य में राजनैतिक उथल-पुथल बहुत रहती है।

2017 में पुनः विधान सभा का चुनाव आ गया। चुनाव के पूर्व भाजपा नेतृत्व के चयन के लिए गहमागहमी रही। अंततः श्री परिंकर को चुनाव का नेतृत्व सौंपकर दिल्ली से गोवा भेजा गया। मात्र 40 विधान सभा सदस्यों वाले गोवा राज्य में राजनैतिक उथल-पुथल बहुत रहती है। पूर्व के चुनावी गहमागहमी और सरकारों द्वारा इतिहास बनाने की प्रक्रिया से मैं अवगत थी। राज्य में चुनावी इतिहास में हुए कई चुनावों में पार्टियों के बीच गठबंधन या चुनाव के उपरांत गठबंधन की कहानियाँ मैंने सुनी थी। चुनाव रिजल्ट आने पर किसी भी पार्टी को पूर्ण बहुमत नहीं आया था। राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के पक्ष में सबसे अधिक सदस्यों के चुनकर आने के रिजल्ट देख-सुन कर मेरे मन में विश्वास जगा था कि कांग्रेस की ही सरकार बनेगी। यद्यपि कांग्रेस को पूर्ण बहुमत नहीं मिला था। हंग विधान सभा बनी थी। विरोधी पार्टी के पूर्व की गतिविधियों को स्मरण कर मैं आशान्वित थी कि अन्य दो पार्टियों गोवा फॉरवर्ड और गोमांतक पार्टी के तीन-तीन विधायक चुनकर आए थे, जिनके इतिहास बताते थे कि वे संभवतः कांग्रेस के साथ ही जाएँगे। लोकतंत्र में तो संख्या का खेल होता है। दिनभर मेरी उम्मीद जिंदा रही कि कांग्रेस पार्टी के विधायक अपना लीडर चुन लेंगे और मुझसे समय लेकर सरकार बनाने का अपना दावा पेश करने मेरे पास आएँगे। लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। भारतीय जनता पार्टी की तरफ से भी कोई नहीं आया।

इतना तो पता था कि कांग्रेस पार्टी के नेता श्री दिग्विजय सिंह (गोवा के प्रभारी) गोवा आ गए थे और दल की सरकार बनाने के लिए दिनभर नेता के चुनाव में उलझे थे। अन्य दलों से भी उन्हें समर्थन लेना था। बहरहाल, उनकी तरफ से न चिट्ठी न संदेश, कुछ भी नहीं आया। सायंकाल 6 बजे परिंकर जी का फोन आया। उन्होंने कहा- ''विधायक दल के नेता के रूप में उन्नीस विधायकों की सूची (13 भाजपा...3.....3) तथा सभी विधायकों के साथ आना चाहता हूँ।'' मैंने सहर्ष उन्हें समय दे दिया। मैंने दिन में ही अपने सचिव श्री रूपेश कुमार ठाकुर तथा एडवोकेट जनरल गोवा के साथ संविधान के मंत्रिपरिषद के गठन के पृष्ठ के एक-एक शब्द को ध्यान से पढ़ा और समझा था। उनके अर्थ को गहराई से समझने की कोशिश की थी। राज्य के एडवोकेट जनरल ने अपनी तरफ से ऐसा होगा तो, ऐसा निर्णय, के आधार पर कई सुझाव दे दिए थे।

ठीक समय पर श्री परिंकर राजभवन में सभी 19 विधायकों के साथ उपस्थित हुए। सबों को दरबार हॉल में बैठाया गया। मैं अपने सचिव एवं अन्य अधिकारियों के साथ दरबार हॉल में उपस्थित हुई। श्री परिंकर ने एक सूची मेरे हाथ में थमाकर अपने नेतृत्व में सरकारबनाने के लिए शपथ ग्रहण करवाने की अनुमति माँगी। मैंने उनकी सूची हाथ में लेकर एक-एक विधायक से उनका परिचय, दल और उनके चुनाव क्षेत्र के नाम के साथ लेना प्रारंभ किया।

प्रथम पंक्ति में बैठे एक विधायक ने अपना मोबाइल ऑन कर रिकॉर्डिंग करना प्रारंभ किया। मैंने तत्काल उन्हें रोक दिया और आज्ञा दी कि कोई भी विधायक अपना मोबाइल ऑन नहीं करेगा। एक-एक विधायक का परिचय सुनते हुए मैं उनके चेहरे पर उभरे भावों का भी अध्ययन कर रही थी। सरकार बनाने की अनुमति देने के पूर्व राज्यपाल को विधायकों की निष्ठा और भावों की भी जानकारी लेना आवश्यक होता है, विशेषकर उन छोटी पार्टियों के विधायकों का, जो बड़े दल को सरकार बनाने का समर्थन देते हैं। तभी तो विधायकों की संख्या एवं दस्तखत के साथ-साथ राज्यपाल अपने विवेक का भी सहारा लेता है, लेना चाहिए। सरकार बनाने की स्वीकृति देना राज्यपाल की एक पवित्र जिम्मेदारी होती है। पूरी निष्ठा एवं मनोयोग से यह समाजोपयोगी निर्णय लेना चाहिए। आखिरकार मुख्यमंत्री और मंत्रिपरिषद ही राज्यपाल के राज्य प्रमुख के नाते कार्य करने में सहायक और सलाहकार होते हैं। संविधान के भाग-6 के 154 अनुच्छेद में स्पष्ट लिखा है- ''राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होगी और इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा।''

अर्थात राज्यपाल को अपने कार्यों के संचालन के लिए भी

एक सुयोग्य, समझदार, संवेदनशील और सक्रिय मुख्यमंत्री का चयन करना पड़ता है। लेकिन यह कार्य वह स्चयं नहीं कर सकता या सकती है। किसी दल द्वारा, अपनी संख्या कम होने पर भी अन्य दलों से समर्थन लेकर सूची तैयार करनी होती है। यह विधायकों द्वारा चयनित नेतृत्व का ही कार्य है। राज्यपाल के दखल की कहीं गुंजाइश नहीं होती है। लेकिन अपनी चेतना एवं अंतर्मन से मुख्यमंत्री का चयन उसी का दायित्व होता है।

मैंने श्री परिंकर को तीसरे दिन 12 मार्च, 2018 को ही शपथ ग्रहण के लिए निमंत्रण भेजवा दिया था। इसके बाद कांग्रेस पार्टी ने समय मांगा। मैंने उन्हें भी सहर्ष समय दिया। उसी संध्या को वे अपने विधायकों के साथ आ गए। न विधायक दल का नेता का नाम, न विधायकों की पूरी सूची। श्री दिग्विजय सिंह को देखकर मेरे मुँह से निकला था- ''आप अब आए, मैं कल से आपका इंतजार कर रही थी।''

उनसे बातचीत से यह पता चला कि उन्होंने न अपने दल का नेता चुना था न समर्थन के लिए दूसरे दलों से बात की थी। उन्होंने कहा, ''आप हमारी पार्टी को सरकार बनाने का निमंत्रण दीजिए। राष्ट्रीय कांग्रेस ही सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी है। श्री परिंकर को दिया निमंत्रण निरस्थ कर दीजिए।'' वर्षा ऋतु होने के कारण राजभवन के प्रांगण में शपथ ग्रहण के लिए टेंट लगाने का काम लगभग पूर्ण हो चुका था।

मेरे द्वारा उनके सुझाव पर मनन नहीं होने पर वे दूसरे दिन ही सुप्रीम कोर्ट चले गए थे। सुप्रीम कोर्ट ने भी उनकी माँग पूरी नहीं की। उल्टा राज्यपाल के पास विधायकों की उचित संख्या के साथ जाकर सरकार बनाने का दावा करने में असफल रहने के लिए उनकी असफलता पर आश्चर्य प्रगट करते हुए फटकार भी लगाई थी।

मैंने श्री मनोहर परिंकर और उनके मंत्रिमंडल को शपथ दिलवा दी। श्री परिंकर के काम सरल करने में श्री नितिन गडकरी (केंद्रीय प्रभारी, गोवा) का बड़ा हाथ था।

दूसरे दिन किसी पत्रकार ने मुझसे दूरभाष पर ही कई प्रश्नों के बीच एक प्रश्न पूछा था, ''निर्णय लेने के पूर्व आपकी बात किसी केंद्रीय मंत्री से तो नहीं हुई।'' मैंने कहा था, ''दो केंद्रीय मंत्रियों से बातें हुई, उन्हें मैंने अपना निर्णय सुनाने के लिए फोन किया था।'' उसने थोड़ी अस्पष्ट शब्द मेरे मुँह में डालकर अपने अखबार में छाप दी। फिर क्या था, इसी बात को लेकर मेरी गलती निकाली जाने लगी। मैंने कोई सफाई नहीं दी। मेरे निर्णय की प्रक्रिया इतनी स्पष्ट और संवैधानिक थी कि मुझे सफाई देने की जरूरत ही नहीं थी।

मेरे आमंत्रण पर कुछ ही दिनों बाद श्री प्रणव मुखर्जी (राष्ट्रपति) गोवा विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में भाषण के लिए गोवा आए थे। उन्होंने प्रोटोकॉल तोड़ते हुए मुझे अपनी कार में बैठाया। मेरे बैठते ही उन्होंने प्रसन्न होकर कहा, ''आपने सरकार बनवाते समय कदम-दर-कदम संविधान का पालन किया था। मैं आपको 'फौलो' कर रहा था।'' मेरे मन में अपने निर्णय के बारे में यदि थोड़ा भी मैल था, वह धुल गया। प्रखर नेता, संविधानविद राष्ट्रपति के मुख से शब्द नहीं, मानो गंगाजल निःसरित हुआ था। मेरा अंतःकरण साफ था और अधिक स्वच्छ एवं निर्मल हो गया। मैंने राज्यपाल के नाते सही निर्णय लिया था।

अपने पाँच वर्षीय कार्यकाल के दौरान गोवा में आगे भी दो बार नई सरकार को शपथ दिलाने का अवसर मिला। गोवा के चुनाव के बाद पिछले पाँच वर्षों में जिस-जिस राज्य में चुनाव हुए हैं, हंग विधान सभा आने पर गोवा के राज्यपाल के निर्णय की चर्चा जरूर होती है। कॉंग्रेस के लोग संसद से लेकर पत्रकार वार्ता अथवा सम्मेलनों में मुख्यमंत्री के लिए मेरे द्वारा लिए गए निर्णय को गलत ठहराते हैं। मुझे हँसी आती है, जब लोग चैनल पर कहे, सुने जाते हैं कि गोवा में चुनाव परिणाम में सबसे बड़ी पार्टी को राज्यपाल का निमंत्रण नहीं मिला।

यह स्मरण कर मैं हँसती हूँ भी कि सबसे बड़ी पार्टी ने सरकार बनाने के दावा करने के लिए मुझसे समय ही नहीं मांगा। देर से आकर भी न मुख्यमंत्री का नाम न अन्य दलों के समर्थन सूची लाए।

मुझे संतोष एवं प्रसन्नता है कि मैंने अपने कर्तव्य का पालन संविधान अनुकूल एवं ईमानदारी से किया। मुझे इसका संतोष है। यूँ तो जीवन का हर व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक कार्य ईश्वर को समर्पित कर ही करना चाहिए, लेकिन लोकतंत्र में राज्यपाल का काम बहुत जिम्मेदारी का होता है। राज्यपाल द्वारा शपथ लेते समय ही ''पृष्ट 87-अनुच्छेद 4'' दुहराया जाता है।

मैंने श्री परिंकर को तीसरे दिन 12 मार्च, 2018 को ही शपथ ग्रहण के लिए निमंत्रण भेजवा दिया था। इसके बाद कांग्रेस पार्टी ने समय मांगा। मैंने उन्हें भी सहर्ष समय दिया। उसी संध्या को वे अपने विधायकों के साथ आ गए। न विधायक दल का नेता का नाम, न विधायकों की पूरी सूची। श्री दिग्विजय सिंह को देखकर मेरे मुँह से निकला था- ''आप अब आए, मैं कल से आपका इंतजार कर रही थी।''

संविधान के हर पृष्ठ पर अंकित हर शब्द के बाहर और भीतर के अर्थ को समझना होता है। तटस्थ स्थिति में रहना अपेक्षित होता है। ''ना काहू से दोस्ती, ना काहू से बैर'' वाली स्थिति। दरअसल जनता के हित में निर्णय लेने की सोच लेने पर कोई अदृश्य शक्ति है, जो सहायता करती है।

मुख्यमंत्री को शपथ दिलाने की स्थिति श्री मनोहर परिंकर जी की मृत्यु के बाद पुनः एकबार उत्पन्न हुई। लगभग एक वर्ष तक कैंसर की बीमारी से लड़ते-लड़ते भी थके नहीं थे श्री परिंकर। अंत में उन्हें हार माननी पड़ी। विधाता के आगे कब, किसकी चली है।

नए मुख्यमंत्री को शीघ्रातिशीघ्र शपथ दिलानी थी। भा.ज.पा के नौजवान नेता डॉ. प्रमोद सावंत का नाम आगे आया। दोनों सहयोगी पार्टियों ने सहर्ष समर्थन दिया। इस बार भी निष्ठापूर्वक ही निर्णय लिया। राज्यपाल के नाते अपने शपथ का अंतिम अंश- ''गोवा की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूँगी।'' इस बार प्रेरणा का कार्य कर रहा था।

मेरे कार्यकाल का पाँच वर्ष पूर्ण हुआ। मैं वापस दिल्ली अपने घर में आ गई। मुझे संतोष और आत्मिक सुख मिलता है, जब अपने राज्यपाल के काल की घटनाओं को स्मरण करती हूँ। मेरे कार्यों पर नजर रखने वाले समाज के चिंतक और विचारकगण भी मुझे मेरे कार्य के लिए साधुवाद देते हैं।

इतराने लगीं सरयू की लहरें

श्रीराम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट के अध्यक्ष महंत नृत्यगोपाल दास के उत्तराधिकारी महंत कमल नयन दास का कहना है कि अयोध्या के हर घर, मठ, मंदिर और सरयू के तट इस अवसर पर दीपों की रोशनी से जगमग होंगे। ट्रस्ट के अलावा विश्व हिन्दू परिषद ने देश के अलावा पूरी दुनिया में फैले सनातनी श्रद्धालुओं से पांच अगस्त को अपने-अपने घरों और देवालयों को दीपों से सजाने का अनुरोध किया है।

पीएन द्विवेदी

चौदह वर्ष का वनवास पूर्ण कर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जब अयोध्या वापस हो रहे थे, अवधपुरी का जन-जन उनके दर्शन को आतुर था। स्वागत में पूरे नगर को दीप मालाओं से सजाया गया था। त्रेता युग का यह नजारा इस समय रामनगरी में जीवंत हो उठा है। करीब पांच सौ साल की लम्बी लड़ाई के बाद यहां का कण-कण पांच अगस्त की वाट निहार रहा है, जब अभिजीत मुहूर्त में देश के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी श्रीराम मंदिर के गर्भ गृह का भूमि पूजन कर मंदिर निर्माण की आधारशिला रखेंगे।

भूमि पूजन के अनुष्ठान को लेकर समूची साकेत नगरी उल्लसित है। मठों और मंदिरों को सजाया संवारा जा रहा है। चारों तरफ तोरण द्वार तैयार हो रहे हैं। रंगों और कूंचियों के सहारे दीवारों पर त्रेता युग के संदेश उकेरे जा रहे हैं। पेंटिंग्स में रामराज की संकल्पना दशार्यी जा रही है। इन सब को देख सरयू की लहरें भी इतराने लगी हैं।

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ भी इस ऐतिहासिक क्षण को वैश्विक स्वरूप देना चाहते हैं। तैयारियों का जायजा लेने अयोध्या आये मुख्यमंत्री योगी ने जनप्रतिनिधियों, अधिकारियों और जनसामान्य सभी से कहा कि भूमि पूजन का उत्सव वैसा ही दिव्य और भव्य होना चाहिए जैसा त्रेता युग में श्रीराम की अयोध्या वापसी के वक्त हुई थी। उन्होंने कहा कि यह आयोजन महज एक दिन का ही नहीं है। चार दिन पहले एक अगस्त से ही इसे वैश्विक महोत्सव का आकार देना होगा। मुख्यमंत्री के अनुरोध के बाद 27 जुलाई से ही अवधपुरी में दीप प्रज्जवलन का कार्य शुरू हो गया। पहले दिन बीकानेर के श्यामसुंदर सोनी ने सरयू तट पर 21000 दीपों को प्रज्वलित किया। इस दौरान दीपमालाओं से भगवान राम के नाम और ओम की आकृतियां उकेरी गईं।

राम मंदिर परिसर की पूरी 70 एकड़ जमीन पर रामायणकालीन ढांचा बनाकर त्रेतायुग का अहसास कराने की योजना है। परिसर में नक्षत्र वाटिका बनाई जा रही है। 21 नक्षत्रों के पेड़ लगाए जा रहे हैं। वाल्मीकि रामायण में वर्णित पेड़ो को भी लगाया जा रहा है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश सरकार के संस्कृति विभाग द्वारा इस अवसर पर एक वृहद प्रदर्शनी के आयोजन की भी योजना है। इसमें राम जन्म आंदोलन के पूरे घटनाक्रम और उसमें प्रमुख

भूमिका निभाने वालों का ब्योरा होगा। जन्म भूमि स्थल की खुदाई में मिले पुरावशेष भी प्रदर्शनी में दिखाए जाएंगे। साथ ही राम की सांस्कृतिक विश्वयात्रा से जुड़े तमाम साक्ष्यों को भी दशार्ये जाने की योजना है। प्रदर्शनी स्थल पर श्रीराम मंदिर के संशोधित मॉडल को भी प्रदर्शित करने का प्रस्ताव है।

जमावड़े को लेकर बरती जा रही सावधानी

कोरोना संक्रमण के चलते आयोजन में लोगों के जमावड़े को लेकर सावधानी भी बरती जा रही है। श्रीराम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट के सदस्य अनिल मिश्रा के अनुसार कोरोना महामारी को देखते हुए अधिकतम 200 लोग ही कार्यक्रम में शामिल हो सकेंगे। इनमें भाजपा के वरिष्ठ नेता लालकृष्ण आडवाणी, डॉ0 मुरली मनोहर जोशी, उमा भारती और विनय कटियार जैसे उन नेताओं को न्योता भेजा जा रहा है जिनकी राम मंदिर आंदोलन में सक्रिय भूमिका रही है। इस सूची में आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत, भैयाजी जोशी, डॉ0 कृष्णगोपाल और विश्व हिन्दू परिषद के कार्यकारी अध्यक्ष आलोक कुमार के नाम भी शामिल हैं। मिश्रा के मुताबिक, कार्यक्रम में सभी धर्मों के आध्यात्मिक नेताओं को भी न्योता देने का प्रस्ताव है। सूत्रों की माने तो इस अनुष्ठान में साहित्य, संस्कृति, कला और औद्योगिक क्षेत्र से जुड़े लोगों को भी आमंत्रित किया जा रहा है। इनमें रिलायंस समूह के मुखिया मुकेश अंबानी और अडानी ग्रुप के चेयरमैन गौतम अडानी शामिल हैं।

कोरोना के कारण ही पूरे कार्यक्रम का दूरदर्शन पर लाइव प्रसारण किया जाएगा। ट्रस्ट के महासचिव चंपत राय ने देश के अंदर और बाहर रहने वाले सभी राम भक्तों से अपील की है कि जो जहां है वहीं से भूमि पूजन का लाइव प्रसारण देखे और अपने आराध्य का पूजन करे।

मुहूर्त को लेकर विवाद

भूमि पूजन का मुहूर्त पांच अगस्त को अपराह्न 12 बजकर 15 मिनट और 15 सेकंड से अगले 32 सेकेंड के बीच सुनिश्चित किया गया है। इसी 32 सेकंड की अल्पावधि में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भूमि पूजन कर मंदिर की आधारशिला रखेंगे। इस

> **भूमि पूजन का अनुष्ठान अभिजीत मुहूर्त और सर्वार्ध सिद्धि योग में होगा, जो इस कार्य के लिए सर्वथा शुभ है। उन्होंने कहा कि भगवान श्री राम का जन्म भी इसी अभिजीत मुहूर्त में ही हुआ था। कमल नयन दास के अनुसार भूमि पूजन का मुहूर्त और कुंडली काशी के प्राख्यात ज्योतिषाचार्य गणेश्वर शास्त्री द्रविड़ ने बनाई है।**

बीच द्वारिका पीठ के शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती और उनके शिष्य स्वामी अविमुक्तेश्वरानंद सरस्वती ने मुहूर्त को लेकर सवाल खड़ा कर दिया। उन्होंने पांच अगस्त की तिथि को भूमि पूजन के लिए अशुभ बताया।

दूसरी ओर महंत कमल नयन दास का कहना है कि भूमि पूजन का अनुष्ठान अभिजीत मुहूर्त और सर्वार्ध सिद्धि योग में होगा, जो इस कार्य के लिए सर्वथा शुभ है। उन्होंने कहा कि भगवान श्री राम का जन्म भी इसी अभिजीत मुहूर्त में ही हुआ था। कमल नयन दास के अनुसार भूमि पूजन का मुहूर्त और कुंडली काशी के प्राख्यात ज्योतिषाचार्य गणेश्वर शास्त्री द्रविड़ ने बनाई है। हनुमानगढ़ी के श्रीमहंत और अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद के पूर्व अध्यक्ष महंत ज्ञानदास तो मुहूर्त पर उठाये गये सवाल को अनर्गल प्रलाप बताते हैं।

भूमि पूजन अनुष्ठान को पूरे विधि विधान से सम्पन्न कराने के लिए ट्रस्ट की तरफ से अयोध्या के अलावा काशी और मथुरा से 21 विद्वान आचार्यों को बुलाया जा रहा है। भूमि पूजन का अनुष्ठान तीन अगस्त को ही प्रारम्भ हो जाएगा।

मंदिर के साथ समरसता की भी आधारशिला

रामनगरी में भूमि पूजन से पहले जिस तरह

के मुताबिक नागर शैली के मंदिरों में गर्भगृह भव्य बनाया जाता है और प्रवेश द्वार उससे छोटा रहता है। मंदिर में कुल छह शिखर होंगे। इससे पहले के मंदिर मॉडल में तीन शिखर प्रस्तावित थे। मंदिर का परकोटा करीब पांच एकड़ में फैला रहेगा। पहले मंदिर में दो तल प्रस्तावित थे लेकिन संशोधन के बाद अब तीन मंजिला बनेगा। मंदिर की ऊंचाई 161 फुट होगी।

सोमपुरा के अनुसार श्रीराम मंदिर जहां स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना होगा, वहीं इसकी डिजाइन ऐसी होगी कि रिएक्टर स्केल पर आठ से दस तक की तीव्रता वाला भूकंप भी इसका कुछ नहीं कर पायेगा। आर्किटेक्ट का कहना है कि मंदिर की उम्र कम से कम एक हजार वर्ष तक की होगी। कहा

का सौहार्दपूर्ण माहौल दिख रहा है, उससे यही प्रतीत होता है कि श्रीराम मंदिर निर्माण के साथ यहां सामाजिक समरसता का भी नया अध्याय प्रारम्भ होगा। अयोध्या की गलियों में रहने वाले कुछ बुजुर्ग संत और इतिहासकार बताते हैं कि सप्त मोक्षदायिनी पुरियों में अग्रणी अवधनगरी को करीब पांच सौ साल पूर्व उस समय त्रासदी का सामना करना पड़ा था, जब 21 मार्च 1528 को आक्रमणकारी बाबर के आदेश पर उसके सेनापति मीरबाकी द्वारा श्रीराम जन्मभूमि पर निर्मित प्राचीन भव्य मन्दिर को तोपों से तोड़वाया गया था। इसके बाद राम नगरी ने बहुत खून खराबा झेला। अपने आराध्य की जन्मभूमि को वापस पाने के लिए हिन्दुओं ने एक-एक करके 76 भीषण युद्ध लड़े और हजारों बलिदानियों को अपने जान की आहुति देनी पड़ी।

लोग कहते हैं कि किसी मूल्यवान वस्तु के गायब होने पर जितना दुख होता है, उसके वापस मिलने पर आनंद की अनुभूति दोगुनी हो जाती है। कुछ ऐसा ही आनंद इस समय राम नगरी में हिलोरे ले रहा है। हिन्दुओं के साथ मुसलमान भी पांच अगस्त के आयोजन को लेकर बेहद उत्साही दिख रहे हैं। मंदिर विवाद में मुस्लिम पक्ष के पैरोकार रहे मो0 इकबाल भूमि पूजन के ऐतिहासिक पल के गवाह बनना चाह रहे हैं। पूछने पर तपाक से कहते हैं कि न्योता मिला तो अवश्य जाऊंगा। वहीं अयोध्या के ही अनीश खान भूमि पूजन के दिन अपने घर पर 501 दीप जलाने की तैयारी में जुटे हुए हैं। वह कहते हैं कि रामलला केवल हिन्दू समाज के ही नहीं बल्कि मुसलमानों के भी पैगंबर हैं। अनीश ने देश के मुस्लिम समाज से अपील भी की है कि श्रीराम मंदिर के निर्माण हेतु भूमि पूजन के दिन सभी लोग अपने-अपने घरों में दीपक जलाएं और दीवाली मनाएं।

ऐसा होगा राम मंदिर का स्वरूप

श्रीराम मंदिर नागर शैली में निर्मित होगा। उत्तर भारत के लगभग सभी मंदिर इसी शैली में बनाए गए हैं। मंदिर के मुख्य आर्किटेक्ट चंद्रकांत सोमपुरा के बेटे निखिल सोमपुरा गया कि मंदिर के 200 फीट नीचे ताम्रपत्र पर निर्मित टाइम कैप्सूल डाला जाएगा। हालांकि बाद में चंपत राय ने इस तरह के किसी टाइम कैप्सूल डाले जाने का खंडन किया है। टाइम कैप्सूल के बारे में कहा गया है कि इसमें मंदिर का पूरा इतिहास और भूमि पूजन का पूरा ब्योरा रहेगा। यह प्रयोग इसलिए किया जा रहा है ताकि भविष्य में मंदिर के निर्माण और इतिहास को लेकर कोई विवाद न पैदा हो सके। आर्किटेक्ट का कहना है कि जमीन के अंदर डिब्बानुमा यह टाइम कैप्सूल हजारों वर्षों तक सुरक्षित पड़ा रहेगा।

भारत के पक्ष में प्रस्ताव के निहितार्थ

अमेरिकी कांग्रेस के निचले सदन में एक निजी प्रस्ताव पारित हुआ। डेमोक्रेट और रिपब्लिकन ने पार्टी लाइन से ऊपर उठते हुए प्रस्ताव में चीन के विस्तारवादी रवैए की भर्त्सना की। दूसरी ओर प्रस्ताव में भारतीय लोकतांत्रिक मूल्यों, वैश्विक सद्भाव और विश्व शांति की सराहना की गई।

ललित मोहन बंसल, लॉस एंजेल्स से

अमेरिका और चीन के बीच रिश्तों में इतनी खटास आ चुकी है कि उसे फिर से पटरी पर लाना फि लहाल संभव दिखाई नहीं पड़ता। इन दोनों देशों के बीच पिछले अठारह माह में कारोबारी जंग के बीच चीनी कोरोना संक्रमण के निपटने का मौका भी नहीं आया था कि अमेरिका ने टेक्सास के ह्युस्टन स्थित वाणिज्य दूतावास को चीन का खुफि या अड्डा घोषित कर दिया। उसे 72 घंटों में बंद करने की घोषणा कर दी। यही नहीं, राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने प्रत्युत्तर में चीनी कार्रवाई की चिंता किए बिना व्हाइट हाउस में एक प्रेस ब्रीफिंग में यह भी कह दिया कि चीन के और वाणिज्य दूतावास बंद किए जा सकते हैं। इसके अगले दिन मीडिया में खबर आई कि कैलिफोर्निया स्थित सैन फ्रांसिस्को वाणिज्य दूतावास में एक शोध छात्र का चोला पहने एक चीनी सैन्य अधिकारी अमेरिकी बौद्धिक संपदा और मेडिकल डाटा चुराने में संलिप्त पाया गया है। संभव है, अगले कुछ दिनों में सैन फ्रांसिस्को वाणिज्य दूतावास बंद हो जाए और चीन बदले में अमेरिका के बीजिंग सहित छह वाणिज्य दूतावासों में चेंगडू वाणिज्य दूतावास बंद कर दे। अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव से ठीक तीन महीने पूर्व दुनिया की दो बड़ी आर्थिक शक्तियों के बीच ये नाटकीय घटनाक्रम पिछले पाँच दशकों के रिश्तों में अविस्मरणीय हैं।

इस बीच अमेरिकी कांग्रेस के निम्न सदन में एक ऐसा प्रस्ताव पारित हुआ है, जिससे देश-विदेश में, खास कर साम्यवादी कुनबे की नींद उड़ गई है। इस का कारण यह नहीं है कि भारत और भारतीय कूटनीति का प्रवाह और उसकी दशकों से चली आ रही विदेश नीति में कोई बदलाव हुआ है, भारतीय रीति-नीति अमेरिका की ओर मुँह कर लिया है अथवा अमेरिकी तंत्र का एकाएक मोह भारत पर उमड़ने लगा है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अमेरिका हो अथवा रूस, दोनों हथियारों की आपूर्ति के बड़े सौदागर हैं। भारत ने देश की सुरक्षा और अखंडता के लिए अमेरिका से अत्याधुनिक टोही विमान, ड्रोन एवं अन्यान्य हथियार खरीदने के साथ ही रूस से भी मुँह नहीं मोड़ा है। अमेरिकी विरोध के बावजूद रूसी मिसाइल प्रेक्षापण सुरक्षा उपकरण एस-400 ले रहा है। सच मानें, इन दिनों भले ही नेहरू काल की निर्गुट नीति का लोप हो गया है तो दो ध्रुवीय कूटनीति बीते दिनों की बात हो चुकी है।

भारत के पक्ष में ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित : इस संदर्भ में बता दें, ह्युस्टन वाणिज्य दूतावास को बंद किए जाने की कार्रवाई से एक दिन पहले अमेरिकी कांग्रेस के निचले सदन में एक निजी प्रस्ताव पारित हुआ। डेमोक्रेट और रिपब्लिकन ने पार्टी लाइन से ऊपर उठते हुए प्रस्ताव में चीन के विस्तारवादी रवैए की भर्त्सना की। दूसरी ओर प्रस्ताव में

भारतीय लोकतांत्रिक मूल्यों, वैश्विक सद्भाव और विश्व शांति की सराहना की गई। भारत और चीन के बीच पूर्वी लद्दाख में एल ए सी पर दोनों देशों की सेनाओं के बीच तनातनी के मद्देनजर यह पहला अवसर था, जब डेमोक्रेट और रिपब्लिकन पार्टी ने एक स्वर में चीन को लताड़ा हो। प्रस्ताव में स्पष्ट तौर पर कहा गया कि चीन आक्रामक है। सैन्य कार्रवाई की बजाए बातचीत कूटनीतिक स्तर पर हो। असल में, इस प्रस्ताव का आशय चीन को यह जताना था कि अमेरिका भारत के साथ खड़ा है और उसके भारत के साथ रणनीतिक सम्बंध हैं।

यह एक ऐसा प्रस्ताव था, जिसकी तैयारियाँ पिछले माह जून से चल रही थी। इसके लिए भारतीय राजदूत तरनजीत संधु बराबर अमेरिकी सांसदों से मिल रहे थे। बैठकें हो रही थीं। कोशिशें हो रही थीं कि डेमोक्रेट और रिपब्लिकन, दोनों संयुक्त रूप से प्रस्ताव लाएँ। बहुचर्चित रिपब्लिकन सीनेटर मार्क रूबियो, सीनेटर बॉब मेंडेनेंज और टॉम काटन तो लगे ही थे, डेमोक्रेट प्रतिनिधियों में भारतीय मूल के सांसद राजा कृष्णमूर्ति और आर ओ खन्ना भी जुटे थे। शिकागो से भारतीय अमेरिकी सांसद राजा कृष्णमूर्ति ने पहल की, कैलिफोर्निया से सांसद आर ओ खन्ना को साथ लिया। इन्होंने कांग्रेस की छुट्टियों का लाभ उठाया। बताते हैं, इस कार्य में भारतीय राजदूत तरनजीत संधु ने भी प्रयास किया और इस तथ्य को रेखांकित करने की कोशिश की गई कि चीन अपनी विस्तारवादी रीति नीति से बाज नहीं आ रहा है।वह दो कदम आगे बढ़ने और एक कदम पीछे हटने की आक्रामक नीति पर चल रहा है। इस संदर्भ में तीन वर्ष पूर्व डोकलाम पर चीन के नापाक इरादों का मामला हो अथवा सिक्किम अथवा अरुणाचल से सम्बंधित कारवाई, जैसे उदाहरण हैं।

अमेरिका की दुखती रग : बता दें, अमेरिकी तंत्र और कूटनीतिज्ञ हांगकांग को लेकर चीन के एकतरफा रवैए से दुखी थे। चीन ने ब्रिटेन और अमेरिका को ठेंगा दिखाते हुए जिस तरह पहले कम्युनिस्ट पार्टी आफ चीन की प्रतिनिधि सभा में हांगकांग राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम पारित कराया, वह अमेरिका की दुखती रग पर एक जबरदस्त प्रहार था। अमेरिका और हांगकांग के बीच दशकों पुराने कारोबारी सम्बंध रहे हैं। अमेरिका दशकों तक एशिया में हांगकांग को उन्मुक्त कारोबार का पूर्वी द्वार मानता चला आया है। बस, चीन की इस एकतरफा कार्रवाई पर कुछ ही दिनों पहले अमेरिकी कांग्रेस ने हांगकांग का विशेष व्यापारिक दर्जा खत्म कर दिया। इससे चीन तिलमिला तो गया, लेकिन उसकी ताइवान के विरुद्ध आक्रामक कार्रवाई आज भी जारी है। इस बीच एक अच्छी बात यह हुई कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री बोरिस जानसन का भी चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के प्रति मोह भंग हुआ है. उन्होंने ब्रिटिश उपनिवेश हांगकांग में दशकों से रहे रहे अपने तीस लाख लोगों को ब्रिटिश नागरिकता देने की घोषणा तो की ही, साथ ही चीन की हुवाए टेक कम्पनी से फाइव जी दूर संचार संधि को भी तोड़ देने की घोषणा कर दी है। अमेरिका की इस पहल पर यूरोपीय देशों में इंग्लैंड ने हुवाए को जो रास्ता दिखाया है, उसके दूरगामी परिणाम होंगे।

'ना काहू से दोस्ती, न काहू से बैर': मौजूदा समय में संत कबीर का यह दोहा सार्थक प्रतीत होता है! यह भारतीय कूटनीतिक सफलता का ही परिणाम है कि पिछले छह सालों में भारत सरकार ने मित्र बनाए हैं, लेकिन देश की अखंडता और संप्रभुता पर कोई आँच नहीं आने दी। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत ने रूस के साथ सात दशक से चले आ रहे रणनीतिक सम्बंध बनाए रखते हुए अमेरिका के साथ सामरिक संधि की है। इस संधि के चलते अमेरिकी नोसेना ने जापान और आस्ट्रेलिया के साथ दक्षिण चीन सागर में आक्रामक चीन को घुटने टेकने पर विवश किया है। अब पिछले दिनों हिंद महासागर में चीन की बढ़ती नापाक गतिविधियों को देखते हुए 'चतुष्कोणीय निगाह' के रूप में भारतीय नौ सेना ने अमेरिका, जापानऔरआस्ट्रेलिया के साथ नौसैनिक अभ्यास किया है।यहभी चीन के मुंह पर एक जबरदस्त चपत है। इसे यों कहें कि नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने अपनी 'वसुधैव कुटुम्बकम' की नीति पर चीन को चारों खाने चित्त करने और उसे घेरने के लिए रणनीति बनाई है, वह कारगर सिद्ध हो रही है।

भारत और चीन के बीच पूर्वी लद्दाख में एल ए सी पर दोनों देशों की सेनाओं के बीच तनातनी के मद्देनजर यह पहला अवसर था, जब डेमोक्रेट और रिपब्लिकन पार्टी ने एक स्वर में चीन को लताड़ा हो। प्रस्ताव में स्पष्ट तौर पर कहा गया कि चीन आक्रामक है। सैन्य कार्रवाई की बजाए बातचीत कूटनीतिक स्तर पर हो। असल में, इस प्रस्ताव का आशय चीन को यह जताना था कि अमेरिका भारत के साथ खड़ा है और उसके भारत के साथ रणनीतिक सम्बंध हैं।

भारत के लिए यह भी उत्साहित करने वाली बात है कि अमेरिका में राष्ट्रपति चुनाव से ठीक तीन महीने पूर्व ट्रम्प के नेतृत्व में रिपब्लिकन और डेमोक्रेट जोई बाइडन के समर्थक, दोनों राजनैतिक दल इस समय भारत के साथ हैं। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ। सीनेट में विदेशी मामलों की समिति के धुरंधर रिपब्लिकन बॉब मेंडेनेंज ने यह कहा था, ''भारत और अमेरिका, दोनों ही देश लोकतांत्रिक मूल्यों का सम्मान करते हैं। दोनों देश अंतरराष्ट्रीय सिद्धांतों में विश्वास करते हैं और दुनिया में शांति और सद्भाव बनाए रखने के पक्षधर हैं।ऐसे में चीन के आक्रामक रवैए को कदापि बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। इसी तरह के विचार सीनेटर मार्क रूबियो और टाम स्कोट ने भी पिछले दिनों अमेरिकी मीडिया के सम्मुख रखे हैं। इसका अमेरिका के श्वेत और अश्वेत जनसमुदाय पर बड़ा अनुकूल असर हुआ है।

यह प्रस्ताव भारतीय अमेरिकी सांसद राजा कृष्णमूर्ति, भारतीय अमेरिकी आर ओ खन्ना, फ्रैंक पलोमी, टॉम स्कोजी, टेड योहो, जार्ज होल्डिंग, शिला जैक्सन, हेली स्तेवनसन और स्टीव चाबोट ने प्रेषित किया था। प्रस्ताव की मूल भावना जरूर जार्ज होल्डिंग और ब्रैड शेरकन की थी। यह भी भारत और भारतवासियों के लिए एक अच्छी खबर है कि डेमोक्रेट बहुल निम्न सदन में पार्टी लाइन से ऊपर उठ कर सदस्यों ने चीन का प्रतिकार और भारत के पक्ष का समर्थन किया। भारत के लिए यह प्रस्ताव महत्वपूर्ण है कि यूरोप और अन्यान्य देश भी इस तरह के प्रस्ताव पारित कर चीन को वैश्विक समुदाय में अलग थलग कर सकते हैं, उस पर राजनैतिक और कूटनीतिक दबाव डाल सकते हैं। इस समय भारत की स्थिति कूटनीति के मामले में अव्वल है, तो क्यों नहीं भारत अमेरिका की तर्ज.पर चीन का कोलकाता वाणिज्य दूतावास बंद कर पहल करे।

फसल के लिए उम्मीदें जगाती बरसात

ऐसा देखा गया है कि कई जरूरी सुधार और कठोर निर्णय आपात स्थिति में ही लिए जाते हैं। कोरोना काल ने सरकार के लिए कृषि क्षेत्र में एक अरसे से लंबित सुधारों के लिए वह अवसर प्रदान कर दिया। पिछले 15 जून को कृषि सुधारों के बाबत एक अध्यादेश के जरिए सरकार ने इसकी घोषणा की।

मोहन सिंह (बलिया से)

भारत में समय पर अच्छी बरसात किसानों के लिए जहां कई सौगात लेकर आती है, वही अतिवृष्टि कई बार किसानों के लिए मुसीबतें खड़ी कर देती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश और सटे बिहार के जिलों में खरीफ के इस सत्र में कुछ ऐसे ही हालात पैदा हो गए हैं। उत्तर प्रदेश के 75 जिलों में 21 जिले छिटपुट बरसात अथवा सूखे की चपेट में हैं। वहीं पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के कुछ हिस्से में अतिवृष्टि की वजह से बाढ़ की स्थिति पैदा हो गई है। किसान दूसरी फसल की बुवाई नहीं कर पा रहे हैं। किसानों ने अपने अनुभव के आधार पर खरीफ के लिए तीन दिन और रबी की फसल के लिए 13 दिन का समय मुकर्रर किया है। इस वक्त वह 3 दिन भी किसानों को कायदे से नसीब नहीं हो पा रहे हैं। मक्का ज्वार, बाजरा और अरहर की खेती की बुवाई पर इसका खासा असर पड़ा है। कृषि मंत्रालय की एक सूचना के मुताबिक 17 जुलाई तक इस साल पिछले साल की तुलना में इस अवधि के दौरान 142.6 लाख हेक्टेयर क्षेत्र के मुकाबले 108.4 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में धान की बुवाई हो चुकी है।

खरीफ फसल के कुल रकबे में इस साल इसी अवधि के दौरान लगभग 21 फीसद की बृद्धि हुई है।

मौसम विभाग के एक अनुमान के मुताबिक जुलाई के दूसरे सप्ताह तक पिछले साल के मुकाबले इस साल लगभग 14% ज्यादा बरसात हुई है। इस साल मानसून की अनुकूलता के अलावा खरीफ के रकबे में वृद्धि दर्ज की कुछ खास वजहें हैं। इन वजहों में ठीक समय पर बरसात का आगाज, बहुप्रतीक्षित कृषि सुधारों की घोषणा, सरकार के प्रयासों से रबी फसलों की कोरोना कॉल में रिकॉर्ड खरीदारी और अधिकतर गांव लौटे कामगारों का खेती के काम में नए सिरे से लगना भी शामिल है। लॉकडाउन के दौरान सरकार ने करीब 2 .6 अरब रुपये का पूंजी प्रवाह गांवों के लिए सुनिश्चित किया। इससे गांवों में मांग तेज हुई और किसानों ने इस दौरान खेती के संसाधन जुटाने के लिए जमकर निवेश किया। नतीजतन ट्रैक्टरों, दुपहिया वाहनों और रासायनिक खादों की बिक्री में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज हुई। बता दें कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की भागीदारी लगभग 4 8% है और ग्रामीण आबादी का 70 फीसद हिस्सा इस अर्थव्यवस्था पर निर्भर हैं। देश की कुल श्रम शक्ति का लगभग 50 फीसद खेती और उससे संबंधित कामों में लगा हैं। गौरतलब है कि सन 1991 के आर्थिक सुधारों का लाभ विनिर्माण और सेवा क्षेत्र को मिला। कृषि क्षेत्र इन सुधारों से लगभग वंचित रहा। इस दौरान सेवा क्षेत्र में उल्लेखनीय 50 फीसद की वृद्धि हुई।

खेती उन्नत हुई । बेहतर तकनीक और उन्नत किस्म के बीजों का इस्तेमाल खेती में बढ़ा,पर उसका लाभ किसानों को मिलने के बजाय किसानों का नुकसान ज्यादा हुआ। खासकर उन किसानों को, जो खेती में लगे हुए थे। वे न सिर्फ कर्ज के बोझ तले दबते चले गए बल्कि ज्यादातर आत्महत्या करने के लिए विवश हुए। ऐसी ही वक्त जरूरत थी, किसानों के साथ सरकार के खड़े होने की और उनके हाथ थामने की। निदान के रूप में कर्ज माफी का नुस्खा सामने आया। इसके बावजूद, अब महसूस किया जाने लगा है कि कर्ज माफी किसानों की समस्याओं का एकमात्र समाधान नहीं है। यह किसानों को एक तरह से मुफ्तखोर बना रहा है और किसानों के अपने परिश्रम के बजाय सरकारों पर ज्यादा निर्भर होने और लालच की ओर प्रेरित कर रहा हैं।

किसानों की आमदनी बढ़ाकर उन्हें समृद्ध करने की कोशिशें मोदी सरकार के सत्ता में आने के बाद से लगातार हो रही हैं। सबसे अहम सवाल यह है कि क्या सन 2022 तक जब देश आजादी की 75 वीं वर्षगांठ मना रहा होगा,तब तक किसानों की आमदनी दोगनी हो जायेगी? फिलहाल तो निर्धारित समयावधि के भीतर इस लक्ष्य को हासिल करने में कई मुश्किलें आती दिख रही हैं। एक तो अब समय महज दो साल ही बचा है। दूसरा यह कि कृषि की मौजूदा विकास दर से उस लक्ष्य को हासिल नहीं किया जा सकता, जिनकी सिफारिशें दलवई समीति ने की है।

गौरतलब है कि सन 2016 में अशोक दलवई के नेतृत्व में एक अंतरमंत्रालयी समिति किसानों की आय दोगुनी करने के बाबत गठित की गई थी। इस समिति की आज तक की सिफारिशों के मुताबिक कृषि क्षेत्र में सालाना 10.4% की वृद्धि दर हासिल करनी होगी। यह अब तक कभी हासिल नहीं हुआ है। जनवरी सन 2020 में एन एस एस ओ की रिपोर्ट बताती है कि कृषि क्षेत्र में मौजूदा विकास दर 2.8% है। समिति यह भी सुझाव देती है कि सन 2022 तक कृषि क्षेत्र में लगातार 6.4 लाख करोड़ रुपये निवेश की जरूरत होगी। जबकि सन2014से 2019 तक कुल 211694.61 लाख करोड़ रुपये का बजटीय प्रावधान सरकार के जरिए किया गया है।

किसानों की आमदनी बढ़ाकर उन्हें समृद्ध करने की कोशिशें मोदी सरकार के सत्ता में आने के बाद से लगातार हो रही हैं। सबसे अहम सवाल यह है कि क्या सन 2022 तक जब देश आजादी की 75 वीं वर्षगांठ मना रहा होगा,तब तक किसानों की आमदनी दोगनी हो जायेगी? फिलहाल तो निर्धारित समयावधि के भीतर इस लक्ष्य को हासिल करने में कई मुश्किलें आती दिख रही हैं।

ऐसा देखा गया है कि कई जरूरी सुधार और कठोर निर्णय आपात स्थिति में ही लिए जाते हैं। कोरोना काल ने सरकार के लिए कृषि क्षेत्र में एक अरसे से लंबित सुधारों के लिए वह अवसर प्रदान कर दिया। पिछले 15 जून को कृषि सुधारों के बाबत एक अध्यादेश के जरिए सरकार ने इसकी घोषणा की। इसके तहत कृषि उपज व्यापार और वाणिज्य अध्यादेश को अधिसूचित किया गया है।

अब किसान अपनी उपज जहां चाहें, ज्यादा कीमत पर बेच सकते हैं। सरकार को उम्मीद है कि किसानों को अब अपनी उपज का पहले से ज्यादा कीमत मिलेगी। दूसरा सुधार यह हुआ है कि मूल्य आश्वासन पर किसान समझौता और कृषि सेवा अध्यादेश 2020 के तहत किसानों को अब एक राष्ट्रीय ढांचा उपलब्ध होगा। इससे कृषि व्यवसाय से जुड़ी कंपनियां थोक व्यापारी और निर्यातक तथा किसानों के बीच पहले से तय कीमतों के आधार पर समझौते की छूट होगी। एक तरह से इस अधिनियम से कांट्रैक्ट फार्मिंग को बढ़ावा मिलेगा।

सरकार ने मई 2018 से ही किसानों को उनके उत्पादों की कीमत निर्धारित करने और प्रायोजकों के साथ मोल भाव करने के लिए अनुबंध कृषि मॉडल अधिनियम की शुरूआत कर दिया था। एक अन्य संशोधन के जरिये कहा गया है कि थोक व्यापारी कुछ विशेष परिस्थितियों, मसलन, युद्ध और अकाल को छोड़कर अब अनाज का मन माफिक भंडारण कर सकते हैं। आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 इस मकसद से पास किया गया था कि उत्पादन, आपूर्ति और वितरण को नियंत्रित किया जा सके।

इन सुधारों के जरिए उम्मीद की जा रही है कि खेती निवेश के लिए एक आकर्षक क्षेत्र के रूप में उभरेगा और किसानों की आमदनी बढ़ाने में इससे मदद मिलेगी। फिलहाल तो अतिवृष्टि की वजह से मोटे अनाज मसलन, मक्का, ज्वार, बाजरा और दलहनी फसलों, उड़द, मूंग और मसूर की खेती की बुआई में कई मुश्किलें आ रही हैं। फिर भी सरकार को खेती और ग्रामीण अर्थव्यवस्था से नई उम्मीदें जगी हैं।

क्रिसिल की हालिया रिसर्च रिपोर्ट बताती है कि कोरोना महामारी से कृषि ही एक ऐसा क्षेत्र है, जो प्रभावित नहीं है। रिपोर्ट

पिछले साल दो हजार रुपये से 2200 रुपये प्रति कुंतल के मुकाबले इस साल किसानों को मक्के का दाम 1000 रुपये प्रति कुंतल मिलने में भी मुश्किलें आ रही हैं। यहीं नहीं, सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य 1850 रुपये प्रति कुंतल कीमत भी किसानों को नहीं मिल पा रहा है। इस वजह से मक्का उत्पादक किसान अपने हालात पर रो रहे हैं।

में दावा किया गया है कि कृषि क्षेत्र में वर्ष 2020/21 के दौरान 2.5 फीसद वृद्धि की संभावना है। कृषि से जुड़े एक जोखिम के बारे में जरूर इस रिपोर्ट में आगाह किया गया है। कहा गया है कि लॉकडाउन के दौरान बागवानी के उत्पादों पर टिड्डियों का हमला हो सकता है।

गौरतलब है कि खाद्यान्न उत्पादन की तुलना में बागवानी की उपज सन 2012/13 से लगातार ज्यादा हो रही है। इसके बावजूद जिन 23 खरीफ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा सरकार ने हाल में किया है, उसमें एक भी बागवानी के उत्पाद शामिल नहीं हैं। खरीफ सीजन में मक्का की बुवाई करने का अवसर किसानों को नहीं मिल पा रहा हैं। इस वजह से पूर्वी उत्तर प्रदेश और सटे बिहार के जिलों में मक्का, ज्वार बाजरा और दलहनी फसलें मसलन उड़द मूंग और अरहर की बुवाई पर खासा असर पड़ा है।

भारत में मक्के की करीब 70 फीसद पैदावार खरीफ के सीजन में होती है। इसका 60 फीसद उपयोग पशुओं और मुर्गी के दाने तैयार करने के काम आता है। पर इस साल को लॉकडाउन के दौरान आवाजाही पर लगी रोक और इस अफवाह की वजह से कि मुर्गा खाने से कोरोना संक्रमण तेजी से फैलता है, मुर्गी पालकों और मक्का उत्पादक किसानों का सबसे अधिक नुकसान हुआ है। पिछले साल दो हजार रुपये से 2200 रुपये प्रति कुंतल के मुकाबले इस साल किसानों को मक्के का दाम 1000 रुपये प्रति कुंतल मिलने में भी मुश्किलें आ रही हैं।

यहीं नहीं, सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य 1850 रुपये प्रति कुंतल कीमत भी किसानों को नहीं मिल पा रहा है। इस वजह से मक्का उत्पादक किसान अपने हालात पर रो रहे हैं। जाहिर है कि कृषि क्षेत्र में सुधारों के अलावा न्यूनतम समर्थन मूल्य और बाजार मूल्य के इस फर्क को मिटाने के लिए सरकार को अभी कई ठोस उपाय करने होंगे। एक जरूरी सवाल यह भी है कि अगर खेती की लागत क्षेत्र दर क्षेत्र अलग अलग हैं, तो न्यूनतम समर्थन मूल्य सार्वभौमिक रूप से पूरे देश में एक जैसा होना कहां तक मुनासिब है? खेती किसानी से संबंधित ऐसे कई और सवाल हैं, जिनसे सरकार को अभी रूबरू होना है। दरअसल अपने देश में जलवायु की विविधता की तरह खेती के क्षेत्र में कई इलाकाई विविधता भी हैं, जिनकी वजह से खेती में एकमुश्त एक सरीखा समाधान संभव नहीं है। खेती एक निरंतर विकासमान प्रक्रिया है, जिसमें किसान अपने अनुभवों से निरंतर सीखता हैं और सरकार को भी चाहिए कि वह किसानों के लाभ- हानि और लागत के अनुभवों से सबक लेते हुए नीतिगत परिवर्तन करने की दिशा में लगातार प्रयत्न करती रहे।

चिराग बनाम तेजस्वी

चिराग एनडीए गठबंधन का हिस्सा रहेंगे, तो वहीं तेजस्वी भी कुछ पार्टियों के साथ गठबंधन के साथ मैदान में उतर सकते हैं। इसके अलावा उपेंद्र कुशवाह, जीतन राम मांझी जैसे जमीनी नेताओं से भी लोहा लेना होगा।

डॉ. रमेश ठाकुर

बिहार विधानसभा का चुनाव बड़ा दिलचस्प होने वाला है। दिलचस्प होने के कई कारण सामने हैं। लालू प्रसाद यादव की मौजूदगी शायद इस बार चुनाव में प्रत्यक्ष रूप से न रहे। वह जेल में हैं। चुनाव का सारा दामोदार तेजस्वी और तेज प्रताप के कंधों पर रहने वाला है। वहीं, रामविलास पासवान भी इस बार उतने एक्टिव नहीं दिखते, थोड़े अस्वस्थ्य हैं। हाल ही में उनके छोटे भाई व सांसद रामचंद्र पासवान का निधन हुआ है, जिससे वह दुखी भी हैं।

चुनाव में दिलचस्पी का एक अव्वल कारण दो युवा चेहरों की भिड़ंत हो सकती है। बिहार की राजनीति में दो प्रमुख राजनैतिक घरानों की नई पौध पूरी तरह तैयार है- चिराग पासवान और तेजस्वी यादव। चिराग लोक जनशक्ति पार्टी के मुखिया रामविलास पासवान के पुत्र हैं। मौजूदा संसद सदस्य हैं। चिराग की राजनीतिक समझ कितनी है, उसकी परीक्षा होगी।वहीं, तेजस्वी यादव राष्ट्रीय जनता दल के प्रमुख लालू प्रसाद यादव और पूर्व मुख्यमंत्री राबड़ी देवी के पुत्र हैं, वह मौजूदा समय में विधायक हैं। लालू प्रसाद इस वक्त जेल में हैं, तो वहीं रामविलास पासवान की उम्र अब सियासत के अंतिम पड़ाव पर पहुंच चुकी है। इसलिए दोनों कद्दावर नेताओं के पुत्र इस विधानसभा चुनाव की कमान संभाले हुए हैं। वैसे चिराग और तेजस्वी दोनों को राजनीतिक विरासत अपने पिता से ही मिली है।

एक समय राजनीति में दोनों की जरा भी रूचि नहीं थी। दोनों का क्षेत्र भी अलग-अलग था-एक का क्रिकेट, दूसरे का फिल्म। तेजस्वी यादव क्रिकेट खेलते थे, राज्य में औसत दर्जे के खिलाड़ी थे। चिराग पासवान फिल्मों में किस्मत आजमा रहे थे, एक

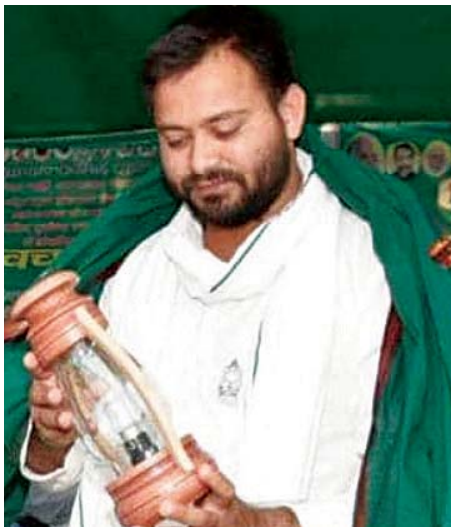

फिल्म की भी थी जिसमें उन्होंने अभिनेता की भूमिका निभाई थी। काबिलियत कह लें या परिश्रम का अभाव? उनका फिल्मी कैरियर परवान नही चढ़ा। मायानगरी से मिली असफलता के बाद उन्होंने खानदानी राजनीति में लौटना ही उचित समझा। राजनीति में चिराग के पदार्पण को मजबूरी कहें या जरूरत?

कमोबेश, वैसा ही कुछ तेजस्वी यादव के साथ भी हुआ। तेजस्वी क्रिकेट में अपना भविष्य देखते थे। इंडिया लेबल तक खेलना चाहते थे। उन्होंने कॉलेज, जिला और राज्य स्तर तक औसत के कुछ मैच खेले भी। तेजस्वी का आईपीएल में दिल्ली की टीम के लिए सेलेक्शन भी होते-होते रह गया था। मैदान में उतरने से पहले ही उनका सेलेक्शन विवादों में फंसा। दरअसल, उनमें उच्च श्रेणी के मैचों को खेलने का मादा नहीं था। आईपीएल में जब उनका चुनाव हुआ, तब केंद्र में यूपीए की हुकूमत थी जिसमें उनके पिता लालू प्रसाद यादव की तूती बोलती थी। तय था कि उनका उसी सियासी प्रभाव के चलते सेलेक्शन हुआ होगा। यही कारण था उनका सेलेक्शन मुद्दा बनते देर नहीं लगा।

तेजस्वी का मामला ज्यादा बढ़ता देख दिल्ली की आईपीएल फ्रेंचाइजी को सेलेक्शन रद्द करना पड़ा। उन्होंने क्रिकेट से तुरंत किनारा कर लिया और कूद पड़े पिता के सियासी अखाड़े में। उनको पता था सियासत उनके घर की खेती है, जिसमें जैसे चाहो, वैसा करो। 2015 का विधानसभा चुनाव लड़ा और जीत गए। तेजस्वी यादव का पंद्रह दिन पहले पिता की पार्टी में आना हुआ, चुनाव जीता और प्रदेश के उप-मुख्यमंत्री भी बन गए। यहां तक पहुंचने के लिए एक आम सियासी कार्यकर्ता को अपना समूचा जीवन खपाना पड़ता है। वैसे शुरू में यह गारंटी भी नहीं, कि उस कार्यकर्ता को पार्टी चुनाव में टिकट देगी भी या नहीं?

बहरहाल, मौजूदा बिहार विधानसभा चुनाव चिराग-तेजस्वी पर ही केंद्रीत रहने वाला है। राजनीतिक पंडित इस बात को स्वीकारते हैं कि निश्चित रूप से बिहार विधानसभा का चुनाव दोनों युवा नेताओं चिराग-तेजस्वी के लिए अग्निपरीक्षा जैसा होने वाला है। तेजस्वी यादव को इसी चुनाव से अपनी पार्टी का भविष्य तय करना होगा। वहीं, चिराग पासवान को पिता के सियासी सफर में रौशनी फैलाने की चुनौती रहेगी।

लोग जानते हैं कि रामविलास पासवान एकमात्र ऐसे राजनेता हैं जिनके पास छह प्रधानमंत्रियों के साथ काम करने का अनूठा रिकॉर्ड और अनुभव है। उन्होंने अपने पूरे जीवन काल में 11 चुनाव लड़े हैं जिनमें नौ में है। चुनावी अखाड़े में चिराग पासवान की मुख्य योग्यता उनके पिता का लंबा सियासी अनुभव ही रहेगा। वहीं, तेजस्वी यादव और उनके बड़े भाई तेज प्रताप के पास भी लालू-राबड़ी का लंबा सियासी हुनर है। इसलिए कम कोई नहीं, टक्कर बराबर की होगी।

मालिक नहीं माली बनें

गूगल ने घोषणा की है कि वह एक लाख नवजवानों को डेटा एनालिटिक्स और प्रोजेक्ट मैनेजमेंट इत्यादि ऑन लाइन सीखने के लिए छात्रवृति प्रदान करेगी। जो विद्यार्थी सफलता पूर्वक यह कोर्स पूरा करेंगे, उन्हें बिना किसी अतिरिक्त कॉलेज या यूनिवर्सिटी डिग्री के नौकरी भी देगी।

अजय सिंह 'एकल'

विश्व की अर्थव्यवस्था में करोना वायरस की वजह से हाहाकार मचा है। नौकरियां जा रही हैं, तनख्वा में कटौती की जा रही है। सालाना वृद्धि से ज्यादातर कम्पनियों ने इनकार कर दिया है। कारण बहुत साफ है, व्यापार में अनिश्चितता। आखिर जब तक मुनाफा पक्का न हो जाये तो कोई भी खर्चा क्यों करना चाहेगा। मुनाफा व्यापार का मूल है। इसको निश्चित करने के लिए ही मैनेजमेंट स्कूलों में ज्ञान बांटा जा रहा है। जो सीईओ ज्यादा मुनाफा कर सके, उसकी तनख्वा सबसे ज्यादा, उसकी सालाना बढ़ोत्तरी भी सबसे ज्यादा। ऐसे समय में एक बड़ा सुखद समाचार दुनिया की सबसे बड़ी आईटी कम्पनी गूगल की तरफ से आया है।

गूगल ने घोषणा की है की वह एक लाख नवजवानों को डेटा एनालिटिक्स और प्रोजेक्ट मैनेजमेंट इत्यादि ऑन लाइन सीखने के लिए छात्रवृति प्रदान करेगी। जो विद्यार्थी सफलता पूर्वक यह कोर्स पूरा करेंगे, उन्हें बिना किसी अतिरिक्त कॉलेज या यूनिवर्सिटी डिग्री के नौकरी भी देगी। ऐसे लोगों का वेतन भी उतना ही होगा जितना उन लोगों का जो बी.टेक इत्यादि डिग्रियां लेकर आते हैं। इससे ऐसे लोगो को ज्यादा फायदा मिलेगा, जिनके पास प्रतिभा तो है, किन्तु स्कूल कॉलेज की डिग्री लेने की सामर्थ्य नहीं है। यानी समाज का जो कमजोर तबका है, उसके लाभ के लिए यह नीति काम करने वाली है। दरअसल यही काम तो बगिया का माली भी करता है। जो कमजोर पेड़ पौधे हैं, उनकी देखभाल करके उनके लिए पानी खाद की उचित व्यवस्था करके उन्हें बाकी पौधों के जैसा मजबूत बना देता है।

यह संसार ईश्वर की सुन्दर बगिया है। हम इंसान इस बगिया के माली हैं, जिनका काम है यहाँ जो कुछ है उसकी देखभाल करना और उसे उसकी श्रेष्ठतम स्थिति में पहुचाना। माली को यह काम सभी के लिए करना है चाहे मनुष्य हो,पशु या पक्षी हो अथवा प्रकृति जिसमें नदी जंगल इत्यादि की सुरक्षा और संरक्षा शामिल है। यही ईश्वर की पूजा है। मगर आदमी की तार्किक बुद्धि और लालच ने माली से मालिक बन जाने की ठान ली है। यही मुसीबत की जड़ बन गयी है। हालांकि मनुष्य को पता है कि इस दुनिया में केवल अनिश्चितता ही निश्चित है, बाकी सब अनिश्चित है। पिछले 4-5 महीनों से पूरी दुनिया में फैले करोना वायरस के द्वारा मचाई गयी तबाही के कारण बहुत कुछ बदल गया है। अब पुरानी रीति नीति में परिवर्तन करना मजबूरी है लेकिन आदमी है की मानता नहीं। ऐसे में गूगल कम्पनी ने जो घोषणा की है, वह राहत देने वाली है।

करोना वायरस के कारण उत्पन्न परिस्थितियों ने कंपनियों को अपने खर्चे कम करने पर मजबूर किया है। परिणामस्वरूप कम्पनियों ने अपने कर्मचारियों की छंटनी करने की योजना पर वैसे तो फरवरी 2020 में जैसे ही आपदा की आहट हुई, काम करना शुरू कर दिया था। उन्होंने मार्च आते आते इस पर कार्यवाही तेजी से शुरू कर दी। इन्ही परिस्थितयो में अलग अलग कम्पनियों ने अपनी जरूरत और सोच के अनुसार अपनी कम्पनियों के लिए नीति निर्धारण किया। यहाँ तीन कम्पनियों के उदहारण रख कर उनके काम करने के तरीके में फर्क देख कर यह समझना आसान हो जायेगा की कठिन हालात में भी कैसे बहुजन हिताय के भाव को चरितार्थ करना सम्भव हो जाता है। जरूरत है तो बस जरा संवेदनशील होने की।

पहली कम्पनी एक भारतीय बहुराष्ट्रीय कम्पनी है, जिसने अपने 40 प्रतिशत कर्मचारियों को भविष्य की जरूरतों को ध्यान में रख कर एक महीने का वेतन देकर मार्च के महीने में निकाल दिया। भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर फिर बुलाये जाने का आश्वासन देकर कम्पनी के हित में निर्णय कर दिया गया। दूसरी

भारतीय कम्पनी ने जिसे अपने कुल साठ कर्मचारियों से तीस यानी करीब पचास प्रतिशत लोगों को निकालना था, उन्हें कम्पनी का निर्णय बताया और दो महीने का नोटिस दिया। उम्मीद की गई कि ऐसे कर्मचारी इस समय में अपने लिए नए काम की व्यवस्था कर सकेंगे। कंपनी ने साथ ही अपने एच आर विभाग को इस काम पर लगाया कि कर्मचारियों की योग्यता अनुसार यथा सम्भव दूसरी जगह इंटरव्यू करवाने के लिए प्रयत्न करे। हालांकि इसमें आंशिक सफलता ही मिली और करीब पंद्रह कर्मचारियों को नया काम मिल गया। तीसरी कम्पनी जो पोलैंड में है, के मैनेजमेंट ने तय किया कि अगले दो महीने में करीब 30 प्रतिशत लोगों को निकालना है। इस निर्णय को क्रियान्वित करने के लिए मैनेजमेंट ने नीति तय की कि वह अपने सबसे अच्छे लोगों को निकालेगी। अतः उन्हें इसके लिए एक योजना बनाई गयी कि कैसे अगले दो महीनो में निकाले जाने वाले कर्मचारियों को दूसरे कर्मचारियों को अपनी काम की तकनीक बतानी है। उन्हें काम में अपनी तरह निपुण बनाना है ताकि कम्पनी का उत्पादन बिना किसी रुकावट के चल सके। साथ ही कम्पनी के एचआर विभाग ने यह जिम्मेदारी ली की इस दो महीने में श्रम करके उन कर्मचारियों को निकालने के पहले कम से कम एक नौकरी की व्यस्था जरूर कर दी जाये। अपने अच्छे कर्मचारियों को निकालने के पीछे का एक भाव भी यही था क्योंकि जो कम में निपुण हैं, उनको अन्य नौकरी मिलना आसान था। इस तरह से अपनी अपनी कम्पनी के लक्ष्य को तीनों ही कम्पनियों ने पूरा किया। पहली कम्पनी ने यंत्रवत निर्णय लिया और उसे कम्पनी हित में कार्यान्वित कर दिया। दूसरी कम्पनी के कार्यान्वन में कंपनी का और कर्मचारियों, दोनों का हित शामिल था। हालाँकि काम से निकाले जाने का कष्ट होना स्वाभाविक था लेकिन मैनेजमेंट द्वारा उसे यथा सम्भव कम करने की कोशिश भी की गयी। इन दोनों के अलग तीसरी कम्पनी ने जो किया उसमे कम्पनी का, कर्मचारियों का और साथ में दूसरी उत्पादक कम्पनियों का भी ध्यान रखा। हम आम तौर दूसरी कंपनियों को प्रतिस्पर्द्धी मान कर उनके लिए कठिनाई पैदा करने की कोशिश करते हैं। तीसरी कंपनी ने इन प्रतिस्पर्द्धियों का भी अच्छा हो, यह भाव रखा और उसे अपने निर्णय और कार्यान्वन से साबित भी किया। इन सारे उपायों के साथ तीसरी कंपनी ने अपने लक्ष्य को प्राप्त किया। जिन कर्मचारियों की योग्यता कम थी, उन्हें उसे बढ़ाने का अवसर दिया। जिन लोगो ने इसमें सहयोग किया, उनके लिए वैकल्पिक व्यवस्था कर धन्यवाद के भाव से उन्हें कम्पनी छोड़ने का मनोभाव बनाया। इस तरह मैनेजमेंट ने माली बनकर सभी के लिए यथा सम्भव कम से कम नुकसान की स्थिति बनाने का कार्य कुशलतापूर्वक किया।

भारत की एक दिग्गज आईटी कम्पनी एचसीएल के चेयरमैन शिव नाडार ने अपने पद को छोड़ कर अपनी इकलोती पुत्री और अभी तक एचसीएल फाउंडेशन की प्रमुख को अपने स्थान पर चेयरमैन बनाया है। एचसीएल भारत की दिग्गज आईटी कम्पनी है और अच्छा मुनाफा कमाती है। जून 2020 को खत्म हुई तिमाही में भी उसने करीब 2925 करोड़ का मुनाफा बनाया है। हालाँकि मार्च 2020 की तिमाही में हुए मुनाफे से यह 4 प्रतिशत कम है और करोना की वजह से व्यापार में इतनी कमी आयी है। कम्पनी यह मुनाफा अपने कर्मचारियों के कारण कमाती है। कम्पनी की उत्तराधिकारी नई चेयरपर्सन ने आते ही एक घोषणा कर दी की करोना वायरस की आपदा के कारण से कम्पनी इस वर्ष अपने कर्मचारियों की सालाना वेतन वृद्धि नहीं करेगी। यानी जिन्होंने अपनी योग्यता और मेहनत से अर्थव्यस्था की धीमी रफ़्तार के बावजूद कम्पनी की पूरी कमाई करवाई, उनको इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा। इससे ऐसा लगता है कि कम्पनी का माली मालिक बन गया है और सबकुछ अपने लिए बचा कर रख लेना चाहता है। गीता में कहा गया है की प्रजा अपने राजा का अनुसरण करती है। अतः बहुत सम्भावना है कि कम्पनी की इस नीति से कर्मचारियों का भी मनोभाव बदल जाये और जो बड़े हित के लिए काम करते थे, यथा सम्भव अपने हित में काम करने लगें। यहीं से कम्पनी का पराभव शुरू होने की आशंका है। कम्पनी को बड़ा बनाते हैं उसके कर्मचारी, उनकी निष्ठां और उनका त्याग। ऊँचे पद पर बैठा हुआ आदमी तो केवल सीमित सीमा में ही काम कर सकता है। असल में तो कार्यान्वयन नीचे स्तर पर होता है। कम्पनी वही बड़ी बनती है, जहाँ का सबसे छोटा कर्मचारी भी यह भाव रखता है कि कम्पनी मेरी है। अन्यथा केवल पैसे के लिए काम करने वाले लोगों की टोली कभी भी कम्पनी को महान नहीं बना सकती है।

भारत की एक दिग्गज आईटी कम्पनी एचसीएल के चेयरमैन शिव नाडार ने अपने पद को छोड़ कर अपनी इकलौती पुत्री और अभी तक एचसीएल फाउंडेशन की प्रमुख को अपने स्थान पर चेयरमैन बनाया है। एचसीएल भारत की दिग्गज आईटी कम्पनी है और अच्छा मुनाफा कमाती है। जून 2020 को खत्म हुई तिमाही में भी उसने करीब 2925 करोड़ का मुनाफा बनाया है।

थॉमस एडिसन की कम्पनी जब जल रही थी, तो उसने अपना सिर पीटने के बजाय अपनी पत्नी को बुलाया और कहा- देखो यह नजारा तुम्हे दोबारा देखने को नहीं मिलेगा। कम्पनी के कर्मचारियों ने अपने पैसे इकट्ठा करके कम्पनी को दोबारा शुरू किया, क्योंकि उन्हें लगता था कि कम्पनी हमारी है और इसे शुरू करना हमारे हित में है। कर्मचारियों की यह सोच तभी बनती है, जब कोई मालिक नहीं होता और हर समर्थवान अपने से कमजोर के लिए अपना कर्तव्य माली की तरह देखभाल करके उसको सामर्थ्यवान बनाने की कोशिश करता है।

(लेखक कापोर्रेट सलाहकार और सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं)

धर्मनिरपेक्षता की कीमत चुका रहे हैं लोग

नेपाल की राजनीति पिछले कुछ वर्षों से ऐसी स्थिति में आ गई है कि वहां धर्म परिवर्तन कोई मुद्दा ही नहीं है। कम्युनिस्ट पार्टियों को यह फायदेमंद लगता है, क्योंकि हिन्दूवाद के बढ़ने से उनकी दुकान छोटी होने का खतरा मंडराने लगता है। हिन्दुओं की तादाद जितनी घटेगी, उनके लिए उतना ही बढ़िया है।

मधुरेन्द्र सिन्हा

जिस देश से हमारा हजारों साल का रिश्ता है, वह नेपाल है। एक जैसा खान-पान, एक जैसी जिंदगी, रोटी-बेटी का रिश्ता, आर्थिक सहयोग, आने-जाने में कोई पाबंदी नहीं और उन सबसे बढ़कर मूल रूप से एक ही धर्म। लेकिन आज परिस्थितियां तेजी से बदल रही हैं। विस्तारवादी और विश्व का सुपरपॉवर बनने की चाहत रखने वाला चीन इन दोनों भाइयों के गहरे संबंधों में फूट डालने की कोशिश में लगा हुआ है। चीन अपनी साजिश में कुछ हद तक सफल भी हुआ है। आज दोनों देशों के संबंध वैसे नहीं हैं, जो कुछ बरस पहले होते थे।

इसकी झलक अब दिखने लगी है और नेपाल के महत्वाकांक्षी प्रधान मंत्री के पी शर्मा ओली ने इस दिशा में कई कदम उठाए हैं। वे पूरी कोशिश कर रहे हैं कि नेपाल में राष्ट्रवाद की आग जलाई जाए, जिसमें दोनों देशों के हजारों वर्षों के संबंध जलकर खाक हो जाएं ताकि उन्हें एक राष्ट्र प्रेमी नेता के रूप में जाना जाए और उनका प्रधान मंत्री पद सुरक्षित रहे।

दरअसल वहां कुछ वर्षों से सारा खेल चीन के राजनयिकों द्वारा हो रहा है। अब तो चीन की सुंदर राजदूत हू यानची सीधे तौर से नेपाल के आंतरिक मामलों को चला रही हैं। वह भारत विरोध और नेपाल को पूरी तरह से चीन की गोद में धकेलने के लिए अभियान चला रही हैं। वह न केवल देखने में सुंदर हैं, बल्कि दिमागी तौर पर भी बहुत ही तेज तर्रार हैं। वह चीन के हितों के लिए काम करती रहती हैं और पाकिस्तान में भी पदास्थापित रहीं। उन्हें उर्दू का गहरा ज्ञान है और पाकिस्तान से भी बहुत अच्छे संबंध रखती हैं। उनके भारत के विरोध का एक बड़ा कारण यह भी है। 50 वर्षीय यानची ने नेपाल में राजनीतिक कार्यों के अलावा सामाजिक कार्यों में भी हाथ बंटाना शुरू किया ताकि जनता में उनकी और चीन की लोकप्रियता बढ़े। इसमें उन्हें सफलता भी मिली है। प्रधान मंत्री ओली तो पूरी तरह उनके शिकंजे में हैं ही, नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी के कई बड़े नेता भी हैं यह हैरानी की बात है कि नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं की बैठक वह खुद दूतावास में करवाती हैं और निर्देश भी देती हैं। उनके ही इशारे पर नेपाल ने अपने देश के नक्शे में परिवर्तन करवाया था।

चीन के नक्शे में दिखाए गए उत्तराखंड के सीमावर्ती इलाकों के ये गांव भारत का हिस्सा हैं और इसलिए उसने वहां सड़कों का निर्माण किया। चीन को लगा कि वहां से भारत सीधा तिब्बत तक पहुंच जाएगा। इसलिए बीच में अवरोध के तौर पर उन इलाकों को नेपाल का बताकर वहां विवाद खड़ा करवा दिया गया,जिससे चीन और भारत की सीमा के बीच में नेपाल एक बाधा के तौर पर खड़ा हो जाए। यह एक घटिया लेकिन रणनीति के हिसाब से अच्छी चाल है। प्रधान मंत्री ओली को अपना पद अपनी पार्टी के ही सहयोगी प्रचंड को सौंपना है। ऐसे में वह जान-बूझकर ऐसी हरकतें कर रहे हैं, जिससे जन भावनाएं उमड़ें और उनकी कुर्सी बची रहे। यह ठीक वैसा ही है जैसा मलेशिया में महातिर मुहम्मद ने किया था। उन दोनों में फर्क यह रहा कि वह धर्म का कार्ड खेल रहे थे, तो यहां राष्ट्रवाद का खेल खेला जा रहा है, यह सोचे बगैर कि भारत में 60 लाख से भी ज्यादा नेपाली नौकरियां करते हैं और हजारों सशस्त्र बलों में हैं।

ओली की नई अयोध्या

प्रधान मंत्री ओली न केवल राष्ट्रवाद को बढ़ावा दे रहे हैं, बल्कि अब वह धर्म का कार्ड भी खेलने लगे हैं। यूं तो कम्युनिस्टों के लिए धर्म कोई चीज नहीं है और हिन्दू धर्म तो बिल्कुल नहीं। लेकिन पीएम ओली यह कार्ड खेलने से भी बाज नहीं आ रहे हैं। अब उन्होंने नई खोज की है कि राम जी का जन्म दक्षिणी नेपाल के बीरगंज जिले के थोरी गांव में हुआ। उनका तर्क यह है कि यह गांव जानकीधाम यानी जनकपुर के निकट है और राजा दशरथ अपने पुत्रों के विवाह के लिए वहां गए थे। उनका कहना है कि भारत ने गलत कहा है कि अयोध्या भारत में है। यह दावा सही नहीं है और भारत ने नेपाल के हक को हड़प लिया है। उनके सूचना सलाहकार ने कहा कि वाल्मीकि आश्रम भी नेपाल में है, जिससे सिद्ध होता है कि भारत ने हमारी विरासत को हड़प लिया है।

हिन्दू राष्ट्र से धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र

चीन ने बहुत पहले ही इसकी शुरूआत कर दी थी। महाराजा महेन्द्र के समय में ही भारत की तर्ज पर हिंसात्मक माओवादी आंदोलन नेपाल के कई इलाकों में कराए गए। इनमें हजारों लोगों की मौत हुई और सैकड़ों गांवों पर इन आतंकियों का कब्जा हो गया। उसी दौरान महाराजा को सपरिवार मार डाला गया। यह नेपाल की राजनीति का बहुच बड़ा मोड़ था। महाराजा का साया सिर से हटने के बाद वहां के लोग यह नहीं तय कर पाए कि वो किस ओर जाएं। इसका ही फायदा कम्युनिस्टों ने उठाया। उन्होंने तेजी से अपना विस्तार किया। ओली जैसे कई नेता इसमें जुड़ते गए। यहां पर यह बाताना जरूरी है कि ओली ने विध्वंसक कार्रवाइयां भी कीं और करीब 14 साल जेल में भी बिताए। इन लोगों ने बाद में गांव-गांव जाकर कम्युनिज्म को फैलाने का काम किया। गरीबी और भीषण गरीबी से त्रस्त नेपाल के लोगों में यह संदेश देने में कम्युनिस्ट पार्टी सफल हो गई कि वे ही उनके कष्टों का अंत कर सकते हैं।

इन सबका असर यह हुआ कि नेपाल धीरे-धीरे बदलता चला गया। एक दिन ऐसा भी आया कि नेपाल ने दुनिया के एकमात्र हिन्दू राष्ट्र का चोंगा उतार फेंका। जनवरी 2007 में अंतरिम संसद और अंतरिम संविधान के जरिये उसे एक धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित कर दिया गया। इससे जनता को कोई लाभ नहीं हुआ लेकिन सरकार को यूरोपीय संघ (एव) और मिडल ईस्ट से आर्थिक सहायता मिलने का रास्ता प्रशस्त हुआ। यूरोपीय संघ ने नेपाल से आयात किए जाने वाली वस्तुओं की सूची लंबी कर दी ताकि उसका निर्यात बढ़े। इसके एवज में वहां हजारों की तादाद में ईसाई मिशनरी पहुंचने लगीं और धर्म परिवर्तन का खेल चलने लगा। नेपाल के ऊंचाई वाले और पहाड़ी इलाकों में मिशनरी बड़ी शांति और एकाग्रता से धर्म परिवर्तन का काम करने लगे। आज यह हालत है कि नेपाल की 3 प्रतिशत आबादी ईसाई हो गई है। जाने-माने पत्रकार युबराज घिमिरे कहते हैं कि नेपाल में पिछले एक दशक में बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन हुआ और इसका सबसे ज्यादा फायदा ईसाई मिशनरियों ने उठाया। वे चुपचाप इस काम में लगे हुए हैं।

राजनीतिज्ञों को इस बात से कोई मतलब नहीं है कि नेपाल में बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन हो रहा है। नाम न छापने की शर्त

प्रधान मंत्री ओली को अपना पद अपनी पार्टी के ही सहयोगी प्रचंड को सौंपना है। ऐसे में वह जान-बूझकर ऐसी हरकतें कर रहे हैं, जिससे जन भावनाएं उमड़ें और उनकी कुर्सी बची रहे। यह ठीक वैसा ही है जैसा मलेशिया में महातिर मुहम्मद ने किया था। उन दोनों में फर्क यह रहा कि वह धर्म का कार्ड खेल रहे थे, तो यहां राष्ट्रवाद का खेल खेला जा रहा है, यह सोचे बगैर कि भारत में 60 लाख से भी ज्यादा नेपाली नौकरियां करते हैं और हजारों सशस्त्र बलों में हैं।

पर एक अन्य पत्रकार ने बताया कि सिर्फ ईसाई ही नहीं, मौलवी भी यहां धर्म परिवर्तन करवा रहे हैं। बड़ी संख्या में नेपाली इस्लाम में परिवर्तित हो गए हैं। उनकी लड़कियों से पैसे का लालच देकर मुस्लिम लड़कों से शादी करवाई जाती है। कई तो बाद में मिडल ईस्ट में बेच दी जाती हैं। उत्तर प्रदेश की सीमा से लगे इलाकों में तो गोरखपुर, गाजीपुर वगैरह से मुस्लिम बड़ी तादाद में वहां बस गए। वहां उन्होंने अपना कारोबार बढ़ाया है। नेपाल की कुल आबादी में अब मुस्लिमो की आबादी 5 प्रतिशत हो गई है। तराई के इलाकों में वहां बड़ी तादाद में वे बस गए हैं। नेपाल में मदरसे भी खुल गए हैं, जिन्हें बाहर से फंडिंग हो रही है। जाहिर है कि इसमें पाकिस्तान की बहुत दिलचस्पी है।

नेपाल की राजनीति पिछले कुछ वर्षों से ऐसी स्थिति में आ गई है कि वहां धर्म परिवर्तन कोई मुद्दा ही नहीं है। कम्युनिस्ट पार्टियों को यह फायदेमंद लगता है, क्योंकि हिन्दूवाद के बढ़ने से उनकी दुकान छोटी होने का खतरा मंडराने लगता। हिन्दुओं की तादाद जितनी घटेगी, उनके लिए उतना ही बढ़िया है। हैरानी की बात है कि सत्तारूढ़ पार्टी में उच्च जाति के लोग ही ज्यादा हैं, इनमें कई तो ब्राह्मण हैं। प्रधान मंत्री ओली स्वयं एक ब्राह्मण परिवार से आते हैं। लेकिन सत्ता के इस खेल में धर्म उनके लिए बाधा बन सकता है। इसलिए बहुत सफाई से उन्होंने धर्म को किनारे कर दिया। वह किस्सा भी नेपाल के हिन्दू नहीं भूलते, जब तत्कालीन प्रधान मंत्री पुष्प कमल दहल प्रचंड ने जो खुद भी ब्राह्मण हैं, विश्व प्रसिद्ध शिव मंदिर पशुपतिनाथ में विवाद खड़ा किया, जिस कारण से मंदिर कई दिनों तक बंद रहा।

नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी हिन्दू धर्म को दूर रखने में इसलिए ही प्रयासरत है कि उसे लगता है कि कहीं कोई धार्मिक पार्टी राजनीति में न आ जाए। यह बात चीन को भी पसंद नहीं है कि कोई हिन्दूवादी दल नेपाल में सक्रिय हो जाए। इससे उनके हितों को चोट पहुंच सकती है। हिन्दू धर्म को दबाकर रखने में दोनों ही अपनी भलाई समझते हैं। नेपाल में हो रहे बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन पर इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी चुप रहती है। यह उसकी योजना का हिस्सा है।

प्रधानाचार्य की पुस्तक में दूसरे की सामग्री !

प्रधानाचार्य डॉ. पवन कुमार शर्मा द्वारा लिखित पुस्तक 'ट्रेनिंग एंड डेवलपमेंट' के 84 प्रतिशत अंश को साहित्यिक कदाचार से प्रभावित माना गया। आरोप सामने आने पर महाविद्यालय की गवर्निंग बॉडी ने एक तीन सदस्यीय जांच समिति का गठन किया। समिति ने डॉ. शर्मा पर लगे साहित्यिक कदाचार के आरोप को सही पाया।

यथावत संवाददाता

देश के एक प्रमुख महाविद्यालय के प्रधानाचार्य साहित्यिक कदाचार के दोषी पाए गए हैं। यह अपने आप में गंभीर मसला है कि जो व्यक्ति अब तक हजारों छात्रों को उच्च मानदंडों के साथ शिक्षा हासिल करने का प्रमाणपत्र दे चुका हो, वही अपनी पुस्तक में अन्यत्र जगह से सामग्री लेने का दोषी हो। मुश्किल तो यह है कि जाने-अनजाने विश्वविद्यालय का एक प्रमुख अकादमिक अधिकारी भी इस व्यक्ति को संरक्षण देता दिख रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में देश ही नहीं अपितु भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न देशों के विद्यार्थी तथा शोधार्थी भी अध्ययन हेतु आते हैं। ऐसे विश्वविद्यालय से जुड़े दयाल सिंह सांध्य महाविद्यालय के प्रमुख, यानी प्रधानाचार्य पर ऐसा दोष सिद्ध होना पूरे अकादमिक जगत को शर्मशार करता है।

दिल्ली स्थित दयाल सिंह सांध्य महाविद्यालय देश के प्रमुख शैक्षणिक संस्थानों में शुमार है। इतिहास देखें तो यह स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी प्रणेताओं में से एक सरदार दयाल सिंह मजीठिया के स्वप्नों का वाहक है। देशभर के बहुत कम ही महाविद्यालयों को इतिहास के ऐसे शानदार पन्नों की विरासत का हिस्सा होने का सौभाग्य प्राप्त है। अकादमिक स्तर पर भी यह महाविद्यालय सम्मान का हकदार रहा है। ऐसे महाविद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. पवन कुमार शर्मा द्वारा लिखित पुस्तक 'ट्रेनिंग एंड डेवलपमेंट' के 84 प्रतिशत अंश को साहित्यिक कदाचार से प्रभावित माना गया। आरोप सामने आने पर महाविद्यालय की गवर्निंग बॉडी ने एक तीन सदस्यीय जांच समिति का गठन किया। समिति ने

डॉ. शर्मा पर लगे साहित्यिक कदाचार के आरोप को सही पाया। समिति ने लिखा, 'डॉ पवन कुमार शर्मा ने अपनी पुस्तक में न केवल साहित्यिक कदाचार का सहारा लिया, अपितु सार्वजानिक रूप से उपलब्ध स्रोतों में से कई का अपनी पुस्तक में पंक्ति-दर पंक्ति तथा शब्दशः प्रयोग किया।' जाँच-समिति ने अपने प्रतिवेदन में स्वीकार किया कि एक प्रतिष्ठित शैक्षणिक संस्थान के प्रमुख होने के नाते डॉ. शर्मा ने उच्च नैतिक तथा अकादमिक आदर्शों का पालन नहीं किया, जैसा कि उनसे अपेक्षित था।

महाविद्यालय की गवर्निंग बॉडी की ओर से नियुक्त समिति ने प्रधानाचार्य को दोषी पाया तो गवर्निंग बॉडी ने डॉ. शर्मा को प्रधानाचार्य पद हेतु द्वितीय पद-विस्तारण देने से इनकार कर दिया। डॉ. शर्मा का प्रधानाचार्य के रूप में कार्यकाल 26 जुलाई,2020 को समाप्त हो रहा था। साथ ही, गवर्निंग बॉडी ने कॉलेज के अकादमिक वातावरण के संरक्षण हेतु महाविद्यालय के वरिष्ठतम शिक्षक को प्रधानाचार्य का पदभार संभालने की संस्तुति कर दी। यह फैसला उचित ही था लेकिन इसके बाद जो हुआ वह दिल्ली विश्वविद्यालय की साख को गिराने वाला साबित हुआ है।

दयाल सिंह महाविद्यालय की गवर्निंग बॉडी के दिशा-निदेर्शों को दरकिनार करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के डीन ऑफ कॉलेजेस, डॉ. बलराम पाणी ने डॉ. पवन कुमार शर्मा को प्रधानाचार्य पद पर एक महीने का सेवा विस्तार प्रदान कर दिया। गजब यह है कि डॉ. पाणी के कार्यालय से निर्गत सेवा- विस्तार से जुड़ा यह पत्र अधोहस्ताक्षारित नहीं है। यह विश्विद्यालय की प्रशासनिक नियमावली के उल्लंघन के साथ-साथ पत्र की सत्यता को भी संदेह के घेरे में लाता है। इसी आधार पर गवर्निंग बॉडी ने डीन ऑफ कॉलेजेस के अहस्ताक्षरित पत्र की सत्यता को मानने से इनकार कर दिया था। इसके बावजूद गवर्निंग बॉडी के प्रस्तावों की अनदेखी करते हुए विश्वविद्यालय प्रशासन ने यह सुनिश्चित किया कि साहित्यिक कदाचार के आरोप के दोषी डॉ. शर्मा को एक महीने का सेवा विस्तार मिल जाय। पूरे घटनाक्रम ने विश्वविद्यालय प्रशासन की कार्यप्रणाली तथा मंशा दोनों पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया है।

विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार महाविद्यालय के प्रशासन तथा नियुक्तियों के मामलों में गवर्निंग बॉडी के निर्णय सर्वोच्च माने जाते हैं। दयाल सिंह सांध्य महाविद्यालय के इस मामले में गवर्निंग बॉडी की इस विशिष्ट प्रशासनिक भूमिका की विश्विद्यालय प्रशासन द्वारा अवहेलना की गयी है। इसे ठीक नहीं करने पर भविष्य के लिए गलत उदारहण प्रस्तुत होने की आशंका है। सवाल है कि क्या डॉ. शर्मा को एक महीने का सेवा-विस्तार प्रदान करते समय विश्वविद्यालय प्रशासन नियमावलियों से पूर्णतः अनभिज्ञ रहा है?

परम्परा यह है कि प्रधानाचार्य का पद खाली होने पर महाविद्यालय के वरिष्ठतम शिक्षक को प्रधानाचार्य का पदभार सौंप दिया जाय। हाल ही में सत्यवती, दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड कॉमर्स तथा अरविंदो तथा श्यामलाल (सांध्य) महाविद्यालयों की गवर्निंग बॉडी ने इस परंपरा का अनुपालन किया है। दयाल सिंह सांध्य महाविद्यालय के गवर्निंग बॉडी के दिशानिदेर्शों के बाद डॉ. पवन कुमार शर्मा को सेवा विस्तार नहीं मिलना चाहिए। ऐसे में प्रधानाचार्य का पद रिक्त होने पर वरिष्ठतम शिक्षक को अंतरिम पदभार न देकर डीन ऑफ कॉलेजेस ने महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय, दोनों के ही अकादमिक वातावरण को नुकासान पहुंचाया है। इस फैसले को वरिष्ठतम शिक्षक की नियुक्ति तक ही नहीं, एक दोषसिद्ध व्यक्ति को सेवा विस्तार देने के रूप में देखा जा रहा है।

डीन ऑफ कॉलेजेस ने न केवल महाविद्यालय की गवर्निंग बॉडी की अवहेलना की है, बल्कि एक गंभीर मामले में दोषी व्यक्ति के साथ खड़े दिख रहे हैं। सवाल है कि सेवा विस्तार पाए डॉ. पवन कुमार शर्मा छठे सेमेस्टर के विद्यार्थियों के चरित्र-प्रमाण पत्र पर हस्ताक्षर करने का नैतिक साहस जुटा पायेंगे ? क्या ये छात्र इस सत्य से समझौता कर पायेंगे कि ऐसे प्रधानाचार्य के विरुद्ध कार्यवाही न कर देश के दिल्ली विश्वविद्यालय के शीर्षस्थ शैक्षणिक संस्थानों में से एक होने की महाविद्यालय की प्रतिष्ठा को मलिन तथा धूमिल किया गया है।

यूजीसी है बेहद सख्त

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमिशन) ने किसी के खुद के कॉन्टेंट को भी दोबारा इस्तेमाल करने के मामले में अभी अप्रैल में ही एक चेतावनी जारी की है। इसके पहले भी तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्रालय और यूजीसी ने कई गाइडलाइंस जारी की हैं। इन गाइडलाइंस में रिसर्च से संबंधित साहित्यिक चोरी को लेकर चेताया गया है।

वर्ष 2017 में साहित्य चोरी के मामलों में शून्य सहिष्णुता के प्रयास के तहत यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमिशन ने नीति का मसौदा तैयार किया था। उसके मुताबिक, उच्चतर शिक्षण संस्थानों के उच्चतर समितियां साहित्यिक चोरी का स्वतः संज्ञान लेकर कार्यवाही कर सकती है। तय सजा के तहत पहले और दूसरे स्तर पर शोधार्थी को अपने कार्य में संशोधन का मौका मिलेगा। इसके अतिरिक्त 60 फीसदी से ज्यादा साहित्यिक समाग्री के कदाचार में तीसरे स्तर का मामला बनता है। इस स्तर के दोषी का रजिस्ट्रेशन रद्द कर दिया जाएगा। डॉ. पवन कुमार शर्मा ने तो अपनी पुस्तक में 84 प्रतिशत से भी अधिक सामग्री कहीं और से ली है। स्वाभाविक तौर पर शोधार्थियों के लिए बने नियम उनके सुपरवाइजर पर भी लागू होते हैं। शिक्षा संस्थानों में कार्यरत व्यक्ति अपनी पुस्तकों को विधिवत अपनी योग्यता का हिस्सा बताया करते हैं। अब इस अप्रैल में यूजीसी ने पहले प्रकाशित हो चुके पेपर में से थोड़ा या पूरा मैटर इस्तेमाल करने को भी साहित्यिक कदाचार माना है। फिर 84 प्रतिशत तक अन्यत्र से लेने के मामले को क्या कहेंगे, यह स्पष्ट है।

आंकड़ों की बाजीगरी से घटता कोरोना

सरकार कोरोना के कम आंकड़ें बताकर अपनी पीठ खुद थपथपा रही है। जबकि असलियत इसके विपरीत है। दिल्ली में घटते आंकड़ों को लेकर विशेषज्ञ आश्वस्त नहीं हैं। क्योंकि सरकार कम प्रामाणिक टेस्ट की संख्या बढ़ाकर और प्रामाणिक टेस्ट घटाकर आंकड़ें जारी कर रही है। यह आंकड़ों की बाजीगरी है। जो दिल्ली सरकार कर रही है। जमीनी रिपोर्ट यह भी आ रही है कि कई लोगों को टेस्ट रिपोर्ट नहीं दी जाती है। ऐसे में सरकार के आंकड़ों पर विश्वास कैसे किया जाए।

गुंजन कुमार

दिल्ली में कोरोना के सरकारी आंकड़ें से लोग खुश हैं। दिल्ली सरकार इसे अपनी बहुत बड़ी उपलब्धि मानती है। क्योंकि अभी भी देश के अधिकतर राज्यों और शहरों से खबरें बुरी ही आ रही है। सिर्फ दिल्ली ने ही यह कमाल कर दिखाया है। आखिर कैसे? क्या दिल्ली के आंकड़े खुश होने लायक है। क्या राजधानी में घटते कोरोना संक्रमितों की संख्या देश के लिए उम्मीद की किरण है। इस तरह के कई सवाल लोगों के मन में आज कल उठ रहे हैं। यदि केजरीवाल सरकार द्वारा जारी आंकड़ों को आंख मूंद कर विश्वास कर लें तो इसका जवाब 'हां' में है। लेकिन कुछ जमीनी हकीकत, आंकड़ों के विश्लेषण और कुछ विशेषज्ञों की राय बंद आंखों को खोलती है। यानी अभी भी सब कुछ खुशनुमा नहीं है। केजरीवाल सरकार आंकड़ों की बाजीगरी कर रही है। ठीक उसी तरह जैसे कोरोना से होने वाली मौत में किया गया था।

पहले जमीनी हकीकत पर नजर डालते हैं। उत्तर-पूर्वी दिल्ली के बुराड़ी विधानसभा क्षेत्र। हालिया चुनाव में यहां से आम आदमी पार्टी (आप) के उम्मीदवार सबसे ज्यादा वोटों से जीत दर्ज की थी। लोगों को आम आदमी पार्टी से बहुत ज्यादा उम्मीद थी कि 'आप' सरकार अन्य सरकार से अच्छा काम करेगी। लेकिन कोरोना जैसे वैश्विक आपदा में केजरीवाल सरकार ने दिल्लीवासी को अपने हाल पर छोड़ दिया है। बुराड़ी के उत्तराखंड कॉलोनी के एक गली में दो लोग कोरोना पॉजिटिव पाए गए थे। उनके सम्पर्क

में आए गली के 18 लोगों ने अपनी जांच करवाई। इनमें से 9 लोग निगेटिव पाए गए। अस्पताल ने उन्हें निगेटिव रिपोर्ट दिया। शेष 9 लोगों को घर में रहने को कहा गया। उन्हें न तो निगेटिव और न ही पॉजिटिव रिपोर्ट दिया गया। यहां सवाल यही उठता है कि आखिर उन 9 लोगों को जांच रिपोर्ट क्यों नहीं दिया गया। दूसरा उन्हें घर में रहने को क्यों कहा गया।

उन 9 लोगों में एक का नाम है, सोबन कबडोला। उनसे बात की। उन्होंने बताया, 'उनमें कोरोना के कोई लक्षण नहीं है। हम 18 में से किसी में लक्षण नहीं था। फिर भी हमने जांच करवाई। सिर्फ इसलिए कि हम संक्रमित के संपर्क में आए थे। कुछ लोगों को कोई रिपोर्ट नहीं मिला। उसमें हम भी थे। हमें कहा गया कि आप लोग घर में रहे। बाहर कम निकले। पहले हमें कोई चिंता नहीं थी लेकिन अब हो रही है। समझ में रहा कि क्या करें। घर के लोग भी परेशान हैं।' सोबन की बातों से स्पष्ट होता है कि अस्पतालों में जांच रिपोर्ट छुपाया जा रहा है। आखिर जांच कराने पर रिपोर्ट क्यों नहीं दिया जा रहा है। सरकार कुछ न कुछ जरूर छुपा रही है। इसी कॉलोनी के आरडब्ल्यूए महासचिव कमलेश्वर पटेल कहते हैं, 'यह बात सही है। कुछ लोगों को अस्पताल ने बिना रिपोर्ट दिए घर भेज दिया। बिना रिपोर्ट दिए घर भेजने वाले कई और लोगों ने भी मुझ से संपर्क किया था। मैंने पता किया तो बताया गया की उन्हें दूसरी जांच के लिए जरूर बुलाया गया होगा। जो की नहीं था।

दिल्ली में आंकड़ों को कैसे दबाया जा रहा है। यह एक उदाहरण है। राजधानी में कोरोना के काम आंकड़ें आने के पीछे एक बड़ा कारण यही है। जून माह में राजधानी दिल्ली कोरोना का हॉट स्पॉट बना हुआ था। दिल्ली सरकार कुछ भी करने में असक्षम दिख रही थी। मीडिया और सोशल मीडिया में केजरीवाल सरकार की आलोचना हो रही थी। स्तिथि बेकाबू हो रही थी। तब केंद्र को सक्रिय होना पड़ा। दिल्ली में बेडों को संख्या बढ़ाई गई। टेस्टिंग भी बढ़ाई गई। टेस्टिंग बढ़ते ही संक्रमितों संख्या तेजी से बढ़ने लगी। विशेषज्ञों की राय यही है कि टेस्टिंग बढ़ा कर ही कोरोना को हरा सकते हैं। इसलिए दिल्ली में भी केंद्र के पहल पर टेस्टिंग बढ़ाया गया। अभी भी देश के किसी बड़े शहरों या राज्यों में कोरोना के घटने की रिपोर्ट नहीं आ रही है। इकलौता दिल्ली ही है, जहां कोरोना संक्रमितों की संख्या घट रही है। इसके पीछे दिल्ली सरकार के आंकड़ों की बाजीगरी है।

कोरोना का पता करने के लिए देश में दो तरह की जांच होती है। पहला, रैपिड एंटीजन टेस्ट और दूसरा, आरटी-पीसीआर टेस्ट। रैपिड एंटीजन टेस्ट को कम प्रमाणिकता वाला जांच माना गया। वहीं आरटी-पीसीआर टेस्ट को सटीक जांच रिपोर्ट देने वाला माना गया है। केंद्र की सक्रियता के बाद दिल्ली में दो टेस्ट को बढ़ाया गया। पहले रैपिड एंटीजन टेस्ट में पॉजिटिव और निगेटिव आने वाले दो प्रकार के लोगों का आरटी-पीसीआर टेस्ट होता था। जिस कारण संक्रमितों संख्या तेजी से बढ़ रही थी। फूलबाग निवासी संदीप तिवारी ने जून के अंतिम सप्ताह बाबू जगजीवन राम अस्पताल में कोरोना जांच करवाया था। इनका पहले रैपिड एंटीजन टेस्ट हुआ था। इस जांच में पॉजिटिव आने पर अगले दिन उनका आरटी-पीसीआर टेस्ट किया गया। लेकिन दिल्ली सरकार ने धीरे-धीरे प्रमाणिक जांच आरटी-पीसीआर टेस्ट की संख्या ही घटा दी। देश भर में कई बार ऐसा हुआ है कि रैपिड एंटीजन टेस्ट में निगेटिव आने वाले लोग आरटी-पीसीआर टेस्ट में पॉजिटिव पाए गए। फिर दिल्ली सरकार ने आरटी-पीसीआर टेस्ट को ही कम कर दिया है। इस तरह इन टेस्टों के आंकड़ों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि आरटी-

दिल्ली में घटते पीसीआर टेस्ट

12 जुलाई (कोरोना मरीज 1573)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 11793
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 9443

13 जुलाई (कोरोना मरीज 1246)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 8311
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 3860

14 जुलाई (कोरोना मरीज 1606)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 15413
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 5650

15 जुलाई (कोरोना मरीज 1647)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 15964
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 6565

16 जुलाई (कोरोना मरीज 1652)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 14329
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 5896

17 जुलाई (कोरोना मरीज 1462)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 14194
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 6270

18 जुलाई (कोरोना मरीज 1475)
रैपिड एंटीजन टेस्ट - 15412
आरटी-पीसीआर टेस्ट - 6246

दिल्ली में बेडों को संख्या बढ़ाई गई। टेस्टिंग भी बढ़ाई गई। टेस्टिंग बढ़ते ही संक्रमितों संख्या तेजी से बढ़ने लगी। विशेषज्ञों की राय यही है कि टेस्टिंग बढ़ा कर ही कोरोना को हरा सकते हैं। इसलिए दिल्ली में भी केंद्र के पहल पर टेस्टिंग बढ़ाया गया। अभी भी देश के किसी बड़े शहरों या राज्यों में कोरोना के घटने की रिपोर्ट नहीं आ रही है। इकलौता दिल्ली ही है, जहां कोरोना संक्रमितों की संख्या घट रही है। इसके पीछे दिल्ली सरकार के आंकड़ों की बाजीगरी है।

पीसीआर टेस्ट कम करने से संक्रमितों की संख्या घटती है और इस टेस्ट को बढ़ाने पर संक्रमित भी बढ़ते हैं।

स्वास्थ्य विभाग के सूत्र बताते हैं कि केंद्र के सक्रिय होने पर आरटी-पीसीआर टेस्ट 10 हजार से ज्यादा होते थे। लेकिन जुलाई के दूसरे सप्ताह से इसकी टेस्ट आधी से भी कम कर दी गई। है दिल्ली सरकार के स्वास्थ्य विभाग की ओर से जारी आंकड़े बताते हैं कि आरटी-पीसीआर टेस्ट की संख्या किस तरह से 10 हजार से कम हुई है। जांच कम होने पर सवाल न उठे इसके लिए एंटीजन टेस्ट की संख्या बढ़ा दी गई। इन दिनों प्रतिदिन औसतन 10 हजार से ज्यादा एंटीजन टेस्ट हो रहे हैं। अब दिल्ली सरकार टेस्टिंग आंकड़ों का विश्लेषण करते हैं। दिल्ली स्वास्थ्य विभाग के आंकड़ों के मुताबिक 13 जुलाई पीसीआर टेस्ट मात्र 3860 किये गए। इस दिन कोरोना पॉजिटिव केस 1246 आये। इसके एक दिन पहले यानी 12 जुलाई को पीसीआर टेस्ट 9443 हुए थे। 14 जुलाई को पीसीआर टेस्ट 5650 किये गए तो कोरोना संक्रमित की संख्या पिछले दिन से ज्यादा आ गई। 14 जुलाई की 1600 से ज्यादा संक्रमित केस आये। यानी जिस दिन पीसीआर टेस्ट ज्यादा होता है, उस दिन संक्रमितों की संख्या भी ज्यादा आती है। विशेषज्ञ भी मानते हैं, 'दिल्ली में कोरोना के घटते मामले के पीछे एक वजह आरटी-पीसीआर टेस्ट की कम संख्या भी हो सकती है।

हालांकि दिल्ली सरकार इसे सही नहीं मानती है। दिल्ली के स्वास्थ्य मंत्री सत्येंद्र

विशेषज्ञ भी मानते हैं, 'दिल्ली में कोरोना के घटते मामले के पीछे एक वजह आरटी-पीसीआर टेस्ट की कम संख्या भी हो सकती है।

जैन कहते हैं, 'पहले कहा जा रहा था कि एंटीजन टेस्ट में रिपोर्ट गलत बहुत आती है। लेकिन अब दोनों टेस्ट में गलत होने का चांस समान ही हैं। आरटी-पीसीआर टेस्ट में समय भी ज्यादा लगता है। एंटीजन टेस्ट की रिपोर्ट जल्दी आती है।' दिल्ली सरकार कह रही है कि वह घर-घर जाकर स्वास्थ्य जांच कर रही है। लेकिन यह भी सरासर गलत है। विशेषज्ञ अब भी मानते हैं कि पीसीआर टेस्ट रिपोर्ट आने में समय लगता है लेकिन सटीक होता है।

दिल्ली मेडिकल एसोसिएशन के पूर्व अध्यक्ष डॉ के के अग्रवाल कहते हैं, ' एंटीजन टेस्ट जल्दी होता है। इसमें कुछ ही समय में नतीजा सामने होता है। जबकि आरटी-पीसीआर टेस्ट की नतीजा देर से आता है। दोनों टेस्ट में मुख्य अंतर यह है कि वे वायरस के विभिन्न हिस्सों की तलाश करते हैं। एंटीजन टेस्ट वायरल प्रोटीन की तलाश करता है जिसकी उपस्थिति संक्रमण के प्रमाण के रूप में ली जाती है। लेकिन उनकी अनुपस्थिति का मतलब यह कतई नहीं है कि व्यक्ति संक्रमित नहीं है। इसलिए इसमें सटीक नतीजा नहीं आता है।'

डॉ अग्रवाल यह भी समझाते हैं कि आरटी-पीसीआर टेस्ट वायरस के आरएनए की तलाश करता है। इसलिए यह अधिक विश्वसनीय नतीजा देता है। पीसीआर टेस्ट को एंटीजन टेस्ट की तुलना में ज्यादा पुख्ता टेस्ट माना गया है। भारत के मौजूदा टेस्टिंग प्रोटोकॉल के मुताबिक एंटीजन टेस्ट में नेगेटिव पाए गए सभी व्यक्तियों का आरटी-पीसीआर किट से भी टेस्ट होना चाहिए। लेकिन दिल्ली में ऐसा नहीं हो रहा है। यह बात दिल्ली स्वास्थ्य विभाग के आंकड़ें और यहां के मंत्रियों के बयान से भी साबित होता है। इसी कारण से कई विशेषज्ञ मानते हैं कि दिल्ली में संक्रमण के नए मामले दर्ज होने की गिरती रफ़्तार खराब टेस्टिंग रणनीति का परिणाम हो सकती है।

पब्लिक हेल्थ फाउंडेशन ऑफ इंडिया के डॉक्टर के श्रीनाथ रेड्डी भी दिल्ली में कोरोना की संख्या घटने से पूरी तरह आश्वस्त नहीं हैं। वह कहते हैं कि संख्या कम होना अच्छी बात है। लेकिन अभी नतीजा निकालना जल्दबाजी होगी। इसकी व्याख्या फि लहाल दो तरह से हो सकती है। पहली, दिल्ली में केस वाकई घट रहे हैं और स्थिति में सुधार हो रहा है। दूसरी, दिल्ली सरकार ने एंटीजन टेस्ट की जो संख्या बढ़ाई है, ये उसका नतीजा है। इसकी व्याख्या होना जरूरी है। डॉ रेड्डी नेशनल कोविड-19 टास्क फोर्स के सदस्य भी हैं। इसलिए यहां के आंकड़ों से दिल्ली सरकार खुश हो सकती है। वह अपनी उपलब्धि मान सकती है। इस पर राजनीति भी कर सकती है लेकिन दिल्लीवासियों को खुश होने का वक्त अभी नहीं आया है।

डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'

जीवन हर पल मुस्काएगा

निश्चित अगर पतझर का आना,
सावन भी तब निश्चित आएगा!

अंधियारी हो रात कहीं भी,
उजला सूरज आता है पगले!
मौन भले हो जाए जीवन,
सृजन मगर गाता है पगले!!

झंझावातों से क्या डरना?
सृजन नया मौसम लाएगा!

क्या रुकती है बहती नदिया?
छोड़ा उसने क्या प्यास बुझाना?
चलना ही तो जीवन पगले,
यही प्रगति का गीत सुहाना!!

कितना भी विध्वंस डरा ले,
निर्माण धरा को चमकाएगा!

आशा जिसके भी साथ रहेगी,
मंजिल उसको मिल ही जाएगी!
विश्वास स्वयं पर रखना तू भी

खुद साथ कीर्ति चली जाएगी!!

मृत्यु तो एक बार है आती,
पर जीवन हरपल मुस्काएगा!

तन की माया : मन की माया

तन की माया चहक रही है,
पर मन की माया सोई है!
इस के अधरों पर मुस्कानें,
पर वो जाने क्यों रोई है!!

अमृत चाहे मन की माया,
मिलता नहीं कहीं जग में!
तन की माया को विष भाता,
मिल जाता है हर मग में!!
बस एक घूमती द्वारे - द्वारे,
पर दूजी अपने में खोई है!
इसके अधरों पर मुस्कानें,
पर वो जाने क्यों रोई है!!
तन की माया बेहद चंचल,

भरमाई सी जग में फिरती!
मन की माया सिमटी खुद में,
भावों की लहरों पर तिरती!!

मृगतृष्णा में उलझी है यह,
पर वह चिंतन में खोई है!
तन की माया चहक रही है,
पर मन की माया सोई है!!

चमक दमक तो मिट जाएगी,
पर भावों का संसार अमर है!
तन की माया छूटेगी कल,
मन की माया सदा अजर है!!

सदा जगेगी तन की माया,
मन की माया कब सोई है!
इसके अधरों पर मुस्कानें,
पर वो जाने क्यों रोई है!!

जीवन तो तब ही जीवन है

जीवन तो तब ही जीवन है,
जब जीने की चाह रहे!
मन में हो विश्वास का सूरज,
आँखों में नित राह रहे!!

चलना ही तो जीवन होता,
गीता का है मर्म यही!
आशा के संग बढ़ना आगे,
मानव का तो धर्म यही!!

सागर कितना भी गहरा हो,
उसकी हम को थाह रहे!

जीवन तो तब ही जीवन है,
जब जीने की चाह रहे!!

मन की बात सुनें हम सारे,
तन की बातें हैं बेमानी!
उसको ही मंजिल मिलती है,
जिसने अपनी राह है जानी!!

बाधाओं से क्या घबराना, मन
में चलने की चाह रहे!
मन में हो विश्वास का
सूरज,आँखों में नित राह
रहे!!
सारा जग तब सुन्दर लगता,
मन में जब विश्वास रहे!
पाँव तभी बढ़ते हैं आगे,
जब मंजिल की आस रहे!!

कोई नहीं रहेगा दुश्मन, जब
तक मन में चाह रहे!
जीवन तो तब ही जीवन है, जब
जीने की चाह रहे!!

सितंबर में सजेगा आईपीएल मेला!

टी-20 विश्वकप और एशिया कप के नहीं होने की सूरत में आईपीएल के आयोजन का रास्ता साफ हो गया। इस स्थिति से पाकिस्तान के कई पूर्व क्रिकेटर बेहद असहज हो गए हैं। वे इसे बीसीसीआई की बढ़ती ताकत के सामने दूसरे क्रिकेट बोर्ड के लगातार बौने होते जाने से जोड़कर देख रहे हैं। पाक क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान इंजमाम उल हक पहले ही इसपर आपत्ति जता चुके थे।

संजीव

कोरोना वायरस के विश्वव्यापी अवसाद से उबरने के लिए क्रिकेट गतिविधि लगातार जोर पकड़ रही हैं। इसी कड़ी में इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) के आयोजन को लेकर अहम फैसला लिया गया है। हालांकि इस पर फैसले से पहले कोरोना वायरस के चलते टी-20 विश्वकप और एशिया कप के स्थगित होने की खबर आई। इसके साथ ही आईपीएल का रास्ता साफ हो गया। 19 सितंबर से 8 नवंबर के बीच यूएई में इसका आयोजन किया जाना है। पाकिस्तान को छोड़कर दुनिया भर के क्रिकेटर और क्रिकेट प्रशंसकों ने इस आयोजन को लेकर खुशी जतायी है।

आईपीएल का 13वां संस्करण 19 सितंबर से शुरू होगा। यूएई में 51 दिनों तक चलने वाले इस टूर्नामेंट का फाइनल 08 नवंबर को खेला जाएगा। आईसीसी के टी-20 विश्वकप स्थगित किए जाने के बाद बीसीसीआई अपने इस सबसे लोकप्रिय टूर्नामेंट के लिए मौका तलाशने में कामयाब हो गया है। हालांकि यूएई में भी इस आयोजन को लेकर कई तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। यूएई 2014 में आईपीएल के 20 मैचों की सफल मेजबानी कर चुका है।

इसके पहले कोरोना के विश्वव्यापी खतरों को देखते हुए टी-20 विश्वकप का आयोजनकर्ता देश ऑस्ट्रेलिया ने इस आयोजन को लेकर असमर्थता जता दी। ऑस्ट्रेलिया ने कोरोना संक्रमण की वजह से अपनी अंतरराष्ट्रीय सीमाओं को छह महीने के लिए बंद कर दिया। ऐसे में उसके लिए दुनिया भर के क्रिकेट खिलाड़ियों को ऑस्ट्रेलिया लाने, उनके ठहरने व खानपान के साथ-साथ स्टेडियम तक सुरक्षित आने-जाने में बेशुमार जोखिम थे। इन खतरों को देखते हुए उसने टी-20 विश्वकप के आयोजन से हाथ खींच लिए। आईसीसी के टी-20 विश्वकप नहीं कराने के फैसले के पीछे क्रिकेट ऑस्ट्रेलिया की यही असमर्थता थी।

इसके पहले इस साल सितंबर में होने वाले एशिया कप का आयोजन भी अगले साल तक के लिए टाल दिया गया। पाकिस्तान के पास छह टीमों के महाद्वीपीय टूर्नामेंट की मेजबानी के अधिकार थे लेकिन कोरोना से पैदा हुए हालात को देखते हुए पीसीबी ने इसे श्रीलंका से बदलने का फैसला किया था। पीसीबी प्रमुख एहसान मनी ने कहा कि महामारी की स्थिति के कारण यह फैसला लिया गया है। इस साल इसकी मेजबानी काफी खतरनाक है और हमने इस साल श्रीलंका से इस टूर्नामेंट की अदला-बदली की क्योंकि यह दक्षिण एशिया में कोरोना से सबसे कम प्रभावित देशों में एक है। एशियाई क्रिकेट परिषद् (एसीसी) इसे अगले साल आयोजित करना चाहती है। अगले साल श्रीलंका इस आयोजन की मेजबानी करेगा।

एशिया कप अगले साल तक स्थगित किए जाने का फैसले की जानकारी को लेकर उस समय विवाद पैदा हो गया, जब बीसीसीआई अध्यक्ष सौरव गांगुली ने अपने जन्मदिन पर इंस्टाग्राम लाइव के दौरान एक

न्यूज चैनल से बातचीत में बताया कि इस साल एशिया कप का आयोजन संभव नहीं है। जबकि एशिया कप के भविष्य को लेकर फैसला उसके अगले दिन यानी 9 जुलाई को आना था। खासतौर पर पाकिस्तान के पूर्व क्रिकेटरों को इस बात को लेकर आपत्ति थी कि बीसीसीआई अध्यक्ष सौरव गांगुली ने आखिरकार एकदिन पहले 8 जुलाई को ही एशिया कप नहीं होने का एलान कैसे कर दिया। जबकि इसका फैसला एशियाई क्रिकेट परिषद् में किया जाना था।

पाक हुआ असहज

टी-20 विश्वकप और एशिया कप के नहीं होने की सूरत में आईपीएल के आयोजन का रास्ता साफ हो गया। इस स्थिति से पाकिस्तान के कई पूर्व क्रिकेटर बेहद असहज हो गए हैं। वे इसे बीसीसीआई की बढ़ती ताकत के सामने दूसरे क्रिकेट बोर्ड के लगातार बौने होते जाने से जोड़कर देख रहे हैं। पाक क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान इंजमाम उल हक पहले ही इसपर आपत्ति जता चुके थे। जबकि पाक के पूर्व गेंदबाज शोएब अख्तर और पूर्व कप्तान राशिद लतीफ ने सीधे-सीधे बीसीसीआई पर इल्जाम लगाने से भी परहेज नहीं किया। इन दोनों खिलाड़ियों का आरोप था कि आईसीसी ने आईपीएल के आयोजन के लिए टी-20 विश्वकप को टाल दिया।

पाकिस्तानी मीडिया में दिए गए इंटरव्यू में शोएब अख्तर ने कहा कि 'आखिरकार एकबार फिर एक शक्तिशाली आदमी या शक्तिशाली क्रिकेट बोर्ड ने पॉलिसी बनायी और इस बात को सुनिश्चित किया कि हमें उसका नुकसान हो। टी-20 विश्वकप और एशिया कप इस साल खेले जा सकते थे। भारत और पाकिस्तान के लिए आपस में खेलने का ये मौका होता लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं होने दिया।'

पाक के इन पूर्व क्रिकेटरों को एशिया कप और टी-20 विश्वकप के रद्द होने से अफसोस है या आईपीएल के आयोजन से, यह कहना बहुत मुश्किल है। पाकिस्तान के इन पूर्व क्रिकेटरों को यह पता है कि इन दोनों आयोजनों के रद्द होने के बाद ही आईपीएल की संभावना बनी और इन आयोजनों के रद्द होने में बीसीसीआई की कोई भूमिका है, इसमें गहरा संदेह है। क्योंकि रद्द होने वाले दोनों ही आयोजन ऑस्ट्रेलिया और श्रीलंका में होने वाले थे। टी-20 विश्वकप का आयोजन ऑस्ट्रेलिया में होना था, जिसके लिए ऑस्ट्रेलिया ने खुद हाथ खड़े कर दिए। जबकि एशिया कप का आयोजनकर्ता पाकिस्तान ने पहले आयोजन की अपनी जिम्मेदारी श्रीलंका को सौंप दी और बाद में कोरोना के बढ़ते खतरों को देखते हुए इस साल टूनार्मेंट को स्थगित किए जाने को लेकर स्वयं पीसीबी अध्यक्ष ने रजामंदी दी। ऐसी स्थिति में बीसीसीआई ने आईपीएल के आयोजन के लिए अपनी संभावनाएं टटोली तो कौन-सा गुनाह किया? बीसीसीआई की जगह कोई दूसरा बोर्ड क्या ऐसा नहीं करता? पाकिस्तान भी क्या इसलिए राजी नहीं हुआ, क्योंकि अगले साल पीसीएल के लिए रास्ता साफ हो जाए?

बीसीसीआई ने आईपीएल के आयोजन के लिए अपनी संभावनाएं टटोली तो कौन-सा गुनाह किया? बीसीसीआई की जगह कोई दूसरा बोर्ड क्या ऐसा नहीं करता? पाकिस्तान भी क्या इसलिए राजी नहीं हुआ, क्योंकि अगले साल पीसीएल के लिए रास्ता साफ हो जाए?

आईपीएल और पाक

आईपीएल के 13वें संस्करण के आयोजन पर दुनिया भर के क्रिकेटर बेहद खुश हैं जो, इस टूनार्मेंट के भागीदार होंगे। दुनिया भर के क्रिकेटरों के बीच पाकिस्तान का मामला अलग है। दरअसल, पाकिस्तान के क्रिकेटरों पर आईपीएल खेलने को लेकर पाबंदी है। मुंबई हमले के बाद द्विपक्षीय क्रिकेट संबंधों के साथ-साथ आईपीएल में भी पाकिस्तानी क्रिकेटरों के खेलने पर पाबंदी लगा दी गयी। दुनिया भर के तमाम क्रिकेटर इस सबसे लोकप्रिय लीग का हिस्सा बनते हैं लेकिन पाकिस्तानी क्रिकेटरों को आईपीएल में खेलने पर मनाही है। भारी आर्थिक संकट से जूझ रहे पाकिस्तानी क्रिकेट बोर्ड इसी वजह से भारत के इस बेशुमार अवसरों वाले इस टूनार्मेंट पर नुक्ताचीनी करता रहा है। हालांकि जिन पाकिस्तानी खिलाड़ियों ने इस आयोजन में हिस्सा लिया है, वे आज भी इसमें शामिल होने के ख़्वाहिशमंद हैं। इनमें पाकिस्तान के खिलाड़ी सोहेल तनवीर ने हाल ही में कहा कि दुनिया के सबसे बेहतरीन लीग में हिस्सा नहीं ले पाने का उन्हें खासा अफसोस है। तनवीर आईपीएल के सर्वश्रेष्ठ गेंदबाज का खिताब जीत चुके हैं और शेन वार्न की अगुवाई वाले राजस्थान रायल्स का हिस्सा रहे हैं।

डॉ. वेद मित्र शुक्ल
हिंदी अकादमी, दिल्ली के सौजन्य से प्रकाशित गजल संग्रह जारी अपना सफर रहा और रामदरश मिश्र की लम्बी कविताएं (संपा.) चर्चित कृतियां हैं। आप की रूचि हिंदी-अंग्रेजी अनुवाद में भी है। हाल ही में आपकी कुछ कहानियां भी प्रकाशित हुई हैं।
संपर्कः राजधानी महाविद्यालय
राजा गार्डन, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली- 110015
मोबाइलः 9953458727, 9599798727
ईमेलः vedmitra.s@gmail.com

क्वारेंटाइन

ओंकार और ओजस दिल्ली महानगर के एक नामी कॉलेज में पढ़ रहे थे। ओंकार दृष्टिबाधित छात्र था। पहली बार ओजस ने कक्षा में किसी दिव्यांग छात्र को अपने साथ बैठा हुआ पाया था। पढ़ाई-लिखाई के प्रति उसके उत्साह और बिना किसी की मदद के अपनी छड़ी के सहारे पूरे कॉलेज में सामान्य विद्यार्थियों की तरह घूमते हुए उसे देखकर वह आश्चर्यचकित रह गया था। सबसे अधिक ताज्जुब ओजस को तब हुआ जब पिछले सेमेस्टर में ऑनलाइन परीक्षा फॉर्म को स्मार्टफोन से भरने में ओंकार ने उसकी मदद की थी। उसने अपने और उसके दोनों के ही फॉर्म भर लिए थे। मोबाइल तो उसके पास भी था, बल्कि ओंकार से अच्छा वाला, लेकिन उससे ओंकार तकनीकी ज्ञान के मामले में दो कदम आगे ही था। ओंकार का मोबाइल बोलने वाले सॉफ्टवेर के साथ-साथ दृष्टिबाधित लोगों के लिए तैयार किए गए सहायक ऐप्स से लैस था।

अलग-अलग राज्यों से आने वाले दोनों घनिष्ठ मित्र बन चुके थे। मित्रता बढ़ने पर दोनों ने मिलकर किराए पर एक फ़्लैट ले लिया था। साथ-साथ रहते हुए जुटकर पढ़ाई करते और मौका मिलने पर दिल्ली में घूमते-फिरते। पहला सेमेस्टर उत्तीर्ण करके अब दोनों दूसरे सेमेस्टर में आ गए थे। जनवरी और फरवरी माह के खत्म होते-होते पढ़ाई ने गति पकड़ी ही थी कि होली का त्योहार और मिड-सेमेस्टर ब्रेक नजदीक आ गए थे। इस कारण से मार्च में 10-12 दिनों का अवकाश एक साथ मिलने वाला था। ओजस ने तो घर जाने की पूरी तैयारी कर ली थी, लेकिन उसे ओंकार का कुछ पता नहीं चल पा रहा था। घर जाने के लिए उसने अभी तक रेलगाड़ी का रिजर्वेशन तक नहीं करवाया था। कोई तैयारी ही नहीं थी। सो ओजस ने उससे पूछ लिया,

'दोस्त, क्या कोई खास ऐप्प डाउनलोड कर रखा है जो होली के ठीक एक दिन पहले तुम्हे ट्रेन में रिजर्वेशन दिलवा देगा? होली में घर-वर नहीं जाना है क्या?'

'नहीं, दोस्त! स्कूल के दिनों से ही अंध-विद्यालय के छात्रावासों में रहा हूँ। दो-चार बार त्योहारों में गाँव गया, लेकिन, मेरे बड़े परिवार में माँ-बापू को छोड़कर सभी यहाँ तक कि मेरे भैया-भाभी भी मुझे परेशानी का सबब ही मानते हैं। सभी मुझे देखकर बेमतलब परेशान भी होंगे।' ओंकार बोला।

यह सुनकर ओजस का मन दुःखी हो गया। वह मन ही मन बुदबुदा उठा,

'सच में, दिव्यांगो के लिए कितनी तरह की चुनौतियाँ होती हैं। फिर भी, खुद को संभाले हुए हमेशा खड़े रहते हैं।'

एक पल के लिए उसने सोचा ही था कि उसे भी अपने घर न जाकर ओंकार के साथ ही होली मनानी चाहिए। तभी ओंकार ने ओजस के

मन में उठ रहे सुहानुभूति के बवंडर को भांप कर कहा, 'क्या हुआ, दोस्त! किस सोच में पड़ गए। अरे, मेरी बातों पर मत जाना। असल में, मुझे शहर बहुत अधिक पसंद है। चौबीस घंटे लाईट, साफ-सुथरे बाथरूम, और हाँ, फुटपाथ पर यलो टाइल्स, कॉलेज से मिला यह लैपटॉप। मोबाइल में नो नेटवर्क प्रोब्लम। ये सब वहाँ कहाँ?... हाँ, माँ-बापू की याद आती है। आगे जब फिर छुट्टी होगी तो जल्दी ही उनसे मिलने जाऊँगा।'

ओंकार बोलता जा रहा था, परन्तु, ओजस समझ चुका था कि वह उसे और अपने खुद के मन को इस तरह से बहला रहा है। उसने अपने मन में ठाना कि अगली होली वह जरूर ओंकार के साथ मनाएगा।

दिन बीते और होली के एक दिन पहले ओजस अपने घर को रवाना हो गया। घर पहुँचकर भी ओजस अपने दोस्त से दो दिन में एक बार जरूर बात कर लेता था। ओजस छुट्टियाँ बिताकर दिल्ली लौटता, उससे पहले एक बहुत बड़ी आफत आ गई। दुनिया भर में अपने पाँव पसार रही कोरोना बीमारी भारत में भी आ धमकी। ऐसे समय में परेशान करने वाले कई ख्याल उसके मन में आने लगे। यह सोचकर तो वह कांप ही उठा कि सोशल डिस्टैंसिंग के दौर में उसके अकेले दृष्टिबाधित दोस्त को अगर कहीं जरुरत पड़ी तो उसका हाथ पकड़कर अब कौन रास्ता पार करवाएगा? फिलहाल, किसी तरह अपने मन को उसने शांत किया था।

ओंकार और ओजस के बीच में मोबाइल ही एक सहारा रह गया था। एक दिन ओजस को पता चला कि कुक यानी खाना बनाने वाली ने कमरे पर आना बन्द कर दिया है। अरे भाई, तुम खाना कैसे और कहाँ खाओगे? तुम्हें तो खाना भी पकाना नहीं आता।' ओजस ने रुवांसे मन से पूछा तो साहसी ओंकार ने जवाब दिया था, 'चिंता क्यों करते हो दोस्त! मकानमालिकों को इस दौरान किराया न लेने का सरकारी फरमान जारी हुआ है। स्कॉलरशिप वाले रुपए अभी मेरे खाते में बचे हुए हैं। ऑनलाइन फूड डिलीवरी के मजे लूँगा।'

'वाह भई वाह! लॉकडाउन के वक्त डिजिटल इण्डिया के असली मजे तुम्ही ले रहे हो। आरोग्य सेतु डाउनलोड कर लिया है ना।' ओजस ने अपनी बात जोड़ी और फिर, दोनों खिलखिला कर जोर-जोर से हँसने लगे।

कम ही समय में ओजस अपने दिव्यांग दोस्त को अच्छी तरह से जान-समझ चुका था। वह हिम्मत न हारने वाला जिंदादिल शख्स था। पर, एक दिन गजब हो गया, जब उसने पूरे दिन में पचासों बार ओंकार को फोन मिलाया, लेकिन, उसका फोन नहीं उठा। घंटी भी नहीं जा रही थी। 'कोई उत्तर नहीं दे रहा है' मोबाइल से बार-बार यही आटोमेटेड आवाज आ रही थी। उसने एसएमएस, व्हात्सेप़ आदि भी भेजे। इनका भी कोई जवाब न आया। रात बीतते-बीतते वह समझ चुका था कि शायद ओंकार मोबाइल रिचार्ज नहीं करवा सका है और उसकी बचत के रुपये भी निश्चित रूप से खत्म हो चुके होंगे।

दूसरे दिन सुबह के कामों से निवृत हो सबसे पहले उसने अपने पापा की सहायता से ओंकार का मोबाइल रिचार्ज करवाया। अब जब उसने फोन लगाया तो कोविड-19 से जुड़े सन्देश के बाद मुश्किल से एक-दो बार भी रिंग नहीं गई होगी कि ओंकार चहका,

'धन्यवाद दोस्त! ए फ्रेंड इन नीड इस ए फ्रेंड इनडीड। 'फ्रेंड इनडीड के बच्चे! तुम्हारे मोबाइल के रुपये खत्म होने को थे और बताया तक नहीं। यह भी नहीं सोचा कि हम दोनों बातें कैसे करेंगे?' ओजस ने झिड़की लगाई।

वह कुछ और बोलता इससे पहले ओंकार बोल पड़ा, 'मैं जानता था कि मेरे दोस्त को कुछ बताने की जरुरत नहीं होती। वह मेरे बारे में सब जानता है। अच्छा, ओजस, मेरे मोबाइल का इंटरनेट चल पड़ा है। मुझे कुछ जरुरी ट्विट और मेल करने हैं। मैं बाद में बात करता हूँ।'

लाइन कट गई थी। ओजस मन भरकर बात नहीं कर पाया था। वह बुदबुदाया,

'पता नहीं किसे क्या ट्विट और मेल करेगा?'

तभी उसे ओंकार के स्वाभिमानी स्वभाव का

दिन बीते और होली के एक दिन पहले ओजस अपने घर को रवाना हो गया। घर पहुँचकर भी ओजस अपने दोस्त से दो दिन में एक बार जरूर बात कर लेता था। ओजस छुट्टियाँ बिताकर दिल्ली लौटता, उससे पहले एक बहुत बड़ी आफत आ गई। दुनिया भर में अपने पाँव पसार रही कोरोना बीमारी भारत में भी आ धमकी। ऐसे समय में परेशान करने वाले कई ख्याल उसके मन में आने लगे।

ख्याल हो आया।

'उसके पास तो रुपये-पैसे भी खत्म हो गए होंगे। यह बात आसानी से किसी से वह साझा नहीं करेगा। चलो, फिर से फोन लगाता हूँ और उसका बैंक खाता नंबर माँग लेता हूँ।'

मोबाइल बिजी जा रहा था। बार-बार मिलाने पर भी वही बात, 'लाइन व्यस्त है'।

'मोबाइल पर न जाने कहाँ लगा हुआ है? उठा क्यों नहीं रहा है?'

कुछ और कोशिशों के बाद झल्लाकर उसने तय किया कि अब शाम को ओंकार से बात करेगा। इस बीच उसने सारी बातें अपने पापा को बताई तो वे सहर्ष तैयार हो गए कि ओंकार का बैंक खाता संख्या पता चलते ही पर्याप्त रुपये ऑनलाइन डाल दिए जायेंगे। फिलहाल, दोपहर बीत चुकी थी। शाम ढलने को थी। अभी भी ओंकार का मोबाइल नहीं लग रहा था। वह खुद से बड़बड़ाया,

'लॉकडाउन में फंसे मेरे दिव्यांग दोस्त की कौन मदद करेगा?..अरे नहीं, वह बुद्धिमान है। नई राहें निकालना जानता है।'

उसने सोचा चलो दोस्त का ट्विटर अकाउंट चेक करते हैं। अकाउंट खुलते ही ओंकार की प्रोफाइल फोटो देखकर वह मुस्कराया। असल में ओंकार ने दूरबीन लगाए आसमान की ओर देखते हुए अपनी फोटो वहाँ लगा रखी थी। उसके मुँह से अनायास ही निकल गया, 'वाह, भाई दूरबीन के साथ!'

आगे जब ओजस ने प्रोफाइल पर उसके ट्वीट्स पढ़े तो वह दंग ही रह गया। एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा उसने कई ट्वीट अपने गृहक्षेत्र से जुड़े मंत्री, सांसद, विधायकों को टैग कर रखे थे। जिनमें कुछ ऐसा लिखा हुआ था कि वह डिफरेंटली एबल्ड है और अभी लॉकडाउन में फँसा हुआ है। उसे उसके गाँव पहुंचाया जाए। ऐसा पढ़ते ही उसने फिर से उसे फोन लगाना शुरू किया। अचानक लाइन मिल गई थी और ओंकार की आवाज सुनाई पड़ी,

'दोस्त! रास्ते में हूँ। वायस ब्रेक हो रही होगी। नेटवर्क समस्या... अगर, लाइन कट जाये तो परेशान मत होना। कल सुबह घर पहुँचकर बात करुँगा। फिलहाल, हाइवे खाली पड़े हुए हैं। मेरे जिले के जिलाधिकारी ने टैक्सी और यात्रा-पास के इंतजाम करवा दिए तो सोचा चलो, माँ-बापू से मिल आता हूँ। बहुत दिनों से घर गया नहीं था और वैसे भी लॉकडाउन में तो घर पर ही रहना चाहिए ना। दोस्त! क्वारेंटाइन वहीँ करुँगा।...'

भीड़ मौजूद,पर साक्ष्य नहीं !

अरशद जमाल

पुस्तक-नाम
भीड़ साक्षी नहीं होती

लेखक
बी. एन. उपाध्याय

मूल्य
150 रुपये

प्रकाशक का नाम
प्रभास प्रकाशन
52, तुलाराम बाग, इलाहाबाद

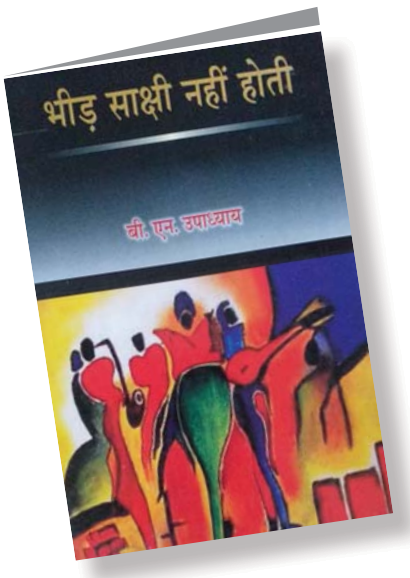

कविता कुछ अलग नितांत अनुभूतियों से सृजित हुआ करती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए कवि बी. एन. उपाध्याय कहते हैं, 'आदमी की यह भी एक बडी आवश्यकता है कि कोई उसे उसी स्तर पर समझ सके, जिस पर वह सोचता-विचारता और जीता है...।' इस अर्थ में देखें तो रचनाकार और पाठक के मध्य भी समस्तरीय सम्बंध आवश्यक हो जाते हैं। अलग बात है कि कवि कुछ ऐसा वक्तव्य दे जाता है, जो सहज ही समझा जा सकता है। एक उदाहरण देखें-

'रौंदने के लिए पैर ही काफी नहीं/ एक अदद मस्तिष्क भी है/ हमारे पास' रचनाकार की कविताओं के संग्रह 'भीड़ साक्षी नहीं होती' की पहली रचना से ही ली गई इन पंक्तियों की सच्चाई के लिए आखिर साक्ष्य कहां ढूंढ़ेंगे? इसके विपरीत सुप्रसिद्ध साहित्यकार और केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' कहानी संग्रह 'भीड़ साक्षी है' में अपने अलग तरह के अनुभव व्यक्त करते हैं। सम्भव है कि यह कहानी की बहिमुर्खी और कविता की अंतः अभिव्यक्ति के कुछ विभेदक प्रमाण हों। बहरहाल, यहां उद्देश्य बी. एन.उपाध्याय के काव्य संग्रह की मीमांसा है और कवि की उपर्युक्त पंक्तियाँ अर्थों के नवक्षितिज परत दर परत स्वमेव उजागर कर देती हैं। वहां मूल्यहीनता और अन्याय समाज को दीमक की तरह खोखला कर रहे हैं । 'ज़िन्दगी और मौत' कविता में ईश्वर से किया गया संवाद इकबाल के 'शिकवा और जवाबे-शिकवा' की याद दिलाता है। बी एन उपाध्याय के यहां संदर्भ आज के हैं- 'जब लोग दंगों में भी/ तुम्हारा हाथ देखने लगे हैं/ मंदिरों में भी/ लोग दुराचार करने लगे हैं/ मस्जिदों की अजान अब/ शीशों की मानिन्द पिघलने लगी है/ कानो में।' ईश्वर से सवाल करती कविता के साथ इस संग्रह में ऐतिहासिक आख्यानों के सहारे भी कवि सवाल छोड़ जाता है। उसे लगता है कि आज भी बहुत से अभिमन्यु कौरवों के बीच घिरे हुए हैं। खास बात यह कि यहां पात्र और उसकी ऐतिहासिक कथा, दोनों ही सवालों के घेरे में हैं - 'कौरव ही हैं जो सुरक्षित हैं/ इतिहास की तरह / असुरक्षित है तो केवल अभिमन्यु'

ये पंक्तियाँ इतिहास बोध को अर्थों की नव अन्विति प्रदान करने के लिए काफी हैं। ऐतिहासिक चरित्र वर्तमान में प्रासंगिक हो कर शोलों की तरह जल उठे हैं। वर्तमान तो सहज ही कवि के इर्द-गिर्द मौजूद है। संग्रह की भूमिका में जयप्रकाश धूमकेतु इस ओर संकेत भी करते हैं। यहीं कवि के प्रति शुभकामनाएं व्यक्त करते हुए कथाकार काशीनाथ सिंह के शब्द सार्थक हो उठते हैं- 'इसमें दो राय नहीं कि श्री उपाध्याय आज लिखी जा रही कविताओं से अछूते स्वावलंबी कवि हैं।'

जीवन के झंझावातों को प्रस्तुत करते कवि बी. एन. उपाध्याय नैराश्य की ओर नहीं जाते। 'इन्तेजार है' कविता में जो आशावाद है, जीवन और उसकी संभावनाओं के प्रति जो पॉज़िटिविटी है और अभिव्यक्ति का जो बेबाक स्तर है, उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा ना करना समीक्षा धर्म के प्रति अन्याय होगा- 'भूलने को बहुत कुछ है /फिर भी, इन्तेजार है/उस काया का/ जो धमाकों से ना बिखरे/ उस सर का/ जो पाबंदियों से ना झुके।'

इस संग्रह में 50 कविताओं को 88 पृष्ठों में प्रस्तुत किया गया है। प्रकाशक ने साज-सज्जा भी बेहतर की है, प्रूफ की मामूली सी असावधानियों के बावजूद कविताओं का सहज पाठ कहीं भी भटकने नहीं देता। काशीनाथ सिंह भी कहते हैं कि वे सभी कविताएं बिना रुकावट के पढ़ गये। शायद कारण यही है कि समाज की दिशा व दशा को उसकी यथार्थ वस्तुस्थिति में देखने परखने की समझ इन कविताओं को गहराई देती है और अपनी तमाम सादगी के साथ बड़ा बनाती है - 'नैतिकता का बीज/ प्रस्फुटित होने के कगार पर/ नहीं पहुंचता / खा जाती है उसे /जीवन की दौड़ और / जीते रहने की इच्छा/ क्योंकि महत्व है/ जीते रहने का/समझौतों का/ उपलब्धियों का।'

एक तरफ आधुनिक जीवन की जटिलताएं तो दूसरी तरफ समाज का नैतिक पतन, इस सदी के मानव को किस प्रकार पथभ्रमित करते हैं, इसकी एक बानगी 'राह चलते पांव' कविता में मिलती है। कृत्रिमता, दिखावा और बनावट ने समाज को एक ऐसी असहज स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है, जहां स्वस्थ समाज के विकास की नैसर्गिक गति बाधित होकर रह गई है, जिसका दर्द 'हमारा समाज' कविता में स्पष्टतया परिलक्षित होता है- 'हरियाली के नाम पर रोपा गया/ लॉन का कैक्टस/ अब हमारे अंदर उग आया है/ और उसके काँटे/ चीरने लगे हैं हमारे सम्बन्धों को।' भावबोध की गहनता व बहुआयामी नव-आधुनिक विषयों पर रचित कविताएं एवं भाषा की सरलता, प्रांजलता, कसावट और साहसी लहजा बी एन उपाध्याय को काव्य जगत में एक अलग स्थान प्रदान करने में सक्षम है। हमें उनके अगले काव्य संग्रह का इंतेजार रहेगा।

ओटीटी प्लेटफॉर्म पर फिल्में

यथावत प्रतिनिधि

ओटीटी के रास्ते पर फिल्में कोरोना महामारी ने ज़िंन्दगी के ढर्रे को एकबार में ही बदलकर रख दिया। जीवन के दूसरे क्षेत्रों की तरह सिनेमा देखने का तरीका भी बदलता दिख रहा है। महामारी में सिनेमाघर पूरी तरह बंद हैं। जब कभी स्थिति सुधरने पर इन सिनेमाघरों को दोबारा खोला भी जाएगा तो दर्शकों को सिनेमाघरों के साथ सहज होने में वक़्त लग सकता है। लॉकडाउन से ऐन पहले तैयार हो चुकी फिल्में इस दौरान डिजिटल माध्यम पर रिलीज हो रही हैं। घरों और कमरों में बंद लोग इन फिल्मों का आनंद ले रहे हैं। यह इतना लोकप्रिय हो रहा है कि 31 जुलाई को एक ही दिन में ओटीटी (ओवर दी टॉप) पर तीन-तीन फिल्में रिलीज हुईं।

इस दौर में अमेजन, हॉटस्टार, नेटफिलक्स जैसे कई ओटीटी प्लेटफॉर्म फिल्में लेकर आ रहे हैं। 31 जुलाई को ओटीटी पर रिलीज हुई फिल्मों में विद्या बालन की शकुंतला देवी, नवाजुद्दीन सिद्दीकी की रात अकेली है और लूटकेस शामिल है। इससे दूसरे फिल्मकारों को हौसला मिलेगा जो अभीतक ओटीटी पर अपनी फिल्में जारी करने में हिचकिचाहट महसूस करते थे।

कोरोना वायरस की वजह से मार्च के महीने से ही सिनेमाघर बंद हैं। ये कबतक खुलेंगे और कब तक उनमें दर्शकों की मौजूदगी सामान्य होगी, कहा नहीं जा सकता है। उसी तरह से फिल्मों की शूटिंग वगैरह भी मार्च में ही बंद हुई थी। अब इसके लिए कुछ सख्त नियमों के साथ दोबारा अनुमति दी गयी है। ऐसी स्थिति में फिल्म उद्योग को तकरीबन 2400 करोड़ के नुकसान की आशंका है।

सिनेमाघरों के बंद होने की वजह से फिल्मकार स्थिति सामान्य होने का इंतजार करते। लेकिन पहले से ही कई फिल्मकारों ने ओटीटी पर अपनी फिल्में लाकर वैकल्पिक जमीन तैयार कर ली थी। यह कोरोना काल में अनायास उनके लिए संजीवनी का काम कर रहा है। कई ऐसी फिल्में बनीं जिन्हें मार्च, अप्रैल या मई में रिलीज किया जाना था। इनमें से अमिताभ बच्चन और आयुष्मान खुराना की फिल्म गुलाबो सिताबो लॉकडाउन के दौरान ओटीटी पर रिलीज हुई। तब महीनों से घरों में कैद लोगों ने फिल्म को हाथोंहाथ लिया।

ओटीटी प्लेटफॉर्म जिस रफ्तार से आगे बढ़ रहे हैं, उससे डीटीएच ऑपरेटर्स के सामने भी बड़ी चुनौती आ रही है। एक सर्वे के मुताबिक 2023 तक तकरीबन 3.6 लाख करोड़ रुपये का केवल भारत में ओटीटी का मार्केट होगा। एक अन्य रिपोर्ट के मुताबिक 2018 तक यह मार्केट 35 हजार करोड़ का था लेकिन इंटरनेट की बढ़ती स्पीड और स्मार्टफोन यूजर्स की बढ़ती संख्या से भारत में ओटीटी मार्केट 15 फीसदी की रफ्तार से बढ़ रहा है। 2025 तक इसका ग्लोबल मार्केट 240 लाख करोड़ तक पहुंचने के आसार हैं। आने वाला समय डीटीएच ऑपरेटर्स के लिए इसलिए भी चुनौतीपूर्ण होगा, क्योंकि दर्शकों के सामने कई विकल्प होंगे। वह क्या देखे और कितना देखे। ओटीटी पर सामग्री की वेरायटी इसे और भी आकर्षक बनाती है।

क्या है ओटीटी

हाईस्पीड इंटरनेट से बिना केबल या सेटेलाइट प्रोवाइडर के टीवी और फिल्म सामग्री देखने की सुविधा देने वाले सिस्टम को ओवर दी टॉप (ओटीटी) कहते हैं। भारत के प्रमुख ओटीटी प्लेटफॉर्म हॉटस्टार, अमेजन प्राइम, नेटफिलक्स आदि हैं। पिछले साल मो-मैजिक द्वारा किए गए सर्वे में पाया गया कि देश में 55 फीसदी लोग टीवी शो, फिल्में, स्पोर्ट्स और दूसरे कंटेंट ओटीटी प्लेटफॉर्म पर देख रहे हैं। जबकि 41 फीसदी लोग इन कंटेंट के लिए डीटीएच प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल करते हैं। सर्वे के अन्य नतीजों से भी पाया गया कि इंटरनेट की पहुंच और उसकी तेज स्पीड देश में वीडियो कंटेंट देखने के तरीके को तेजी से बदल रही है।

ओटीटी की तरफ दर्शकों के बढ़ते रुझान को दशार्ने वाला यह सर्वे लॉकडाउन से पूर्व का है। तीन-चार महीने लगातार बंदी और भविष्य की अनिश्चितता में ओटीटी दर्शकों में और भी इजाफा ही हुआ है। सिनेमाघरों और केबल या सेटेलाइट माध्यमों के दर्शक इस दौरान भारी संख्या में ओटीटी पर शिफ्ट हुए हैं। इससे लगता है कि भारतीय सिनेमा ओटीटी के जरिए एक नये साहसिक रास्ते पर निकल चुका है। हालांकि इसके अपने जोखिम भी हैं लेकिन कोरोना वायरस के तूफान के बीच भारतीय सिनेमा के लिए इस भंवर से निकलने का कोई दूसरा विकल्प भी नहीं था।

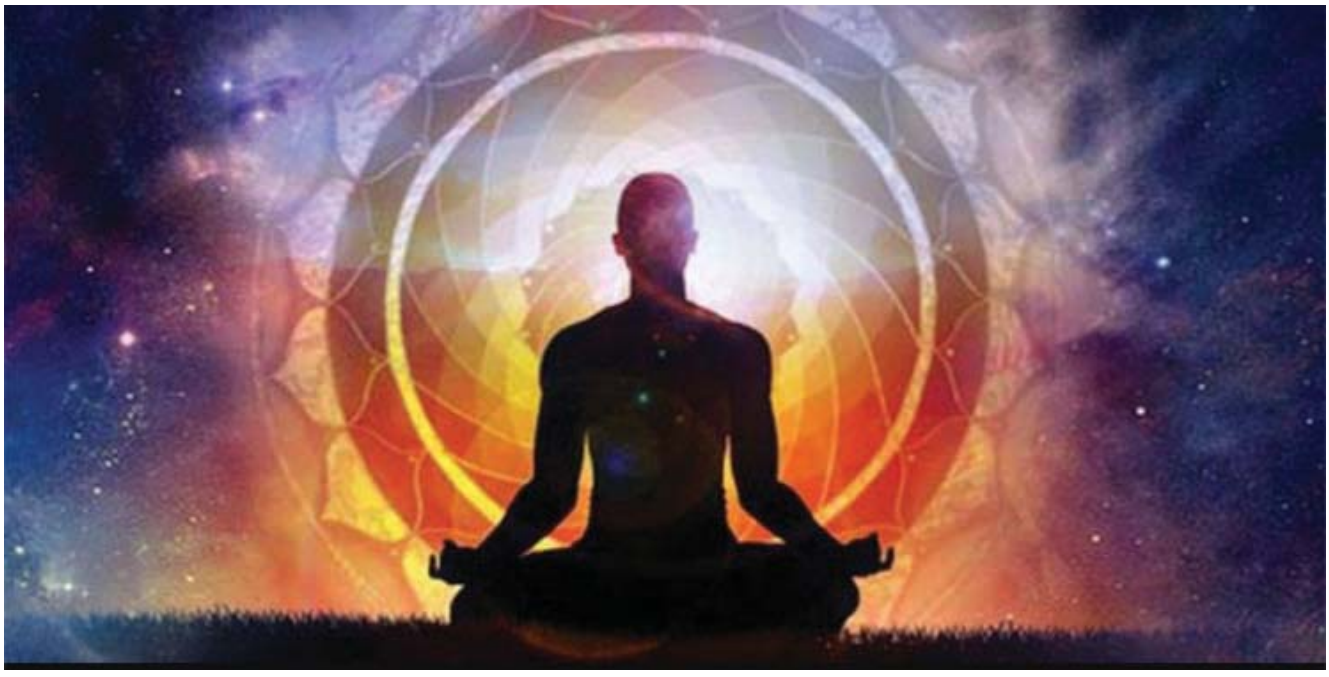

भक्ति योग का स्वरूप

इस संसार में सबसे अधिक जो खून खराबा हुआ है, उसमें अंध श्रद्धा की सबसे अधिक भूमिका रही है। इस संसार में लोग धर्म- मजहब और संप्रदाय में बंट कर अपने अपने ही इष्ट को समस्त संसार का रचयिता, पालनहार और ब्रम्हांडनायक मानते हैं। जबकि यह धारणा ही घोर असत्य है।

आचार्य कौशल कुमार

भक्ति- योग की अवधारणा को अच्छी तरह से समझने के लिए सर्वप्रथम हमें भक्ति और योग के वास्तविक अर्थ को समझना चाहिए। वृहत हिंदी कोश के अनुसार भक्ति का अर्थ है सेवा, आराधना, इष्ट या पूज्य व्यक्ति के प्रति अनुराग, ईश्वर के प्रति समर्पण, श्रद्धा, विभाग आदि है। योग के तीन मुख्य अर्थ माने गए हैं- जुड़ना, समाधि, संयम। वस्तुतः योग समाधि के अर्थ में ही लिया जाना चाहिए। अपने स्वरुप में स्थित हो जाना ही समाधि है। संक्षेप में अपने आप में स्थित हो जाना ही योग या समाधि है। इस प्रकार भक्ति -योग का अर्थ है इष्ट की सेवा, अनुराग, श्रद्धा या समर्पण द्वारा अपने स्वरूप में स्थित होना।

भारतीय आध्यात्मिक परंपरा में मोक्ष को परम पुरुषार्थ कहा गया है। मोक्ष है मोह का क्षय। मोह या आसक्ति ही हमारे दुःख का सबसे बड़ा कारण है। आसक्ति का कारण अविद्या है। अविद्या ही मनुष्य के दुखों की जननी है। योग मनुष्य की अविद्या को दूर करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। इसीलिए भारतीय आध्यात्मिक परंपरा में योग को शीर्ष स्थान प्राप्त है। सभी भारतीय दर्शन (चार्वाक को छोड़कर) योग को अपने यहां प्रमुख स्थान देते हैं। योग की मुख्यतया तीन विधाएँ हैं- ज्ञान योग, कर्म योग तथा भक्ति योग। चिंतन, मनन और अध्यवसाय द्वारा अपने स्वरूप में स्थित होना ही ज्ञान योग है। अपने निहित स्वार्थों को त्यागकर सर्वभूत के कल्याण हेतु निष्काम कर्म कर अपने स्वरूप में स्थित होने के मार्ग को कर्म योग कहते हैं। इष्ट की सेवा, उसके प्रति समर्पण, अनुराग, श्रद्धा द्वारा अपने स्वरूप में स्थित होना ही भक्ति योग है। आइए अब हम भक्ति- योग के स्वरूप को अच्छी तरह से समझने का प्रयास करें।

भक्ति का पहला अर्थ सेवा है। सबसे पहला प्रश्न उठता है की हम किसकी सेवा करें? इस सम्बन्ध में अनेको मत हैं। यदि विवेकपूर्वक देखा जाये तो सेवा जानदार की ही की जानी चाहिए। प्राणिमात्र को ही अपना इष्ट मानना और उनमें

अपनापन देखकर उनकी सेवा का प्रयास करना ही वास्तविक भक्ति है। पत्थर आदि जड़ मूर्तियों की सेवा करना अविवेक है। इसके उत्तर में लोग यही तर्क देते हैं कि सब कुछ हमारी भावना पर निर्भर करता है। मानों तो देव नहीं तो पत्थर। इसका सरल उत्तर यही है की हमारे मानने मात्र से कुछ नहीं होता। हम चाहे जितनी भावना कर लें, बैल दूध नहीं दे सकता। यह असत्य भावना कभी फलीभूत नहीं हो सकती। आखिर हम सही भावना कर जो जैसा है, उसे वैसा क्यों नही मानते हैं। पत्थर में गलत भावना करने से अच्छा हमें सभी प्राणी जो सजीव हैं, उनकी सेवा की भावना करनी चाहिए। प्राणी, गुरु, श्रेष्ठ जन, महापुरुष की सेवा करने से ही मन की शांति और प्रसन्नता मिल सकती है। प्राणि- सेवा विहीन सेवा निरर्थक ही नहीं, अनर्थ उत्पन्न करने वाली है।

भक्ति का दूसरा अर्थ है इष्ट या पूज्य व्यक्ति के प्रति अनुराग। आध्यात्मिक जिज्ञासु के लिए इष्ट या पूज्य वही हो सकता है, जिसका जीवन निर्मल हो और जो स्वयं अपने सत्य स्वरूप में स्थित हो। क्योंकि उसी के उत्तम आदर्श से ही भक्त अपने स्वरूप में स्थित या स्वरूपस्थ हो सकता है। हर एक जिज्ञासु के इष्ट अलग-अलग हो सकते हैं। कोई राम को, कोई कृष्ण, शिव, मुहम्मद, ईशा, कबीर, नानक को अपना इष्ट मानता है। जिनका शरीर छूट गया है, उन्हें भक्ति का आलम्बन बनाने में एक परेशानी होती है कि उनसे जिज्ञासु की जिज्ञासा का समाधान नहीं हो पाता। इसलिए जीवित पूज्य संत तथा सद्गुरु ही श्रेष्ठ हैं। किन्तु सद्गुरु वह हैं, जिनका आचरण शुद्ध हो। समाज में गुरु नामधारी ठग भी बहुत हैं, जो खुद तो बुराइयों में आकंठ डूबे रहते हैं और दूसरों को रिद्धि - सिद्धि , पुत्र, धन, निरोगता, धन- धान्य, मोक्ष आदि देने का झूठा प्रलोभन देते हैं। सांसारिक लोग अपनी इच्छाओं के दास होते हैं। धूर्त गुरु उनकी इस कमजोरी को जानते हैं और उन्हें सांसारिक चीजों का प्रलोभन देकर अपने जाल में फंसाते हैं। इसलिए ऐसे धूर्त गुरुओं से सावधान रहना चाहिए अन्यथा अंधे अँधा पेलिया दोनों कूप पराय वाली कहावत चरित्रार्थ होती है। वैसे आरम्भिक साधना में किसी सद्गुरु की आवश्यकता होती है। इसे अपरा भक्ति कहते हैं। यह भक्ति तम और रज के मलों को धुलने के लिए अनिवार्य होती है। यह भक्ति सांसारिक परदे के भीतर होती है। किन्तु, जिनके ये मल पहले ही धुल चुके हैं, उन्हें अगली सीढ़ी परा- भक्ति के साधना की आवश्यकता होती है। यह श्रेष्ठतम भक्ति है। स्वामी शंकराचार्य परा-भक्ति को इस तरह से परिभाषित करते हैं- 'स्व-स्वरूपानुसन्धानं भक्तिरित्यभिधीयते' अर्थात अपने स्वरूप का अनुसन्धान- स्मरण और स्थिति ही भक्ति है। अंतिम लक्ष्य तो अपने स्वरूप में स्थित होना है जो, अपने स्वरूप की भक्ति से ही मिलती है। साधना की प्रारंभिक स्थिति में बाह्य गुरु या इष्ट की आवश्यकता होती है। अंतिम गुरु तो हमारी अपनी आतंरिक आत्मा ही है। एक स्थिति के बाद वही हमारा मार्गदर्शन करती है।

भक्ति का एक अर्थ सत्य के प्रति अनुराग भी होता है। सत्य क्या है ? सरल उत्तर यही है कि जो अनादि, अनंत, शाश्वत, नित्य तथा अपरिणामी हो, वह सत्य है। जो निरंतर परिवर्तनशील है, वह तो माया है। कबीर कहते हैं कि संतो आवै जाये सो माया अर्थात जो निरंतर परिवर्तनशील है, वह माया है। माया ही तो दुःख का कारण है। मनुष्य इसी माया में तो उलझा है। बाह्य सांसारिक प्राणी-पदार्थ अनित्य तथा परिवर्तनशील हैं, इसलिए वे सत्य नहीं हैं। हमारी अपनी आत्मा जो कभी हमसे अलग नहीं होती, वही सत्य है, शेष सब माया है। इसलिए, अपने स्वरूप की भक्ति ही वास्तविक भक्ति है और वही हमें सत्य तक पहुंचाती है। मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघर, गुरूद्वारे, राम, कृष्ण, शिव, मुहम्मद, नानक, कबीर या किसी गुरु की भक्ति प्रारंभिक साधकों को थोड़ा शांति अवश्य देती है और साधना के एक स्तर पर पहुंचाती है। पूर्ण और असीम शांति के लिए तो अंततः अपने स्वरुप में ही स्थित होना पड़ता है।

भक्ति का एक अर्थ श्रद्धा भी है। यहाँ पर भी यही प्रश्न उठता है कि किसके प्रति श्रद्धा करने से हम मोक्ष प्राप्त करते हैं। श्रद्धा दो पदों का मेल है- श्रत+धा, श्रत का अर्थ सत्य और धा का अर्थ धारण करना है। इस प्रकार सत्य का धारण ही श्रद्धा है। स्वाभाविक है की किस पर श्रद्धा की जाये, इसे जानने के पहले सत्य को जानने की भूमिका होती है। पूर्ण सत्य हमारा अपना स्वरूप है, वही हमारा परम प्राप्तव्य है। इसलिए स्वरूप के प्रति श्रद्धावान होना ही सम्पूर्ण दुखों से निवृत्त होने का एकमात्र उपाय है। अपने से बाहर किसी भी चीज में श्रद्धा करने से केवल दुःख ही मिलता है।

भक्ति का एक अर्थ सत्य के प्रति अनुराग भी होता है। सत्य क्या है ? सरल उत्तर यही है कि जो अनादि, अनंत, शाश्वत, नित्य तथा अपरिणामी हो, वह सत्य है। जो निरंतर परिवर्तनशील है, वह तो माया है। कबीर कहते हैं कि संतो आवै जाये सो माया अर्थात जो निरंतर परिवर्तनशील है, वह माया है। माया ही तो दुःख का कारण है। मनुष्य इसी माया में तो उलझा है।

यही अंधश्रद्धा है। अंधश्रद्धा से अच्छी अश्रद्धा है। अश्रद्धा अपना ही अहित करती है किन्तु अंधश्रद्धा तो बहुतों का अहित करती है। संभवतः इस संसार में सबसे अधिक जो खून खराबा हुआ है, उसमें अंध श्रद्धा की सबसे अधिक भूमिका रही है। इस संसार में लोग धर्म- मजहब और संप्रदाय में बंट कर अपने अपने ही इष्ट को समस्त संसार का रचयिता, पालनहार और ब्रम्हांडनायक मानते हैं। जबकि यह धारणा ही घोर असत्य है। पूर्ण सत्य तो आत्मस्वरूप ही है। बाकी सब कुछ क्षणिक और परिवर्तनशील है। इस प्रकार, हम इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि भक्ति योग में भक्ति का आलम्बन हमारी अपनी आत्मा ही होनी चाहिए। यदि हम इसे सगुण और निर्गुण में बांटें तो कह सकते हैं कि ज्ञान, वैराग्य, क्षमा, शील से युक्त गुरु ही सगुण ईश्वर या भगवान हैं और उनके प्रति अनुराग, श्रद्धा, समर्पण सगुण भक्ति है। किन्तु यह प्रारंभिक भक्ति है। अंतिम भक्ति है तीनों गुणों से परे अपना शुद्ध चेतन स्वरुप-यही निर्गुण भगवान या ईश्वर है। इस प्रकार समस्त दृश्य विषयों से लौटकर स्वरूप में अवस्थित हो जाना ही निर्गुण भक्ति और भक्ति योग है।

लहलहाती फसल है बाढ़

असम या यूपी-बिहार में बाढ़ तकरीबन हर साल आती है। 1980 में राष्ट्रीय बाढ़ आयोग ने अनुमान लगाया था कि इक्कीसवीं सदी के शुरूआती दशक तक चार करोड़ हेक्टेयर भूमि बाढ़ का शिकार हो जाएगी। इसे रोकने के लिए बड़ी संख्या में बहुउद्देश्यीय बांध और पैतींस हजार किमी. तटबंध बनाए गए। परिणाम यह हुआ कि आयोग के अनुमान से हजार हेक्टेयर ज्यादा यानी पांच करोड़ हेक्टेयर भूमि आज बाढ़ प्रभावित है।

अभय मिश्र

दाग अच्छे हैं और बाढ़ भी अच्छी है जब आती है काफी कुछ धो जाती है। हर साल तस्वीर वही होती है बस आंकड़े बदल जाते हैं। आंकड़े मतलब मुआवजा कितना मिला या फसल कितनी खराब हो गई या फिर अर्थव्यवस्था को कितना नुकसान हुआ और मरे कितने। इस मरे कितने का मतलब कितने इंसान मरे से है कितनी गृहस्थी मर गईं इसकी गणना नहीं की जाती है। की भी नहीं जा सकती, अब मिट्टी के चूल्हे और हामिद के चिमटे को पीछे छोड़ समाज और देश दोनों ही आगे बढ़ चुके हैं। प्रधानमंत्री ने भी हामिद को याद कर जनता को संदेश दिया था कि देश अब उज्ज्वला के दौर में पहुंच चुका है।

ख़ैर जैसा कि अंदेशा था, देश के बड़े हिस्से में बाढ़ आ चुकी है। मुआवजा पिछले साल के मुकाबले तकरीबन दुगना मिल रहा है। बिहार में चुनाव है। असम और बिहार में बाढ़ नियंत्रण के लिए केंद्र के अलावा विदेशों से भी सहायता मिल रही है। अकेले असम को ही केंद्र सरकार ने पहली किश्त के रूप में 346 करोड़ रूपए जारी किए हैं। ऐसा नहीं कि इस मुआवजे के लिए ही बाबू लोग खुश हो रहे हैं। बानगी देखिए- बिहार में बारिश के ठीक पहले गंगा का कटाव रोकने के लिए बोल्डर डाले जाते हैं। तरीका यह है कि लोहे के जाल में बोल्डर(पत्थर) बांध कर तट पर लटकाते हैं या फिर गेबियन किया जाता है। गेबियन प्लास्टिकनुमा रस्सी को कहते हैं, जिसमें प्लास्टिक के बैग को बांधा जाता है, हर बैग में 126 किलो सफेद बालू होती है। सफेद बालू में चिकनी मिट्टी के साथ चिपकने की क्षमता होती है और यह गंगा तट पर नहीं मिलती। अब कटान रोकने के इस काम का टेंडर होते-होते बारिश शुरू हो जाती है और उसके बाद इस बात का ऑडिट कर पाना असंभव है कि कितने बोल्डर डाले गए या कितने बैग बालू डाली गई क्योंकि सब बाढ़ में बह जाता है। सुशासन की सरकार पता नहीं क्यों इस काम को जनवरी-फरवरी में पूरा नहीं कर पाती। ठीक इसी तरह जैसे बाढ़ के समय में कोई यह सवाल नहीं उठाता कि संकल्प पर्व में रोपे गए पौधों का क्या हो रहा है। करोड़ों की संख्या में रोपने का दावा था अब जब नदी पथ के पौधे ही बह गए तो गिनती कौन करे और कैसे करे ?

गाजीपुर से आगे बलिया, तालकेश्वर, लालगंज, मांझीरोड, गुदरी, छपरा, सोनपुर, हाजीपुर, पूर्णिया, कटिहार, मनिहारी और मानिक चौक के सैकड़ों गाँवों में लोगों की

कहानी और दिनचर्या कमोबेश एक ही है। हर कोई कटान में आ रहा। यही हाल दिल्ली में यमुना का और कमोबेश देश की हर नदी का होता जा रहा है। गाद भराव के चलते नदी समतल हो गई हैं और पहली बारिश होते ही पानी चौड़ाई में सड़कों और कॉलोनियों की तरफ फैलता है और जनता त्राहिमाम करने लगती है।

हैलीकॉप्टर में बैठकर वॉटर टुरिज्म करते माननीय जानते हैं कि बाढ़ अपने साथ क्या-क्या लाई है। नदी गाद से पट गई है, यानी वाटरवेज के लिए अब तक हुआ डिसिल्टिंग बेकार हो गया। कोई नहीं जानता कितना डिसिल्टिंग हुआ था। बाढ़ उतरने के बाद एक बार फिर डिसिल्टिंग का कार्य शुरू होगा। साफ माथे का समाज लिखने वाले पर्यावरणविद् अनुपम मिश्र ने गाद को वरदान कहा था लेकिन सरकारी बाबूओं ने बेतरतीब तटबंध बनाकर गाद को ही खेतों में जाने से रोक दिया और नदी की गहराई कम करती गाद को अपने लिए वरदान बना लिया। पानी को रोकने की इस भोलीभाली कोशिश में शहर तो और भी दो कदम आगे हैं। बारिश का पानी निकलने के रास्ते पर अवैध कॉलोनियां बन गई जिन्हें वोट की ताकत ने वैध बना दिया। पिछले साल पटना में आई बाढ़ ने शहर को डूबो दिया था, तब यह खबर आई कि पटना म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन के पास शहर के सीवेज का नक्शा ही नहीं है और सच्चाई यह है कि यह नक्शा आज भी उनके पास नहीं है क्योंकि पिछली बाढ़ उतरने के बाद से नक्शा बनाने या पानी निकासी व्यवस्था की कोई कोशिश ही नहीं की गई। कोई आश्चर्य नहीं कि पटना में फिर पिछली तस्वीरे तैरने लगे।

असम की ओर चलते हैं। काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान बाढ़ नियंत्रण फंड का स्विस बैंक हैं। आप कभी नहीं जान पाएंगे कि कितना पैसा कहां चला गया। अब तक दस गैंडों समेत एक सौ दस जानवरों की मौत की आधिकारिक घोषणा हुई है। बाढ़ का समय काजीरंगा में लापता जानवरों की गिनती दूरूस्त करने का समय भी होता है। असम के 26 जिलों के 35 लाख लोग बूरी तरह बाढ़ से प्रभावित हैं। यह आंकड़ा अतिरंजित नहीं है केंद्रीय जल आयोग की एक रिपोर्ट कहती है कि देश में हर साल औसतन छब्बीस लाख लोग बाढ़ का कहर झेलते हैं। यह कहना ठीक नहीं कि असम की यह नियती ही है। वास्तम में असम में हर साल और कई बार साल में दो बार आने वाली बाढ़ का सीधा संबंध नीयत से भी है। गुवाहाटी की टोपोग्राफी एक कटोरे की तरह है जिसका मतलब है शहर का बीचो बीच वाला इलाका जल भराव वाला है और यहां से थोड़ा गहरा स्थान लेते हुए पानी निकासी की व्यवस्था की जानी चाहिए लेकिन इसके उलट यहां अतिक्रमण है। वेटलैंड एरिया में बेतरतीब बने घर हर साल खुद की ऊपरी मंजिल को बचाने में जुटे रहते हैं।

असम या यूपी-बिहार में बाढ़ तकरीबन हर साल आती है। 1980 में राष्ट्रीय बाढ़ आयोग ने अनुमान लगाया था कि इक्कीसवीं सदी के शुरूआती दशक तक चार करोड़ हेक्टेयर भूमि बाढ़ का शिकार हो जाएगी। इसे रोकने के लिए बड़ी संख्या में बहुउद्देश्यीय बांध और पैतींस हजार किमी. तटबंध बनाए गए। परिणाम यह हुआ कि आयोग के अनुमान से हजार हेक्टेयर ज्यादा यानी पांच करोड़ हेक्टेयर भूमि आज बाढ़ प्रभावित है।

बाढ़ रूपी इस कैश क्राप को काटने के लिए बीज भी सरकारें ही लगाती है। इसे यूं समझिए- केंद्रीय जल आयोग ने जून के पहले हफ्ते में एक डाटा जारी कर बताया कि देश के 123 बांधों या जलग्रहण क्षेत्रों में पिछले दस सालों के औसत का 165 फीसद पानी संग्रहित है और पिछले साल की तुलना में यह 170 फीसद है। इसका मतलब है कि इन बांधों में पर्याप्त से भी ज्यादा पानी का भंडारण था। ये 123 बांध वे हैं जिनका प्रबंधन और संरक्षण केंद्रीय जल आयोग करता है और इन बांधों में देश की कुल भंडारण क्षमता का 66 फीसद पानी जमा होता है। उस समय जरूरत होने पर भी इन बांधों से पानी नहीं छोड़ा गया और बरसात होते ही जब बांध ओवरफ्लो होने लगे तो गेट खोल दिए गए। नतीजा यह हुआ कि पहले से उफनती नदी में बहाव बेहद तेज हो गया और पानी गांव और शहरों में घुस गया।

जब ओड़िसा के तट पर अम्फान और आलिया जैसे तुफान आने से पहले जान-माल की रक्षा की सफल कोशिशें की जा सकती है तो नदी तट पर रहने वालों की सुरक्षा के इंतजाम क्यों नहीं किए जाते, जबकि यह सर्वविदित है कि इन इलाकों में बाढ़ आती ही है।

साफ है कि बाढ़ नियंत्रण के सरकारी पसंदीदा दो उपाय-बांध और तटबंध फेल हो चुके हैं। अब प्राचीन भारत के उपाय तालाब और पोखर ही बाढ़ के कहर से बचा सकते हैं। बस समस्या यह है कि तालाब और पोखर बनाने में करोड़ो रूपए खर्च नहीं होते इसलिए यह उपाय बाबूओं को समझ नहीं आते।

जमीन का कंक्राटाईजेशन पानी को जमीन के भीतर नहीं जाने दे रहा, सड़कों पर बहना उसकी मजबूरी है। सरकारी कारिंदे अपनी फसल काटने में व्यस्त है, विस्थापन की नई तस्वीरें सोशल मीडिया पर जगह बना रही है आप उन्हें लाइक कीजिए और चाय-पकौड़ों के साथ मानसून का मजा लिजिए।

राजेश तिवारी

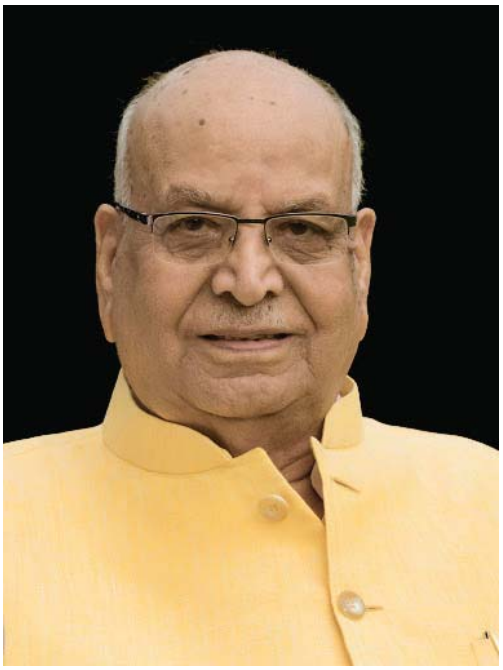

यूं याद किए जाएंगे 'बाबूजी'

राजनीति में लालजी टंडन होना आसान नहीं है। वे इसलिए याद नहीं किए जाएंगे कि मध्य प्रदेश और उसके पूर्व बिहार के राज्यपाल थे। इसलिए भी उनका स्मरण नहीं किया जायेगा कि उत्तर प्रदेश सरकार में वे दो बार वरिष्ठ मंत्री हुए, विधानसभा और विधानपरिषद का सदस्य तो वे अनगिनत बार रहे। प्रधानमंत्री रहे अटल बिहारी वाजपेयी के क्षेत्र से वे एक बार सांसद भी चुने गए। माना कि राजनीति में ये उपलब्धियां हासिल करना किसी राजनेता के व्यक्तित्व का हिस्सा हुआ करती हैं। लालजी टंडन को भी भविष्य में इतिहास के विद्यार्थी शायद इस रूप में देखें, पर किसी राजनीतिज्ञ का व्यक्तित्व सही मायनों में याद किया जाय तो टंडन जी आदर्श माने जा सकते हैं। इसे समझने के लिए लखनऊ के चौक निवासी लालजी टंडन को याद करना पड़ेगा। उन्होंने अपने राजनीतिक सफर की शुरूआत संघर्षपूण ढंग से शुरू की थी। मुहल्ला निवासियों के लिए बिजली-पानी-सड़क की लड़ाई लड़े, तो वह संघर्ष हिंदू-मुस्लिम सभी के लिए था। यह भाव ही लाल जी टंडन के व्यक्तित्व का मूल था।

भेदभाव रहित जन संघर्ष का चरित्र ही था कि जनसंघ के कार्यकर्ता लालजी टंडन को मिश्रित आबादी वाले चौक में 'बाबूजी' कहा गया। इस क्रम में पता नहीं कब, वे नवाबों के शहर लखनऊ के बाबूजी हो गये। यही कारण है कि 21 जुलाई को उत्तर प्रदेश सरकार के मंत्री और लालजी टंडन के पुत्र आशुतोष टंडन ने जब लिखा, 'बाबूजी नहीं रहे' तो लखनऊ ही नहीं, देशभर में उन्हें चाहने वाले गमगीन हो गये।

यह टंडन जी का व्यक्तित्व ही है कि दो पूर्व मुख्यमंत्रियों और कभी राजनीति में एक दूसरे के धुर विरोधी मुलायम सिंह यादव और मायावती ने एक ही तरह से बड़ी शिद्दत और करुणा भरे शब्दों में उन्हें याद किया। मुलायम सिंह के एक बार मुख्यमंत्री रहते लालजी टंडन विधानसभा में नेता विपक्ष थे। जनसमस्याओं पर नेता विपक्ष ने सरकार और मुख्यमंत्री पर तीखे हमले किए। सदन की कार्यवाही के विवरण इसके उदाहरण से भरे पड़े हैं। इसके बावजूद टंडन जी का मिलनसार व्यक्तित्व ही था कि मुलायम सिंह उनके मुरीद बने रहे। बसपा सुप्रीमो मायावती के नेतृत्व में भी भाजपा ने बाद में सरकार बनाई, यह तो बाद में लोगों को पता चला कि वह अपने भाई लालजी टंडन को कई वर्ष से राखी बांधती आ रही थीं। दोनों की पार्टियों के बीच चाहें जितनी तल्खी आए, भाई-बहन का रिश्ता बना रहा।

पार्टी के अंदर भी टंडन जी की स्वीकार्यता यूं ही नहीं बनी। साल 1962 में पहली बार पार्षद चुने गए टंडन को अटल जी की खाली की गई संसदीय सीट से चुनाव लड़ाने का फैसला यूं ही नहीं किया गया। भारतीय जनता पार्टी की एक ऐसे उम्मीदवार की तलाश लालजी टंडन में ही पूरी हुई, जो अटल जी की ही तरह लखनऊ में स्वीकार्य हो। यही कारण है कि अटल बिहारी वाजपेयी के संन्यास लेने के ठीक बाद भी पार्टी की यह सीट पहले से ही जीती हुई मान ली गई थी। तब भाजपा के लालजी टंडन के सामने कोई भी प्रतिद्वंद्वी उनके कद वाला नहीं था।

नगर निगम के पार्षद हों, विधानसभा अथवा विधान परिषद के सदस्य अथवा सांसद, टंडन जी ने कभी क्षेत्र की समस्या को वोट बैंक नहीं माना। समस्याओं के निराकरण के लिए संघर्ष करना हो तो सभी पार्टी के कार्यकताओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर उतरे। इसी तरह जनप्रतिनिधि, मंत्री और राज्यपाल के रूप में उनके दरवाजे सभी के लिए खुले रहे। लोकतंत्र के प्रबल हिमायती टंडन जी आपातकाल के दौरान 19 महीने तक जेल में भी रहे। फिर तो वह भाजपा में देश के प्रमुख नेताओं में शुमार हो गए। यही कारण है कि आज उनके नहीं रहने पर उन्हें पूर्व विधायक, सांसद, मंत्री अथवा राज्यपाल के रूप में नहीं, बल्कि एक जनप्रिय और लोगों के 'बाबूजी' के रूप में ही याद किया जा रहा है।

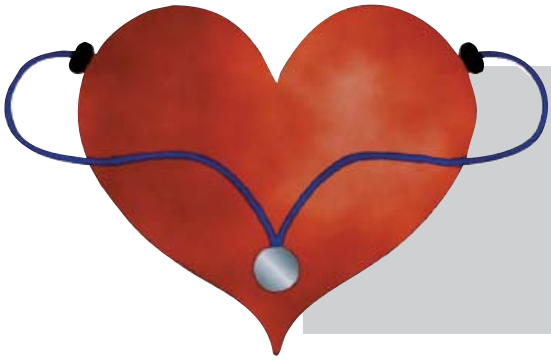

भोजन की तरह जल का भी हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। जल की महत्ता को समझने के लिए हर वर्ष 21 जुलाई को 'ओआरएस डे' भी मनाया जाता है, ताकि सभी लोग'जल ही जीवन है' इस कथन को भली प्रकार समझ सकें।

वर्षा ऋतु के रोग एवं उपाय

डॉ. रुचि शर्मा

मॉनसून के समय सेहत का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। इस समय गंदे पानी के कारण एवं मच्छरों के कारण होने वाली बीमारियां बढ़ जाती हैं। बरसाती मौसम में आद्रता रहती है। इसके कारण जीवाणु एवं कीटाणु आसानी से पनपते हैं एवं बीमारी का कारण बनते हैं। शरीर की पाचन शक्ति भी बरसात में कम हो जाती है। इसके कारण पेट संबंधी बीमारियां भी उत्पन्न हो जाती हैं। मौसम में जरा सा भी बदलाव अक्सर बीमार कर देता है। खासकर मॉनसून में सर्दी, जुखाम, बुखार होना आम बात है। टाइफाइड व मलेरिया होने का खतरा भी इस मौसम में बढ़ जाता है। कुछ घरेलू नुस्खों से बीमारियों से बचा जा सकता है।

सर्दी, जुखाम, खांसी-

शहद में अदरक का रस मिलाकर लेने से जुखाम ठीक होता है।
सेंधा नमक और तीन-चार काली मिर्च पीसकर पानी के साथ फांकने से भी जुखाम में लाभ होता है।
राई के तेल में दो-तीन लौंग पीसकर डालें, गरम कर छाती पर मलें। छाती में जमा बलगम आराम से निकल जाएगा।
काली मिर्च को पीसकर शहद में

मिलाकर लेने से सर्दी जुखाम में तुरंत आराम मिलता है।
सर्दी, खांसी और जुखाम में गाजर के रस में काला नमक मिलाकर पीने से भी लाभ होता है।

नजला

एक कप दूध में एक चौथाई चम्मच सोंठ का चूर्ण मिलाकर पीने से नजला ठीक होता है।तुलसी के बीज और सोंठ मिलाकर चूर्ण बनाएं। एक चम्मच दिन में लें। यह नजले में लाभकारी होता है।

बुखार

तुलसी का काढ़ा पिएँ।
शहद एवं अदरक का रस लें।
आधा चम्मच दालचीनी पाउडर, एक बड़ी इलायची एवं दो चुटकी सोंठ का चूर्ण मिलाकर लें।

अपच/बदहजमी

जीरा, अजवाइन और सोंठ विषैले पदार्थों को शरीर से बाहर निकालते हैं एवं पेट की तकलीफों को दूर करते हैं। जैसे गैस, बदहजमी पेट दर्द आदि।
अदरक के साथ नींबू का रस लेने से पाचन शक्ति बढ़ती है।
धनिया और सोंठ से पाचन तंत्र मजबूत होता है और गैस, एसिडिटी में आराम मिलता है।

मलेरिया

एक गिलास पानी में 2 बड़े चम्मच शक्कर डालकर अच्छे से मिलाएं, इसमें दो बूंद नींबू का रस मिलाकर लेने से मलेरिया ज्वर में लाभ होता है।
तुलसी के 6 पत्ते, एक काली मिर्च एवं एक पिपली को पीस लें। उसमें शक्कर मिलाकर पानी से लेने से बुखार कम होता है।

टाइफाइड

तुलसी का सेवन टाइफाइड में लाभकारी होता है।
हल्का खाना खाएं एवं मसालों का प्रयोग ना करें।

बारिश के मौसम में जरा भी लापरवाही बीमारी का कारण बन सकती है इसलिए इस समय कुछ बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है ताकि शरीर स्वस्थ रहें।

पानी-भरपूर पानी पिएं।

बारिश के कारण वातावरण में नमी बढ़ती है और पसीना जल्दी नहीं सूखता। इस वजह से शरीर की गर्मी नहीं निकल पाती है। पानी अवश्य पीएं। इस मौसम में पानी जनित बीमारियां होने की संभावना सबसे अधिक होती है। इसलिए स्वच्छता पर ध्यान देना आवश्यक है। स्वच्छ पानी पीएं एवं पानी को उबालकर पीएं।

भोजन - साफ और पूरी तरह से पका हुआ भोजन लें। इस समय पेट में संक्रमण, दस्त, हैजा, पीलिया आदि रोगों की आशंका ज्यादा रहती है। बासी भोजन न लें। बासी भोजन में जीवाणु एवं कीटाणु पनपने लगते हैं। सारे फल एवं सब्जियों को अच्छी तरह से धोने के बाद ही खाएं।हरी पत्तेदार सब्जियों को अच्छे से उबाले, सलाद के स्थान पर पका हुआ भोजन खाएं। बाहर का खाना बरसाती मौसम में बीमारियों का कारण बन सकता है। इस मौसम में मच्छर मक्खी व अन्य जंतुओं के पनपने का खतरा रहता है जो खाने को दूषित कर सकते हैं। अतः घर का अच्छे से पका हुआ खाना ही खाएं।

वर्षा ऋतु में होने वाले रोग टायफाइड, मलेरिया, चिकनगुनिया, डेंगू आदि हैं। वर्तमान परिस्थिति में कोरोना भी सक्रिय रोग है। इस समय इन सभी रोगों का संक्रमण बढ़ने का खतरा है। इसलिए स्वछता, सामाजिक दूरी रखें। पूरी बाजू की कपड़े पहनें, गंदा पानी जमा ना होने दे ताकि मच्छरों की समस्या तथा उनसे होने वाले रोगों से भी बचा जा सके।

कोरोना कालीन कवि

'ये तो बहुत बुरा हुआ। मुझे मालूम होता तो मैं आपकी कविताएं जरूर सुनता।' कोई बात नहीं। आज शाम को फिर मेरा फेसबुक लाइव है। आप सुनियेगा और साथ-साथ कमेंट भी जरूर कीजियेगा।'

राकेश कायस्थ

भाई साहब मैंने आपको फेसबुक मैसेंजर पर टेक्स्ट किया था, आपने कोई जवाब नहीं दिया'– सुबह-सुबह शिकायती लहजे वाला फोन आया।

माफ कीजियेगा मैं मैसेंजर इस्तेमाल नहीं करता।'

मुझे अंदेशा था, इसलिए मैंने आपको व्हाट्स एप भी कर दिया था लेकिन लगता है, आपने वो भी नहीं देखा'– उन्होंने हंसते हुए कहा। हंसी में व्यंग्य के साथ थोड़ा रंज भी है, यह मैंने उनके लहजे से महसूस कर लिया।

बात ये है कि आजकल ऑफिस का सारा काम ऑन लाइन है। दिन भर बहुत से मेल आते हैं। इसके अलावा रोजमर्रा के बाकी कामों के लिए भी दिन भर स्क्रीन पर आँखें गड़ाये रहना पड़ता है। इसलिए मैंने कुछ समय के लिए सोशल मीडिया छोड़ दिया है'–मैंने उन्हें सफाई दी।

हां मैं समझ सकता हूं। लेकिन सोशल मीडिया से दूर होने का नुकसान ये है कि कई बार काम की चीजें भी छूट जाती हैं। मैंने आपको मैसेज इसलिए किया था कि ताकि कल शाम को फेसबुक लाइव पर आप मेरा काव्य पाठ देख सके।'

मैंने राहत की सांस लेते हुए कहा–"ये तो बहुत बुरा हुआ। मुझे मालूम होता तो मैं आपकी कविताएं जरूर सुनता।' कोई बात नहीं। आज शाम को फिर मेरा फेसबुक लाइव है। आप सुनियेगा और साथ-साथ कमेंट भी जरूर कीजियेगा।'....और इस कविवर ने मुझे निहत्था ऐसी जगह घेर लिया, जहां से भागने का कोई रास्ता नहीं था। पिछले एक महीने में फेसबुक लाइव का न्योता देनेवाले वे आठवें कवि हैं। मुसीबत ये है कि इनमें से ज्यादातर रिश्तेदार, मित्र या पड़ोसी हैं। आदमी आखिर किस-किस को नाराज करे! इंटरनेट सिग्नल खराब बहाना एक रास्ता हो सकता था, आत्मरक्षा के लिए बोले गये झूठ को कानूनी या नैतिक रूप से गलत नहीं माना जाता है। अगर फेसबुक कवि सम्मेलन में बतौर दर्शक शामिल होने का न्योता कविवर की तरफ से पहली बार आया होता तो यकीनन ये दांव मैं आजमा लेता। मगर तीसरे तगादे के बाद मुकर जाने की ढिठाई मैं नहीं दिखा पाया।

फेसबुक लाइव शुरू होने के दस मिनट पहले उनका मैसेज आया–"भाई साहब भूलियेगा मत।" मैंने जवाब दिया–इतना महत्वपूर्ण आयोजन कैसे भूल सकता हूं। सारे काम छोड़कर फेसबुक पर बैठा हूं। आप कार्यक्रम शुरू तो कीजिये।उन्होंने मैसेज किया– वैसे तो मैंने आपको टैग कर दिया था लेकिन टैग किये पोस्ट पर लोग ध्यान नहीं देते। आप बस दो लाइन में अपने वॉल पर मेरा परिचय देते हुए लोगों को फेसबुक लाइव से जुड़ने का आमंत्रण भेज दीजिये।

काटो तो खून नहीं! कविवर मुझे अपने गुनाह-ए-अजीम में बराबरी का भागीदार बनाने का फैसला कर चुके थे। मैंने उनसे पूछा कि "परिचय क्या लिखूं। ये सुनकर उन्होंने सीधा फोन घुमा दिया।" लिख दीजिये समकालीन हिंदी के वरिष्ठ युवा रचनाकार... मेरा नाम तो आप जानते ही हैं, फेसबुक पर पांच बजे से लाइव होंगे।' मैंने पूछा आप वरिष्ठ और युवा दोनों एक साथ कैसे हो सकते हैं।' उन्होने कहा–"मैं सोलह साल की उम्र से कविताएं लिखता आ रहा हूं। लगभग तीन दशक हो गये हैं, इस नाते वरिष्ठ हूं। हिंदी का कवि पचास साल भी युवा कहलाता है। मैं तो अभी सिर्फ 46 का हूं।' मैंने कहा "आपके तर्क अकाट्य हैं। मेरा विचार है, आलोचना के क्षेत्र में भी आप पर्याप्त रूप से सफल होंगे।" उन्होंने कहा–"पिछले महीने दो फेसबुक लाइव में आलोचक के तौर पर शिरकत कर चुका हूं। क्रांतिकारी कवि परशुराम जी के काव्य पाठ पर मैंने आलोचनात्मक टिप्पणी की थी। आज परशुराम जी काव्य पाठ के पश्चात मेरी कविताओं पर चर्चा करेंगे।'

मेरे मुंह से निकला– "ये कोरोना कालीन काव्य जगत तो अद्भुत है। एकदम आत्मनिर्भर!' वे चहके–"कोरोना कालीन कविता! सुनने में बहुत सुंदर प्रतीत हो रहा है। जैसे रीति कालीन, जैसे भक्ति कालीन वैसे ही कोरोना कालीन!' मैंने कहा– "जी मेरा भी यही ख्याल है। इसलिए मैं सुझाव दूंगा कि आप कविताएं लिखना छोड़कर कोरोना कालीन हिंदी कविता की आलोचना पर काम कीजिये। मुझे पूरा विश्वास है कि आनेवाली पीढ़ियां आपका नाम उसी तरह लेंगी जिस तरह रामचंद्र शुक्ल और हजारी प्रसाद द्विवेदी का लेती हैं।' उनके एक्सप्रेशन से ऐसा लगा कि अगर मैं सामने होता तो मुझे गले लगा लेते। संयोग कुछ ऐसा हुआ कि उनका फेसबुक लाइव शुरू होने से पहले ही मेरा इंटरनेट कनेक्शन सचमुच चला गया और मुझ हतभाग्य को उनकी रचनाएं सुनने के सम्मान से एक बार फिर वंचित रहना पड़ा।

हिमाचल सतर्क है

बदलकर अपना व्यवहार
करें कोरोना पर वार

याद रखें

दो गज दूरी
बेहद है ज़रूरी

क्या करें ✔

- ✔ अपने हाथों को अल्कोहल आधारित हैंड वॉश या साबुन और पानी से 20 सैंकेंड तक बार–बार धोएं।
- ✔ अगर आपको बुखार, खांसी और सांस लेने में कठिनाई है तो डॉक्टर से सम्पर्क करें।
- ✔ छींकते और खांसते समय, अपना मुंह व नाक टिशू पेपर / रूमाल या कपड़े से ढके।
- ✔ प्रयोग के तुरन्त बाद टिशू पेपर को किसी बंद डिब्बे में फेंक दें।
- ✔ भीड–भाड़ वाली जगहों पर जाने से बचें।
- ✔ अगर आप में कोरोना वायरस के लक्षण हैं तो कृपया हेल्पलाइन नम्बर 104 पर कॉल करें।
- ✔ **Social Distancing** बनाएं रखें।
- ✔ हॉम डिलीवरी सेवा का लाभ उठाएं।
- ✔ रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए आयुष मंत्रालय के दिशा–निर्देशों का पालन करें।
- ✔ **आरोग्य सेतु ऐप डाउनलोड कर प्रयोग करें।**
- ✔ सरकार के दिशा–निर्देशों का अनुपालन करें।

क्या न करें ✘

- × यदि आपको खांसी और बुखार अनुभव हो रहा हो तो किसी के सम्पर्क में न आएं।
- × अपनी आंख, नाक या मुंह को न छुएं।
- × मास्क पहने बिना घर से न निकलें।
- × सार्वजनिक स्थानों पर न थूकें।
- × अनावश्यक जमाखोरी न करें।
- × अफवाहें न फैलाएं।

आवश्यकता पड़ने पर नियंत्रण कक्ष व हेल्पलाइन में सम्पर्क करें –

प्रदेश हेल्पलाइन टोल फ्री नंबर 1070

सभी ज़िलों के लिए हेल्पलाइन टोल फ्री नंबर 1077

दिल्ली और चंडीगढ़ में भी सहायता कक्ष स्थापित:

दिल्ली के लिए 9868539423, 8802803672, 011–23711964

चंडीगढ़ के लिए 8146313167, 9988898009, 0172–5000104, 0172–2638278

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार

www.himachalpr.gov.in HimachalPradeshGovtIPRDept DPR Himachal dprhp

Posted at Lodi Road HO, New Delhi on 02-03 Aug 2020, Published on: 1 & 16 Every Month. Total Pages: 96 (with cover) Year-7, Issue-24, 1-15 Aug, 2020
RNI NO- DELHIN/2013/52461.
REG. NO- DL(S)-17/3446/2019-21

कोरोना से बचना है आसान इन सब बातों का रखें ध्यान

सोशल डिस्टेंसिंग का पालन करें

फेस कवर/ मास्क लगाएं

सैनेटाइजर/साबुन से हाथ धोएं

आरोग्य सेतु एवं आयुष सुरक्षा कवच एप का प्रयोग करें

दो गज़ की दूरी, मास्क है जरूरी

खांसी, सांस लेने में दिक्कत या बुखार होने पर हेल्पलाइन **1800-180-5145** पर कॉल कर चिकित्सकीय सहायता प्राप्त करें

सभी प्राथमिक/सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर कोरोना हेल्प डेस्क स्थापित
राजकीय चिकित्सालयों में कोरोना की निःशुल्क जांच एवं इलाज

1.51 लाख से अधिक कोविड बेड उपलब्ध • 36 कोविड टेस्टिंग लैब क्रियाशील
• प्रतिदिन 54 हजार से अधिक टेस्टिंग
• सभी जनपदों में वेंटीलेटर एवं ट्रूनेट मशीनें उपलब्ध

धार्मिक स्थल, रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड, एयरपोर्ट, कार्यालय, शॉपिंग मॉल के प्रवेश द्वार पर थर्मल स्कैनिंग करायें

होटल, रेस्टोरेंट, फूडकोर्ट व किचन को नियमित रूप से सैनेटाइज करें एवं होम डिलीवरी को प्राथमिकता दें

दरवाजे के हैंडिल, रेलिंग, लिफ्ट के बटन, बेंच एवं फर्नीचर आदि को नियमित अंतराल पर साफ करते रहें

पेयजल/वॉश बेसिन एरिया और शौचालयों में साफ-सफाई रखें

प्रतिष्ठानों, राशन की दुकानों एवं अन्य दुकानों के सामने वृत्ताकार चिन्ह बनाकर सोशल डिस्टेंसिंग का पालन करें

डिजिटल भुगतान प्रणाली का यथासंभव प्रयोग करें

बुजुर्ग, एक से अधिक बीमारियों से ग्रसित या शारीरिक रूप से कमजोर व्यक्ति, गर्भवती महिलाएं एवं 10 वर्ष से कम उम्र के बच्चे आवश्यक न हो, तो घर से बाहर न निकलें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश